श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया और श्रीचैतन्य पुस्तकालय, पटना सिटी में संगृहीत

प्राचीन हस्तलिखित पोथियों का विवरण

[दूसरा खण्ड]

(संशोधित-परिवर्द्धित संस्करण)

20/=

सम्पादक (प्रथम संस्करण)

डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री

सम्पादक

पं० हंसकुमार तिवारी

श्रीरामनारायण शास्त्री, विद्यारत्न

बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्

पटना

श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया और श्रीचैतन्य पुस्तकालय, पटना सिटी में संगृहीत

प्राचीन हस्तलिखित पोथियों का विवरण

[दूसरा खण्ड]

(संशोधित-परिवर्द्धित संस्करण)

सम्पादक (प्रथम संस्करण)

डॉ॰ धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री

सम्पादक

पं॰ हंसकुमार तिवारी

श्रीरामनारायण शास्त्री, विद्यारत्न

बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्

पटना

वक्तव्य

परिषद् के प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थ-शोध-विभाग द्वारा सम्पादित 'प्राचीन हस्तलिखित पोथियों का विवरण' (द्वितीय खण्ड) का यह द्वितीय संस्करण प्रकाशित किया जा रहा है। यह एक विभागीय कार्य का सम्पादन है। सम्बद्ध विभाग द्वारा सम्पादित इस प्रकार के प्राचीन पोथियों के विवरण छह खण्डों में अबतक प्रकाशित हुए हैं।

यह अनुसन्धित्सुजनों के अनुग्रह का फल है कि विवरण के द्वितीय खण्ड की सभी प्रतियाँ बिक गईं थीं। इस कृपा के लिए परिषद् ग्राहकों एवं पाठकों को साधुवाद देती है। परिषद् को भविष्य में उनसे ऐसे सहयोग की और अधिक आकांक्षा बनी हुई है।

इस द्वितीय संस्करण में पूर्व विवरणों के अतिरिक्त नई उपलब्ध सामग्री को यथास्थान जोड़ दिया गया है, और यह संस्करण संशोधित-परिवर्द्धित होकर अद्यतन बन गया है। इससे अनुसन्धान-प्रिय जनों को अपने शोध-कार्य में अधिक जानकारी की सामग्री प्राप्त हो सकेगी, ऐसा हमारा विश्वास है। परिषद् महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों को प्रकाशित कर जैसे साहित्य का भाण्डार समृद्ध कर रही है, वैसे ही अनुसन्धान की स्फुट एवं विवरणात्मक सामग्री प्रस्तुत कर शोध-कक्ष को भी सजा-सँवार रही है।

हम अपने सभी अनुग्राहक विद्वज्जनों से आशावान् हैं कि वे पुनः पूर्व की भाँति परिषद् के इस प्रकाशन को अपनाकर हमें अनुगृहीत करेंगे।

नागपंचमी, सं० २०३४ वि०
१९ अगस्त, १९७७ ई०

हंसकुमार तिवारी
निदेशक

पुरोवाक्

साहित्यानुसन्धान तथा प्राचीन ग्रन्थों के अनुशीलन में प्राचीन हस्तलिखित पोथियों का महत्त्व एवं उनकी उपादेयता असन्दिग्ध है। मुद्रणकला के आविष्कार, प्रचलन तथा ग्रन्थ-मुद्रण-परम्परा के पूर्व हस्तलेखों द्वारा बृहत्तर ग्रन्थों की लिपि प्रस्तुत करना एक पुण्यकर्म माना जाता था। भारतीय जीवन-प्रणाली में महत्त्वपूर्ण, धार्मिक तथा आचार से सम्बन्धित हस्तलेखों को पुण्यसलिला नदियों में काष्ठ-मंजूषा में रखकर प्रवाहित करना व्रत और धार्मिक अनुष्ठान का अंग माना जाता रहा है। पटना की गंगा में प्रवाहित सूरसागर का एक प्राचीन हस्तलेख काष्ठ-मंजूषा में मिला था, जो परिषद् के हस्तलिखित ग्रन्थ-शोध-विभाग में सुरक्षित है। मुद्रण-यन्त्रों के प्रचलन के बाद अब शनैः-शनैः इस व्रतानुष्ठान में कमी आई है।

प्राचीन कवियों और ग्रन्थकारों द्वारा रचित ग्रन्थों के शुद्ध पाठ के निर्धारण में भी प्राचीन हस्तलेखों को अतिशय प्रमाणभूत माना जाता रहा है। पाठ-निर्द्धारण, पाठ-सम्पादन तथा पाठालोचन की उपादेयता केवल विश्वविद्यालयीय अध्ययन के लिए ही उपयोगी नहीं है, अपितु ग्रन्थ-समीक्षा के लिए भी इसकी अपरिहार्य आवश्यकता है।

प्राचीन हस्तलिखित पोथियों के संग्रह अथवा उनकी अध्ययनपूर्ण समीक्षात्मक सूचियों के निर्माण का श्रेय अँगरेजों, फ्रेंच-साहित्यकारों अथवा विभिन्न यूरोपीय और अमेरिकी विद्वानों को देना उपयुक्त नहीं है। राजस्थान, गुजरात, कर्णाटक, आन्ध्र और वगदेश के अनेकानेक राजघरानों तथा पण्डित-परिवारों में प्राचीन पोथियों के संग्रह, सुरक्षा और अध्ययन की परम्परा रही है। आज भी उन-उन प्रदेशों के ग्रन्थ-भाण्डारों में हजारों ग्रन्थों की लाखों हस्तलिपियाँ सुरक्षित हैं। राजस्थान की जैन-साध्वियाँ और जैन-श्रमण अभी भी कलात्मक रेखाओं से चित्रित हस्तलिखित पोथियों के लेखन में संलग्न देखे जाते हैं।

हिन्दी के प्राचीन ग्रन्थों की सुरक्षा, अन्वेषण और अनुसन्धान का प्रथम-प्रथम श्रेय अवश्य काशी-नागरी-प्रचारणी सभा को है। किन्तु, राजस्थान के अनेकानेक संस्थानों ने तथा प्रयागस्थ हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन ने भी इस दिशा में श्लाघनीय कार्य करके क्रोश-शिला स्थापित की है।

बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना के आद्य संचालक आचार्य शिवपूजन सहाय के साथ-साथ तत्कालीन संचालक-मण्डल के मनीषी, विद्वान् साहित्यसेवियों ने भी परिषद् के अनुसन्धान-विभाग में 'प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थ-शोध-विभाग' का एक कक्ष विस्तृत योजना के साथ स्थापित किया था और स्वर्गीय डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री की अध्यक्षता में कार्य प्रारम्भ किया था। परिषद् की स्थापना के प्रारम्भिक वर्षों में ही लगभग तीन हजार से अधिक प्राचीन हस्तलिखित पोथियाँ संगृहीत हुई और दो हजार से अधिक अलभ्य मुद्रित पुस्तकें तथा अप्राप्य पत्र-पत्रिकाएँ शोध-संग्रहालय में संकलित हो गईं। बाद में इस विभाग को

पुण्य श्लोक आचार्य नलिनविलोचन शर्मा की अध्यक्षता मिली। प्राचीन पोथियों का संग्रह, पंजीकरण तथा उनका संक्षिप्त विवरण तो इस विभाग का प्रमुख कार्य है ही, पाठालोचन और पाठ-सम्पादन के भी अतिविशिष्ट आयाम इस विभाग के हैं। पिछले दशकों में प्रदेश में अवस्थित संग्रहालयों की पोथियों के विवरण भी प्रकाशित करने की योजना को कार्यरूप दिया गया, जिसके फलस्वरूप गया के श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय और पटना सिटी के श्रीचैतन्य पुस्तकालय में संगृहीत-सुरक्षित पोथियों का विवरण (दूसरा खण्ड के रूप में) अट्ठारह वर्ष पूर्व प्रकाशित हुआ था। गत लगभग दस वर्षों से प्रथम संस्करण की प्रतियाँ समाप्त हो चुकी थीं और सुधी साहित्यानुसन्धानशील विज्ञजनों के द्वारा इसकी माँग बढ़ती जा रही थी। पहले संस्करण की कतिपय भूलों और प्रमादों तथा तथ्यों की ओर श्रीवेदप्रकाश गर्ग, श्रीकिशोरीलाल गुप्त तथा श्रीमुनिकान्तिसागर ने तत्कालीन विभागाध्यक्ष आचार्य नलिनविलोचन शर्मा का ध्यान आकृष्ट किया था। प्रस्तुत संस्करण में पर्याप्त परिमार्जन के साथ उनके विचारों तथा टिप्पणियों का उल्लेख कर दिया गया है और प्राचीन पोथियों के विवरण के साथ अन्य खोज-विवरणों में संकलित महत्त्वपूर्ण हस्तलेखों का भी विवरण परिशिष्ट भाग में बढ़ा दिया गया है।

विवरण के प्रारम्भ में 'ग्रन्थकारों के संक्षिप्त परिचय' शीर्षक प्रकरण में विवरणान्तर्गत प्रमुख ग्रन्थकारों से सम्बद्ध अद्यतन प्राप्त सूचनाओं का यथासम्भव समावेश किया गया है। सम्पादकीय प्रयास यह रहा है कि शोधप्रज्ञ छात्र, ग्रन्थकारों के सम्बन्ध में अपेक्षित सूचनाएँ एकत्र प्राप्त कर सन्दर्भ-ग्रन्थ के रूप में इस संस्करण को मान्यता प्रदान करें।

अन्त में यह आवश्यक है कि श्रीमुनिकान्तिसागर, श्रीकिशोरीलाल गुप्त, श्रीवेद-प्रकाश गर्ग और श्रीअगरचन्द नाहटा जी के प्रति उनके सुझावों तथा टिप्पणियों के साथ तथ्यगत निर्देशों के लिए हम कृतज्ञता प्रकट करें। आशा है, भविष्य में भी हमें उनके मूल्यवान् परामर्श तथा अनुसन्धान-प्रसाद मिलते रहेंगे। बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के वर्त्तमान निदेशक पं० श्रीहंसकुमार तिवारी जी की ही कार्य-तत्परता और अभिभावकीय प्रेरणा का परिणाम है कि यह संस्करण इतना शीघ्र प्रकाशित हो पाया है। परिषद् के प्रकाशन-पदाधिकारी पं० श्रीश्रुतिदेव शास्त्री के उदार अध्यवसाय तथा वरीय प्रामुद्र-संशोधक भाई श्रीरामकिशोर ठाकुर के अथक प्रयास और इस संस्करण को आकर्षक बनाने की उनकी तड़प से भी मैं प्रभावित हुआ। हमारी कार्य-मन्दता को श्रीरामकिशोर ठाकुर ने सदा प्रेमपूर्ण झिड़कियों से गति प्रदान की। हम उनके भी अनुगृहीत हैं।

गुरुपूर्णिमा
सं० २०३४ वि०

रामनारायण शास्त्री

वक्तव्य

(प्रथम संस्करण)

बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् की ओर से समस्त बिहार-राज्य में हस्तलिखित प्राचीन पोथियों और दुर्लभ मुद्रित पुस्तकों तथा अलभ्य पत्र-पत्रिकाओं की खोज कराई जाती है। परिषद् के ग्रन्थशोधक श्रीरामनारायण शास्त्री सर्वत्र भ्रमण करके खोज और संग्रह का काम करते हैं। इसके अतिरिक्त वे बिहार-राज्य के प्रमुख पुस्तकालयों में संचित पुरानी पोथियों का विवरणात्मक परिचय भी लिखते जाते हैं। यह काम परिषद् के मान्य सदस्य डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री के तत्त्वावधान में होता है। श्रीब्रह्मचारी जी की देख-रेख में श्रीरामनारायण शास्त्री जी परिषद् के संग्रहालय में सुरक्षित सभी पोथियों का परिचयात्मक विवरण तैयार करते हैं। उनके तैयार किये हुए विवरण डॉ० ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा सम्पादित होकर प्रकाशित होते हैं। परिषद् के संग्रहालय में जो पुरानी पोथियाँ सुरक्षित हैं, उनके विवरणों का पहला खण्ड पहले प्रकाशित हुआ था और यह दूसरा खण्ड अब प्रकाशित हो रहा है।

इस पुस्तक में गया के श्रीमन्नूलाल-पुस्तकालय की एक सौ छह और पटना सिटी (गायघाट) के श्रीचैतन्य पुस्तकालय की इक्कीस पोथियों का विवरण प्रकाशित है। उक्त दोनों पुस्तकालयों में संचित शेष पोथियों के विवरण तैयार करके क्रमशः प्रकाशित किये जायेंगे। इनके अतिरिक्त बिहार-राज्य के अन्य प्रमुख पुस्तकालयों में जो पुरानी पोथियाँ हैं, उनके विवरण भी तैयार करके प्रकाशित करने का विचार है। यह काम समय-साध्य और श्रम-साध्य है, इसलिए समस्त बिहार-राज्य के विभिन्न पुस्तकालयों में संगृहीत पोथियों के विवरण प्रकाशित करने का क्रम बहुत दिनों तक चलता रहेगा।

गया के श्रीमन्नूलाल-पुस्तकालय के संस्थापक और संचालक श्रीसूर्यप्रसाद महाजन तथा श्रीचैतन्य पुस्तकालय (गायघाट), पटना सिटी के अध्यक्ष श्रीकृष्णचैतन्य गोस्वामी के प्रति यह परिषद् कृतज्ञता प्रदर्शित करती है, जिनकी उदारता से उनके पुस्तकालय में संगृहीत पोथियों के विवरण तैयार करने में परिषद् के ग्रन्थशोधक श्रीरामनारायण शास्त्री को आवश्यक सुविधा प्राप्त हुई है।

हिन्दी में अब साहित्यिक शोध-कार्य बड़ी लगन से होने लगा है। साहित्यिक विषयों के सम्बन्ध में अनुसन्धान करनेवाले विद्वानों को प्रामाणिक शोध-समाग्री कहीं एकत्र नहीं मिलती; क्योंकि अधिकांश शोध-सामग्री विभिन्न स्थानों में बिखरी पड़ी है। यदि समग्र उपलब्ध सामग्री का पूरा विवरण प्रकाशित कर दिया जाय तो शोध-सम्बन्धी कठिनाइयाँ बहुलांश में दूर हो सकती हैं। इसी विचार से यह पुस्तक प्रकाशित की जा रही है और आगे भी इस तरह के प्रकाशन का क्रम जारी रहेगा।

श्रावणी पूर्णिमा
सं० २०१२ वि०

शिवपूजन सहाय
परिषद्-मंत्री

दो शब्द
(प्रथम संस्करण)

भारत के प्राचीनतम साहित्य को मुख्यतः दो व्यापक संज्ञाएँ दी गई हैं—श्रुति और स्मृति। 'श्रुति' का आशय उस मूल साहित्य से है, जिसे मानव-जाति ने प्रथम-प्रथम पाया। इस साहित्य का मुख्य स्रोत 'श्रुति' अथवा 'श्रवण' था और प्राचीन गुरु-परम्परा के अभाव में इसे ईश्वरीय वाणी मानकर परम सम्भावना का पात्र बनाया गया। किन्तु, वह साहित्य, जो इस मूलश्रुति-साहित्य के आधार पर निर्मित हुआ, और जिसे गुरु-परम्परा से लोग 'स्मृति' अथवा 'स्मरण' द्वारा रक्षित करते रहे, वह 'स्मृति' के नाम से प्रचलित हुआ। इस प्रसंग में यह कहना कठिन है कि श्रुति और स्मृति दोनों प्रकार का मौखिक साहित्य प्रथम-प्रथम लिपिबद्ध कब हुआ ? किन्तु, इतना तो असन्दिग्ध रूप से माना जायगा कि पाणिनि के व्याकरण की रचना के समय तक लिपि-कला का आविष्कार हो चुका था।

प्रथम-प्रथम जो लिपिबद्ध साहित्य हमें प्राप्त है, वह मुख्यतः शिलालेखों, मुद्राओं अथवा ऐतिहासिक महत्त्व रखनेवाली इस प्रकार की अन्यान्य वस्तुओं पर अंकित मिलता है। जब बौद्धों और जैनों ने अपने विपुल अपभ्रंश, पालि तथा प्राकृत-साहित्य का निर्माण किया और उसका अधिकाधिक प्रचार करना चाहा, तब ग्रन्थों को भूर्जपत्र अथवा तालपत्र पर लिख-कर सुरक्षित करने की प्रथा चलाई। प्राचीन काल में जितने बौद्धों के विहार और जैनियों के मन्दिर थे, उनसे सम्बद्ध हस्तलिखित ग्रन्थों का संग्रहालय रहा करता था। जैनधर्मा-वलम्बी इन संग्रहालयों को 'शास्त्र-भाण्डार', 'सरस्वती-भाण्डार', 'भारती-भाण्डागार' अथवा संक्षेप में 'भाण्डार' कहा करते थे। आज भी राजस्थान तथा अन्यत्र स्थित अनेकानेक मन्दिरों में जैन-ग्रन्थों की विपुल निधि सुरक्षित है। कश्मीर, काशी, मिथिला, नदिया (बंगाल) आदि कतिपय प्रदेशों अथवा स्थानों में वैदिक अथवा हिन्दू-धर्म से संबद्ध संस्कृत-भाषा का प्रचुर साहित्य हस्तलिखित रूप में संचित है। बौद्धों के भी तक्षशिला, विक्रमशिला और नालन्दा के विहारों तथा विश्वविद्यालयों में बहुसंख्यक ग्रन्थ सुरक्षित थे, जिनमें से अनेक ग्रन्थ विधर्मियों द्वारा भस्मसात् भी कर दिये गये।

वर्त्तमान युग में जब मुद्रण के आविष्कार ने ज्ञान की सामग्री को सर्वसुलभ बनाया, तब विद्वानों का ध्यान इस ओर गया कि हस्तलिखित ग्रन्थों की अमूल्य निधि को प्रकाश में लाया जाय। फलतः इस प्रकार के ग्रन्थों की खोज और उनके सम्बन्ध में संक्षिप्त सूचनाओं के प्रकाशन का कार्य सन् १८६८ ई० से आरम्भ हुआ। पहले-पहल यह कार्य मुख्यतः संस्कृत-ग्रन्थों की खोज तक ही सीमित था। डॉ० कीलहार्न, बूलर, पीटर्सन, बरनेल तथा भण्डारकर आदि विद्वानों ने, एशियाटिक सोसाइटी एवं प्रादेशिक सरकारों के साहाय्य से संस्कृत-ग्रन्थों की खोज के आधार पर, संग्रह प्रकाशित किये और उन सबको मिलाकर ऑफरेक्ट साहब ने एक वृहत् परिचयात्मक संकलन 'कैटेलोगस कैटेलोगेरम' के नाम से अनुसन्धित्सु जगत् के

सम्मुख प्रस्तुत किया। संस्कृत-ग्रंथों तथा जैनधर्म-सम्बन्धी साहित्य के ऐसे कई बहुमूल्य परिचयात्मक संकलन विद्यमान हैं।

हिन्दी में हस्तलिखित ग्रन्थों के संग्रह तथा उनके सम्बन्ध में सूचनाओं के प्रकाशन का व्यवस्थित रूप से कार्य करने का प्रयत्न सर्वप्रथम 'काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा' ने किया और सन् १९०० ई० में बाबू श्यामसुन्दर दास के तत्त्वावधान में खोज-विभाग की स्थापना हुई। सभा ने अबतक उन्नीस रिपोर्टें तैयार की हैं, जिनमें केवल बारह छप सकी हैं और शेष अभी लाल फीते के जटाजूट में विलीन हैं। इन रिपोर्टों का प्रकाशन सरकार के आर्थिक अनुदान पर ही अवलम्बित रहा है। अतः अप्रकाशित रिपोर्टों के उद्धार के लिए कब गंगावतरण होगा, यह अनिश्चित है। हिन्दी-साहित्य का प्रत्येक विद्यार्थी यह स्वीकार करेगा कि हमारे साहित्य और संस्कृति के नवीन इतिहास तथा नवीन चेतना के निर्माण में हस्तलिखित ग्रन्थों की खोज ने बहुत बड़ी देन दी है।

बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के तत्त्वावधान में हस्तलिखित पोथियों के संग्रह और अनुसन्धान का कार्य सन् १९५१ ई० के फरवरी मास से प्रारम्भ हुआ है। तीन वर्ष के अल्पकालिक अन्वेषण के फलस्वरूप अबतक १०७३ हस्तलिखित ग्रन्थ संग्रहालय में संकलित हो चुके हैं। परिषद्-संग्रहालय में संकलित ग्रन्थों के त्रैवार्षिक (१९५१–५३ ई०) विवरण का प्रथम खण्ड प्रकाशित हो चुका है। उक्त विवरण में हिन्दी, संस्कृत, गुरुमुखी और बँगला की २०० हस्तलिखित पोथियों के विवरण दिये गये हैं। उस विवरण में हमने इस दूसरे खण्ड के शीघ्र प्रकाशित होने की चर्चा भी की थी।

यह संग्रह गया के 'श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय' और गायघाट (पटना सिटी) के 'श्रीचैतन्य पुस्तकालय' में संकलित-सुरक्षित हिन्दी-ग्रन्थों का संक्षिप्त विवरणात्मक परिचय है। इसमें १२७ हिन्दी हस्तलिखित ग्रन्थों के विवरण हैं, जिनमें श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय (गया) के १०६ ग्रन्थ और श्रीचैतन्य पुस्तकालय (पटना सिटी) के २१ ग्रन्थ हैं। इनमें ५५ पोथियों के विवरण बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् और बिहार-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के सम्मिलित शोध-समीक्षा-प्रधान पत्र 'साहित्य' में क्रमशः प्रकाशित हो चुके हैं।

हमें आशा है कि अनुशीलनशील सुधी-समाज के लिए यह विवरण अनुसन्धान-कार्य में सहायक सिद्ध होगा। पोथियों के विवरणों को तैयार करते समय यह ध्यान रखा गया है कि हस्तलिखित ग्रन्थों के उद्धरण अपने मौलिक अविकल रूप में आवें। इस विवरण के आरम्भ में 'ग्रन्थकारों का संक्षिप्त परिचय' तो दिया ही गया है, तृतीय परिशिष्ट में महत्त्व-पूर्ण हस्तलेखों के समय तथा अन्य प्रकाशित खोज-विवरणिकाओं में उनके उल्लेख का संकेत कर दिया गया है।

निम्नलिखित तालिका में विक्रम-शताब्दी के अनुसार प्रत्येक शताब्दी में रचित तथा लिपिकृत ग्रन्थों की संख्या का निर्देश किया गया है। शेष ग्रन्थों में रचना-काल का उल्लेख नहीं है।

विक्रम-शताब्दी के अनुसार ग्रन्थों के रचनाकाल और लिपिकाल की तालिका—

शताब्दी	इस शताब्दी में रचित पोथियों की संख्या	इस शताब्दी में लिपिबद्ध पोथियों की संख्या
सोलहवीं	१	×
सत्रहवीं	३	×
अट्ठारहवीं	२	२
उन्नीसवीं	७	२२
बीसवीं	९	५०

प्रस्तुत संग्रह में ८९ ग्रन्थकारों के १२७ ग्रन्थों के विवरण हैं, जिनमें तेरह ऐसी रचनाएँ हैं, जिनके ग्रन्थकार साहित्यिक जगत् के लिए अपरिचित एवं अज्ञात (प्रथम परिशिष्ट में देखिए) हैं। इनमें से उतने ही ग्रन्थों में काल-निर्देश है, जिनकी संख्या उपर्युक्त तालिका में दी गई है।

इस संकलन में अनेक पोथियाँ ऐसी हैं, जो अबतक अप्रकाशित हैं और इनपर यदि सम्यक् अनुसन्धान किया जाय तो हिन्दी तथा बिहार के साहित्यिक इतिहास पर अभिनव प्रकाश पड़ेगा। अबतक, परिषद् में तथा राज्य के विभिन्न पुस्तकालयों में संगृहीत पोथियों से लगभग पचीस ऐसे कवियों, लेखकों का पता चला है, जिनके सम्बन्ध में अनुसन्धान-अनुशीलन की नितान्त आवश्यकता है। इन पचीस में ग्यारह कवियों का संक्षिप्त परिचय तथा उनके द्वारा रचित ग्रन्थों के सम्बन्ध की चर्चा प्रथम खण्ड में की गई थी। इस संग्रह में भी हम निम्नलिखित बिहार-निवासी कवियों अथवा रचयिताओं की चर्चा करेंगे :

१. लालचदास, २. सूरजदास, ३. हलधरदास, ४. पदुमनदास, ५. दलेलसिंह, ६. रामप्रसाद, ७. देवीदास, ८. दिनेशकवि, ९. कान्हूलाल गुरदा, १०. शिवप्रसाद और ११. राधालाला गोस्वामी।

इनके सम्बन्ध में संक्षिप्त परिचयात्मक टिप्पणी संकलन के प्रारम्भ में दे दी गई है। इनमें यद्यपि श्रीलालचदास और श्रीराधालाल गोस्वामी का जन्म-स्थान बिहार नहीं है, तथापि इनकी साहित्य-रचना-भूमि बिहार ही है। सूरजदास, लालचदास और पदुमनदास के ग्रन्थों की चर्चा पहले भी प्रकाशित विवरण के प्रथम खण्ड में हम कर चुके हैं। संत सूरज दास और उनकी कृति 'रामजन्म' भी हम सुसम्पादित रूप में परिषद् की ओर से प्रकाशित करने जा रहे हैं। परिषद् ने प्रतिवर्ष एक हस्तलिखित ग्रन्थ, समीक्षात्मक अध्ययन के साथ, अपने मूलरूप में, प्रकाशित करने का निश्चय किया है।

इन कवियों के अतिरिक्त दूसरे प्रदेश के निवासी ग्रन्थकार, जो खोज के फलस्वरूप प्रकाश में आये हैं, वे निम्नलिखित हैं—

१. इन्द्रसीदास (गोसाईं), २. ईसवीखाँ, ३. नन्दकिशोर, ४. प्यारेलाल, ५. फकीरसिंह, ६. बलदेव कवि, ७. बैजनाथ सुकवि, ८. भारामल, ९. रामवल्लभशरण, १०. सुखलाल (सुखराम) और ११. शिवदीन कवि ।

इन कवियों का संक्षिप्त परिचय संकलन के पूर्व में दिया गया है, और ग्रन्थ-सम्बन्धी सूचना मुख्य विवरणवाले अंश में दी गई है ।

हम श्रीसूर्यप्रसाद महाजन, तथा श्रीकृष्णचैतन्य गोस्वामी के अत्यन्त अनुगृहीत हैं, जिनकी कृपा से श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय (गया) तथा श्रीचैतन्य पुस्तकालय (पटना सिटी) में संगृहीत पोथियों की छानबीन करने की सुविधा प्राप्त हुई। इन पुस्तकालयों की पोथियों की छानबीन तथा उनके सम्बन्ध की सूचनाओं के प्रकाशन का क्रम चलता रहेगा। हम परिषद् के प्रधान अनुसन्धायक श्रीरामनारायण शास्त्री तथा उनके सहयोगी श्रीरञ्जन सूरिदेव और श्रीकामेश्वर शर्मा नयन' को भी धन्यवाद देते हैं, जिन्होंने अपने कार्य को केवल कर्त्तव्य-मात्र समझकर नहीं सम्पन्न किया है, अपितु साहित्य-सेवा की पुनीत प्रेरणा से अनुप्राणित होकर भी ।

धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री
अध्यक्ष
प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थ-शोध-विभाग

सूची

प्राचीन हस्तलिखित पोथियों का विवरण

[दूसरा खण्ड]

ग्रन्थकारों का संक्षिप्त परिचय

[ग्रन्थकारों के सामने (कोष्ठान्तर्गत) की संख्याएँ विवरणिका में दी गई ग्रंथ-संख्याओं की क्रम-संख्याएँ हैं।]

१. अग्रदास (१०४)—अग्रदास की कुछ पोथियाँ पहले मिल चुकी हैं, 'कुण्डलिया' इस खोज में मिली है। इसमें रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख नहीं है। नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) की खोज-विवरणिका के अनुसार ये गलता, आमेर (जयपुर-राज्य) की वैष्णव-गद्दी के अधिकारी थे। ये वैष्णव-सम्प्रदाय के नाभा-दास के गुरु, कृष्णदास पयहारी के शिष्य थे और वि० सं० १६३२ (सन् १५७५ ई०) के लगभग वर्त्तमान थे। इस ग्रन्थ की एक प्रति की चर्चा नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) के खोज-विवरण (सन् १९०६–८, ग्रं० सं० १२१ बी०) में हुई है। इनके द्वारा लिखित अन्य तीन हस्तलेख भी नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को खोज में मिले हैं।

सरोजकार ने अपने ग्रन्थ में दो अग्रदास का उल्लेख किया है। दोनों का उपस्थिति-काल—कवि-सं० ३४/१७ और ३५/१६—क्रमशः सं० १६२६ वि० तथा १५९५ वि० माना है। ग्रियर्सन ने अपने ग्रन्थ में कवि-सं० ४४ के अन्तर्गत इनका परिचय दिया है। सरोज-सर्वेक्षण में अग्रदास के गुरु कृष्णद स को अनन्तानन्द (प्रसिद्ध रामानन्द के शिष्य) का शिष्य निश्चित किया गया है। 'हिन्दी-साहित्य का इतिहास' की पृ० सं० १४६ पर आचार्य शुक्ल ने अग्रदास का जीवन-काल सं० १५९५ वि० ही निश्चित किया है और इनके रचित चार ग्रन्थों की चर्चा की है। भक्तमाल की टीका में भी इनके चार ग्रन्थों—(१) अष्ट-याम, (२) ध्यानमञ्जरी, (३) कुण्डलिया और (४) पदावली—

का उल्लेख (रूपकलाजी-कृत भक्तमाल की टीका में) हुआ है। अग्र, अग्रदास, अग्रअली और अग्रस्वामी नाम से इनका नामोल्लेख इनकी रचनाओं में पाया जाता है। प्रियादास ने आमेर के राजा मानसिंह का इनकी सेवा में उपस्थित होना लिखा है। मानसिंह अकबर के समकालीन थे। अतः, इनका समय सं० १६१३ वि० माना जा सकता है। 'रसिकप्रकाश भक्तमाल' में जीवाराम ने भी इनका विवरण दिया है।[1] अग्रदास के सोलह प्रमुख शिष्य—जंगी, प्रयागदास, विनोदी, पूरनदास, बनवारीदास, नरसिंहदास, भगवानदास, दिवाकर, किशोर, जगतदास, जगन्नाथदास, सलकधो, खेमदास खीची, धर्मदास, लघुऊधो और प्रिय शिष्य नाभादास—थे।[2] इनके रचित ग्रन्थों में 'ध्यानमञ्जरी' (सन् १९२२ ई० में वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई से और १९४० ई० में मणिरामजी की छावनी, अयोध्या से), 'अग्रग्रन्थावली', प्रथम खण्ड (अयोध्या से महात्मा राजकिशोरीशरण द्वारा सन् १९३५ ई० में) और 'अष्टयाम' (अयोध्या से रामकृष्णदास उत्सव-श्री द्वारा सन् १९३६ ई० में) का प्रकाशन हो चुका है। 'शृंगाररस-सागर' नामक रचना अप्रकाशित एवं अप्राप्य है।[3] इनका विशेष महत्त्व 'राम-भक्ति में माधुर्य-भाव' के प्रवर्त्तक-रूप में माना गया है। 'मिश्रबन्धु-विनोद' के ग्रन्थकार ने इनके रचित आठ ग्रन्थों—(१) श्रीराम भजन-मञ्जरी, (२) कुण्डलिया, (३) हितोपदेश-भाषा, (४) उपासना-बावनी, (५) ध्यानमञ्जरी, (६) पद, (७) विश्व-ब्रह्मज्ञान और (८) रागावली—का उल्लेख करते हुए इनका रचना-काल सं० १६३२ वि० माना है। इनके सम्बन्ध में मिश्रबन्धुओं ने विवरण दिया है—"यह महाशय नाभादास के गुरु थे। इनका प्रथम ग्रन्थ हमने छतरपुर में देखा। यह तोष की श्रेणी में हैं। इनका समय नाभादास के विचार से

---

१. हिन्दी-साहित्य-कोश, दूसरा भाग, पृ० सं० ७।

२. दे० डॉ० बदरीनारायण श्रीवास्तव का लेख—'हिन्दी-साहित्यकोश', दूसरा भाग, पृ० सं० ८।

३. उपर्युक्त।

रखा गया है। 'रामचरित के पद' नामक इनका एक और ग्रन्थ मिला है। आप वल्लभ-सम्प्रदायवाले कृष्णदास के शिष्य थे, किन्तु कृष्णभक्ति पर न जाकर रामभक्ति पर गये। हितोपदेश-भाषा को कुछ महाशय 'उपखाणां बाबनी' भी कहते हैं।'[१] इस ग्रन्थ का एक उदाहरण भी दिया है—मिश्रबन्धु-विनोद में ग्रन्थकार-सं० २४२ के अन्तर्गत।[२] ग्रियर्सन ने आमेर (जयपुर) के अन्तर्गत गलता के रहनेवाले अग्रदास को सन् १५७५ ई० (सं०१६३२ वि०) में उपस्थित लिखा है।[३] ग्रियर्सन ने 'रागकल्पद्रुम' में कवि के उल्लेख को आधार माना है और इन्हें सूरदास की भाँति 'स्वयं वल्लभाचार्य का शिष्य' बताया है। टिप्पणीकार किशोरीलाल गुप्त के मत से 'अग्रदास कृष्णदास पय-अहारी के शिष्य थे, इसमें सन्देह नहीं। पर कृष्णदास पय-अहारी वल्लभाचार्य के शिष्य नहीं थे। वल्लभाचार्य के शिष्य कृष्णदास अधिकारी थे।' ग्रियर्सन ने सरोज के अगर कवि (सं० ३४) को अग्रदास से अभिन्न होने की जो सम्भावना व्यक्त की है, वह यथार्थ है।[४] 'सरोज-सर्वेक्षण' में किशोरी-लाल गुप्त ने कवि तथा इनकी रचना के सम्बन्ध में खोजपूर्ण विस्तृत प्रकाश दिया है।[५] गुप्तजी के मत से 'रामभक्ति में रसिक-सम्प्रदाय की स्थापना अग्रदासजी ने ही की है। इसीलिए इन्होंने अपना नाम अग्रअली रखा। युगलप्रियाजी ने इन्हें सीता की प्रियसखी चन्द्रकला का अवतार माना है। रसिक अली जी ने भी इसका समर्थन किया है। अग्रदास इनका

---

१. मिश्रबन्धु-विनोद, प्रथम भाग; पंचम संस्करण, सं० २०१३ वि० (प्रकाशक—श्रीदुलारेलाल, अध्यक्ष, गंगा-पुस्तकमाला-कार्यालय, लखनऊ), पृ० सं० २८०।

२. उपर्युक्त।

३. हिन्दी-साहित्य का प्रथम इतिहास (द मॉडर्न वर्नाक्युलर लिटरेचर ऑफ हिन्दुस्तान), प्रथम संस्करण (नवम्बर, १९५७), हिन्दी-प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी (किशोरी लाल गुप्त-कृत सटिप्पण अनुवाद); पृ० सं० ९८।

४. उपर्युक्त, पृ० सं० ९९।

५. सरोज-सर्वेक्षण : डॉ० किशोरीलाल गुप्त; प्रथम संस्करण (प्रकाशक—हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद), मार्च, १९६७; पृ० सं० १४७, १४८, १४९।

शरणागतिसूचक नाम है और अग्रअली इनके महती परिकर-स्वरूप का।'[1] नाभादास के मत से ये 'बाग-प्रेमी' थे और इनकी भेंट जयपुर-नरेश मानसिंह से वाटिका में ही हुई थी।[2] हिन्दुई साहित्य का इतिहास (इस्त्वार द लितरेत्यूर ऐंडई एं ऐंदूस्तानी) के लेखक गार्सां द तासी ने अग्रदास को एक वैष्णव संत तथा संस्कृत में लिखित 'भक्तमाल' का हिन्दी-रूपान्तरकार बताया है।[3] 'राजस्थानी भाषा और साहित्य' के लेखक मोतीलाल मेनारिया ने इन्हें कृष्णदास पयहारी के २५ शिष्यों में मुख्य लिखा है और भक्तमाल के आधार पर इनका रचनाकाल सं० १६३२ वि० के लगभग बताया है। इनके रचे ९ ग्रन्थों का उल्लेख करते हुए इन्हें ब्रजभाषा का कवि कहा है।[4] 'हिन्दी में उच्चतर साहित्य' के अनुसार 'ध्यानमञ्जरी' का प्रकाशन चार प्रकाशन-संस्थानों—(१) रामकृष्णदास, अयोध्या (सं० १९९७ वि० में रामवल्लभशरण द्वारा सम्पादित); (२) छोटेलाल लक्ष्मीचन्द, लखनऊ; (३) नीलकण्ठ द्वारकादास, अयोध्या और (४) भोलानाथ, अजमेर द्वारा हुआ है।[5]

अग्रदासजी की 'कुण्डलिया' राजस्थान के जैनशास्त्र-भण्डारों में सुरक्षित है। इस पाण्डुलिपि का लिपिकाल सं० १७४८ वि० है। इनके सं० १८११ वि० में लिपिकृत 'कवित्त' भी राजस्थान के जैनशास्त्र-भण्डारों में संकलित हैं।[6]

---

१. सरोज-सर्वेक्षण : डॉ० किशोरीलाल गुप्त, प्रथम संस्करण (प्र०—हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद), मार्च १९६७; पृ० सं० १४८, १४९।

२. रामभक्ति में रसिक सम्प्रदाय, पृ० सं० ३७९—३८१।

३. हिन्दुई साहित्य का इतिहास : अनुवादक लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय (प्रथम संस्करण, हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद, सन् १९५३ ई०); पृ० सं० २।

४. राजस्थानी भाषा और साहित्य : पं० मोतीलाल मेनारिया, एम० ए०; द्वितीय संस्करण (हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग); पृ० सं० १४२-१४३।

५. हिन्दी में उच्चतर साहित्य (सं० राजबली पाण्डेय); प्र०—नागरी-प्रचारिणी सभा, वाराणसी, प्रथम संस्करण, पृ० सं० २४८।

६. राजस्थान के जैनशास्त्र-भण्डारों की ग्रन्थ-सूची : चतुर्थ भाग (दि० जैन अतिशय क्षेत्र, महावीरजी, महावीर-भवन, जयपुर), प्रथम सं०, पृ० सं० ४६८, ६९०, ७४८।

२. अजबदास (२४)—अजबदास के 'झूलने' बड़े रोचक और दार्शनिक हैं। इनके स्थान और काल का उल्लेख इस ग्रन्थ में नहीं हुआ है। नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) के खोज-विवरण के अनुसार इनका जन्म सुलतानपुर जिले के पलिया (कायस्थ) नामक स्थान में हुआ था। अजबदास कान्यकुब्ज ब्राह्मण (केसरमऊ के दूबे) और वैष्णव थे। इनकी मृत्यु अयोध्या में सन् १८६३ ई० में हुई थी [दे०—ना० प्र० स० (काशी) का त्रयोदश त्रैवार्षिक विवरण, सन् १९२६–२८ ई०, पृष्ठ-संख्या ११]। इस 'झूलना' की दो प्रतियाँ सन् १९२२–२५ के खोज-विवरण में मिली हैं। उक्त खोज-विवरण के उद्धरणों की तुलना करने से इस ग्रन्थ में पाठान्तर मिलते हैं। [दे०—ना० प्र० स० (काशी) का द्वादश त्रैवार्षिक विवरण, सन् १९२३–२५ ई०, खण्ड १ की ग्रन्थ-संख्या ६ बी०] इन्होंने अक्षर-क्रम से तो 'झूलने' रचे ही हैं। झूलना-शब्दावली के भी दो हस्तलेख नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को मिले हैं।

३. इन्द्रसीदास [गोसाईं] (३५)—इनकी एक रचना 'पार्वती-मंगल' नाम से मिली है, जिसमें रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख नहीं है। यह कवि-नाम नवोपलब्ध है। अन्य खोज-विवरणों में इनकी चर्चा नहीं है।

अनुसन्धान के क्रम में यह भी कहा जाता है : वस्तुतः इन्द्रसीदास इस ग्रन्थ के लिपिकार प्रतीत होते हैं। ग्रन्थकार तो—पार्वती-मंगल के—गो० तुलसीदास हैं।

४. ईसवी खाँ (५२)—ईसवी खाँ का नाम नया मिला है। इन्होंने राजा छत्रसिंह की आज्ञा से 'बिहारी-सतसई' की 'रसचन्द्रिका' टीका की है। ये सत्रहवीं सदी के कवि हैं। इनपर तथा इनकी रचना पर अभी अनुसन्धान नहीं हुआ है।

'बिहारी-सतसई' के टीकाकार का समय नई खोज से उन्नीसवीं सदी सिद्ध हुआ है। टीका की रचना सं० १८०७ वि० में हुई। सं० १८३९ वि० में वर्त्तमान, राजा नरवर-नरेश राम सिंहजी के पिता राजा छत्रसिंह के आश्रित कवि ईसवी खाँ ने

---

१. इस भ्रान्ति की ओर ध्यान आकृष्ट करने के लिए हम श्रीवेदप्रकाश गर्ग के अनुगृहीत हैं।

टीका का नाम 'रसचन्द्रिका' दिया है।[1] 'रसचन्द्रिका' का उल्लेख नागरी-प्रचारिणी सभा, वाराणसी द्वारा प्रकाशित अठारहवें त्रैवार्षिक विवरण में भी हुआ है।[2]

५. करण कवि (५१ —बंसीधर के पुत्र; सं० १८५७ वि० के लगभग वर्त्तमान; पन्ना-नरेश महाराज हिन्दूपति के आश्रित। इनके रचित ग्रन्थ 'रसकल्लोल' की एक प्रति नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को खोज में मिली है। (दे०—खो० वि०, सन् १९०४ ई०, ग्रन्थ-संख्या १५)

इस नाम के तीन लेखकों का उल्लेख 'सरोजकार' ने किया है। जोधपुरवाले बन्दीजन करण कवि का उपस्थिति-काल सं० १७८७ वि० (सन् १७३१ ई०) बताया है। 'बिहारी-सतसई' की 'साहित्य-चन्द्रिका' नामक टीका के लेखक, पन्ना-नरेश बुन्देलवंशावतंस राजा सभासिंह के आश्रित, पन्ना-निवासी दूसरे करण कवि का काल सं० १७९५ वि० (१७३८ ई०) बताया गया है और तीसरे करण कवि (इस विवरण के प्रतिपाद्य) बुन्देलखण्ड-निवासी, षट्कुल भारद्वाज गोत्रीय श्रीधर पाण्डेय के पुत्र सं० १८५७ वि० (१८०१ ई०) में विद्यमान थे। सन् १८२९ ई० में रचित 'रसकल्लोल' के अतिरिक्त इनकी एक दूसरी रचना 'साहित्यरस' (सन् १८०४ ई० में रचित) का हस्तलेख भी खोज में मिला है। राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर में हिन्दी-विभाग के प्राध्यापक डॉ० आनन्दप्रकाश दीक्षित ने लिखा है: "आलंकारिक कवियों में इनका नाम लिया जाता है। इन्होंने पूर्ववर्त्ती संस्कृत-आचार्यों के ग्रन्थों का अध्ययन किया था। इन्होंने स्वयं बताया है कि इनका मत भरत के रस-वर्णन के अनुकूल है। रस का इन्होंने सांगोपांग वर्णन किया है। काव्यांगों का सर्वांगपूर्ण वर्णन करनेवाले अधिकारी लेखकों में उन्हें स्थान मिलना चाहिए। वे उत्तम रीति-ग्रन्थों के सफल लेखक थे।"[3] काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा से प्रकाशित 'हिन्दी-साहित्य का बृहद् इतिहास'

---

१. मुनिकान्ति सागर, उदयपुर—'सरस्वती' के मई, १९६३ ई० के अंक में प्रकाशित लेख।
२. 'हस्तलिखित हिन्दी-ग्रन्थों का अठारहवाँ त्रैवार्षिक विवरण', काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा से प्रकाशित; ग्र० सं० १५।
३. हिन्दी-साहित्य-कोश, भाग २, प्रथम संस्करण (ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी), पृ० ६५-६६।

में भी इनके सम्बन्ध की विशेष चर्चा हुई है। सरोज-सर्वेक्षण में किशोरीलाल गुप्त ने 'सरोज' में उल्लिखित करन भट्ट और करण ब्राह्मण को एक ही कवि माना है और अपना मत व्यक्त करते हुए लिखा है : "करन कवि भट्ट भी थे और ब्राह्मण भी। यह या तो पद्माकर भट्ट और कुमारमणि भट्ट के समान दाक्षिणात्य ब्राह्मण रहे हों या प्रसिद्ध निबन्ध-लेखक बालकृष्ण भट्ट के समान उत्तर-भारतीय ब्राह्मण अथवा ब्रह्मभट्ट। यह भाट नहीं थे।"[1] गुप्तजी ने इनकी 'साहित्य-चन्द्रिका' को (सं० १७९४ वि० में रचित) इनकी रचना मानकर भी उल्लेख किया है और इनके पिता का नाम वंशीधर बताया है।[2]

६. कान्हूलाल गुरदा (७९)—गुरदाजी का नाम नया उपलब्ध हुआ है। इन्होंने 'सुधारसतरंगिणी' नामक काव्य (लक्षण-ग्रन्थ) की रचना की है। इनका रचनाकाल १९वीं सदी का अन्तिम चरण है। सं० १९५४ वि० (सन् १८९७ ई०) के लगभग कवि कान्हूलाल वर्त्तमान थे। इनका निवास-स्थान गया था।

७. किंकर गोविन्द [रामचरन] (९५)—किंकर गोविन्द अनुसन्धित्सुओं के लिए एक नया नाम है। इनकी रचना 'रामचरणचिह्नप्रकाश' भी एक नई उपलब्धि है। सं० १८९७ वि० इनका रचना-काल है। इस रचना में राम के चरण अथवा रामनाम की महिमा का वर्णन तो है ही, साथ-ही-साथ रस और अलंकार-सम्बन्धी पद्य भी हैं।

यद्यपि इस ग्रन्थ की पुष्पिका में ग्रन्थकार का नाम 'किंकर गोविन्द' दिया हुआ है, तथापि प्रतीत होता है, ग्रन्थकार नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) द्वारा की गई खोज में उपलब्ध 'रामचरण' (रामचरनदास) हैं। यदि ग्रन्थकार 'रामचरन' ही हैं, तो ना० प्र० स० के खोज-विवरण में इनके जितने ग्रन्थ अबतक मिले हैं, उनसे यह ग्रन्थ नवीन और इसका

---

१. सरोज-सर्वेक्षण, प्रथम संस्करण (हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद); पृ० सं० १६८; कवि-सं० ६९/५७ का सर्वेक्षण।

२. उपर्युक्त, पृ० सं० १६९।

रचना-काल उनसे भिन्न है। विस्तार के लिए देखिए—नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) की खोज-विवरणिका, सन् १९२०—२२, सं० १४२ बी०, १४५, १४५ डी०, १४५ जी०; खो० वि० १९०९–११, सं० २४५ बी०, २४५ डी०, २४५ आई०, २४५ जे०, २४५ के०, २४५ एम्०, २४५ एफ्०; खो० वि० १९१७—१९, सं० १४३ ए०, बी०, सी०, डी०; खो० वि० १९२३—२५, सं० ३३९; खो० वि० १९२६–२८, सं० ३७७, ३७७ डी०, ई०, एच्० और खो० वि० १९२९–३१, सं० २८१ तथा खो० वि० १९३२–३४, सं० १७५। इनके सम्बन्ध की अन्य सूचना के लिए दे०—खो० वि० १९०१, सं० ६४। मिश्र-बन्धु-विनोद की सं० १०७५ में भी इनकी रचना की चर्चा है।

८. केशवदास (१०, ११, ५६, ५७, ५८, ५९, ९८)—ओरछा (बुन्देलखण्ड)-निवासी। सनाढ्य ब्राह्मण, सुप्रसिद्ध एवं महत्त्वशाली रचनाकार। सं० १६३७ वि० के लगभग वर्त्तमान; ओरछा-नरेश महाराज मधुकरशाह और उनके पुत्र महाराज इन्द्रजीत सिंह के आश्रित। निम्नलिखित हस्तलेख इस संग्रह में हैं—

१. कविप्रिया के दो हस्तलेख—समय सं० १८८३ वि० और सं० १९०० वि० अर्थात् सन् १८२६ ई०।

(ग्रं० सं० १० सटीक है। टीका की रचना सं० १८३४ वि० में हुई है। टीकाकार श्रीसहजराम (महाराज गजसिंह के आश्रित) हैं।

२. रसिकप्रिया के दो हस्तलेख—समय सं० १८६७ वि०, सं० १९१६ वि० अर्थात् सन् १८१० और १८५९ ई० (रचना-काल सं० १६८४ वि०)।

३. रामचन्द्रिका की तीन प्रतियाँ—समय सं० १८३५——१९३७ वि० अर्थात् सन् १७७८–१८८० ई० (रचनाकाल—सं० १६५८ वि०)।

इनकी रचनाएँ नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) के खोज-विवरण में भी विवृत हुई हैं। विशेष विस्तार के लिए ना० प्र० स०

की खोज-विवरणिका, दे०—१९२३—२५ ई० की ग्रं० सं० २०७ और १९२६—२८ ई०, सं० २३३; १९२९—३१ ई०, सं० १९२ तथा १९३२—३४ ई०, सं० ११३। केशवदास का समय लगभग १६०० ई० अनुमित किया गया है। डॉ० किशोरीलाल गुप्त के मत मे "केशवदास का जन्म-संवत् १६१२ वि० और मृत्यु-संवत् १६७४ वि० है।[1] इनके पिता का नाम काशीनाथ और पितामह का कृष्णदत्त था। इनके प्रपितामह ब्रह्मदत्त थे। प्रसिद्ध ग्रन्थ 'नखशिख' के लेखक नागेन्द्र मिश्र इनके बड़े भाई थे और 'बुन्देल-वैभव' में उद्धृत कल्याण कवि (मिश्र) इनके अनुज थे।" शिवसिंह पहले व्यक्ति हैं, जिन्होंने केशव को भाषा-काव्य का प्रथम आचार्य लिखा है।[2] केशवदास के निम्नांकित आठ ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं —

१. रतन बावनी—कवि की प्रथम कृति। सं० १६४५ वि० के आसपास की रचना। कुल बावन छन्दों में मधुकरशाह के सातवें पुत्र रतनसिंह के शौर्य-वर्णन के लिए यह रचना लिखी गई। मधुकरशाह के समय, ओरछा पर अकबर की दो चढ़ाइयों (सं० १६३४ और १६४५ वि० में) का इस रचना में वर्णन हुआ है।

२ रसिकप्रिया—मधुकरशाह के तृतीय पुत्र इन्द्रजित के लिए कवि ने यह रचना—'सम्बत् सोरह सै बरस बीते अड़तालीस। कातिक सुदि तिथि सप्तमी बार बरनि रजनीस'—लिखी थी। काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा को इस ग्रन्थ की आठ पाण्डुलिपियाँ खोज में मिली हैं।[3] का० ना० प्र० सभा की खोज के हस्तलेखों का लिपिकाल सं० १८१४, १९०८ और १९१७ वि० है।

---

१. सरोज-सर्वेक्षण, पृ० सं० १६३, और दे०—आचार्य रामचन्द्र शुक्ल-लिखित 'हिन्दी-साहित्य का इतिहास', पृ० सं० २०१।

२. सरोज-सर्वेक्षण, पृ० सं० १६३।

३. दे०—काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा की खो० वि०, १९०३ ई०, ग्रं० सं० ८९; खो० वि० १९०४ ई०, ग्रं० सं० १२८; खो० वि०, १९१७—१९ ई०, ग्रं० सं० ९६ बी०; खो० वि०, १९२०—२२ ई०, ग्रं० सं० ८९ बी०; खो० वि०, १९२३—२५ ई०, ग्रं० सं० २०७; वि० २३३ एफ०, जी०।

सं० १७१३ वि० का हस्तलेख राजस्थान के शास्त्र-भण्डारों में सुरक्षित है।[१] सं० १८४८ वि० की एक पाण्डुलिपि हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग के संग्रहालय में संगृहीत है।[२] बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना के प्राचीन पोथी-विभाग में सं० १८६७ वि० का हस्तलेख सुरक्षित है।[३] बिहार रिसर्च सोसाइटी, पटना को खोज में चार प्रतियाँ प्राप्त हुई हैं।[४]

३. **कविप्रिया**—विक्रमाब्द १६५८ में रचित यह ग्रन्थ राजकुमार इन्द्रजित के प्रवीण पातुर प्रवीणराय के लिए लिखा गया था। यह रचना मुख्यतः हिन्दी-काव्य के अलंकारों के लिए है। इस ग्रन्थ की तेरह प्रतियाँ का० ना० प्र० स० को खोज में मिली हैं, जिनका लिपि-काल सं० १७६९, १८२२ और १९१४ वि० है।[५] विक्रमाब्द १७६९ और १९३१ का हस्तलेख प्रयाग-स्थित हिन्दी सा० स० के संग्रहालय में है।[६] सं० १७४० वि० की प्रति राजस्थान की खोज में उपलब्ध हुई है।[७]

४. **रामचन्द्रिका**—इस ग्रन्थ के प्रथम प्रकाश में रचना-काल "सोरह सै अट्ठावनै कार्तिक सुदि बुधवार। रामचन्द्र

---

१. दे०—राजस्थान के जै० शा० भं० की ग्रं० सू० (पृ० १००), गु० २२२/९१० (१०२), वेष्टन-नं० ३२५।

२. दे०—'पाण्डुलिपियाँ' (हिन्दी सा० स०, प्रयाग का प्रकाशन), पृ० सं० २९६।

३. दे०—'प्राचीन हस्तलिखित पोथियों का विवरण', पहला खण्ड, ग्रं० सं० ८६ और १००। (बि० रा० प०, पटना का प्रकाशन)

४. 'प्राचीन हस्तलिखित पोथियों का विवरण', छठा खण्ड, ग्रं० सं० ४१, ४१ क, ख, ग। (परिषद् प्रकाशन)

५. दे०—का० ना० प्र० स० का खो० वि० १९००, ग्रं० सं० ५२, ग्रं० सं० १८३; खो० वि० १९०४, ग्रं० सं० १२५, १२६; खो० वि० १९०७, ग्रं० सं० ९६ ए०; खो० वि० १९२०—२२, ग्रं० सं० ८२ ए०, बी०; खो० वि० १९२३—२५, ग्रं० सं० २०७; खो० वि० १९२६—२८, ग्रं० सं० २३३ बी०, सी०, डी०; ग्रं० सं० १९२ जी०, ई०।

६. दे०—हि० सा० स०, प्रयाग का प्रकाशन 'पाण्डुलिपियाँ' (पृ० सं० २९७), ग्रं० सं० १९३१, २०१८, २९७६, १२८६ और १६१०।

७. दे०—राजस्थान में हि० ह० लि० ग्रं० की खो० (पृ० सं० १२१), ग्रं० सं० २४; अन्तवाणी-संग्रह—३ प्रतियाँ।

की चन्द्रिका तब लीन्हौ अवतार''—का उल्लेख हुआ है, जिसके अनुसार इस ग्रन्थ की भी रचना सं० १६५८ वि० में हुई है।

५. **वीरसिंहदेव-चरित्र**—मधुकरशाह के चौथे बेटे वीरसिंह देव को तुष्ट करने के लिए रचित श्रेष्ठ चरित-काव्य। इसकी रचना सं० १६६३ वि०—''सम्वत् सोरह सै त्रेसठा, बीत गए प्रगटे चौसठा''—में हुई थी।

६. **विज्ञानगीता**—इस ग्रन्थ की रचना कवि ने सं० १६६७ वि० में की थी। सरोजकार के मत से मधुकरशाह के नाम पर यह लिखा गया है। परन्तु, सरोज-सर्वेक्षण के लेखक डॉ० किशोरीलाल गुप्त ने मधुकरशाह का मृत्युकाल सं० १६४९ वि० लिखा है और इस ग्रन्थ की रचना को मधुकरशाह से सम्बद्ध नहीं माना है।

७. **जहाँगीर जस-चन्द्रिका**—वीरसिंह देव की प्रेरणा से रचित। इसका रचनाकाल सं० १६६९ वि०—'सोरह सै उनहत्तरा माघ मास विचारु, जहाँगीर सक साहि की करी चन्द्रिका चारु।'—है। वीरसिंह देव ने अकबर के विद्रोही अबुल फजल को मारकर जहाँगीर (सलीम) को प्रसन्न किया था।

८. **नखशिख**—कविप्रिया का एक खण्ड और स्वतंत्र रचना।

महाकवि केशवदास की समस्त रचनाओं का प्रकाशन, पं० विश्वनाथ मिश्र द्वारा सम्पादित होकर, हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद से तीन भागों में हुआ है। प्रथम भाग में दो ग्रन्थ—(१) रसिकप्रिया और (२) कविप्रिया—हैं और द्वितीय भाग में तीन ग्रन्थ—(१) रामचन्द्र-चन्द्रिका, (२) छन्द-माला (यह नवीन ज्ञात पिंगल-ग्रन्थ है) तथा (३) शिखनख (नवीन ज्ञात और नखशिख से भिन्न) इसी प्रकार तृतीय भाग में चार ग्रन्थ—(१) रतनबावनी, (२) वीर-चरित्र, (३) जहाँगीर जस-चन्द्रिका और (४) विज्ञानगीता हैं।[1]

---

१ दे०—'सरोज-सर्वेक्षण', पृ० सं० ९८१।

विभिन्न खोज-ग्रन्थों के अनुसार केशव नाम के पाँच ग्रन्थकारों के हस्तलेख मिले हैं, जो निम्नांकित हैं—

१. सामान्य कविता के रचयिता केशवदास। 'सरोज' में कवि-सं० ६४/५२ है।

२. 'रसललित' और 'नायिका-भेद' के ग्रन्थकार बाबू केशवराय बघेलखण्ड के निवासी थे और सं० १७३९ वि० में उपस्थित थे। बलदेव कवि-संगृहीत ग्रन्थ 'सत्कवि गिरा-विलास' में इनके कवित्त संगृहीत हैं।[१] मिश्रबन्धु-विनोद में कवि-सं० ५९३ में इनकी चर्चा हुई है। काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा के खोज-विवरण में क्र० सं० १४९ (खो० वि०, सन् १९०९ ई०) में ग्रन्थकार का उल्लेख हुआ है।[२]

३. भ्रमरगीत के रचयिता केशवराय कवि के सम्बन्ध में सूचना पर्याप्त नहीं है। सभा के खो० वि० में इन्हें राजस्थान-निवासी बताया गया है।[३]

४. महाप्रभु चैतन्य के समकालीन (१५६२—६६ वि०) और उनके साथ शास्त्रार्थ करनेवाले कवि केशव कश्मीरी निम्बार्क-सम्प्रदाय के प्रथम ब्रजभाषा-कवि और 'युगल शतक' के ग्रन्थकार श्रीभट्ट के गुरु थे। इन्हें कवि नयनसुख का पिता भी कहा जाता है।[४]

५. काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा के खो० वि० के अनुसार 'बलिचरित' और 'हनुमान-जन्मलीला' के ग्रन्थकार।[५]

६. मारवाड़-नरेश महाराज गजसिंह के आश्रित, सं० १६८१ वि० के लगभग वर्त्तमान, 'विवेक-वार्त्ता' के ग्रन्थकार।[६]

१. 'सरोज' में कवि-सं० ६५/५३ में द्रष्टव्य।
२. काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा, खो० वि०, सन् १९०९ ई० (द्वितीय त्रैवार्षिक रिपोर्ट), ग्रं० सं० १४९।
३. खो० वि० सन् १९०२ ई०, ग्रं० सं० ३४।
४. खो० वि०, सन् १९०० ई०, ग्रं० सं० ३४।
५. दे०—खो० वि०, सन् १९०९—११ ई०, ग्रं० सं० १४६ ए० और बी०।
६. दे०—खो० वि०, सन् १९०२ ई०, ग्रं० सं० २० और ३०१

७. विक्रमाब्द १८०८ के लगभग वर्त्तमान, हरसेवक मिश्र के भाई और परमेश्वर दास के पुत्र ।[1]

८. ओरछा-नरेश महाराज नरसिंह के आश्रित, महाराज छत्रसाल के कृपापात्र, माधवदास के पुत्र और मुरलीधर के पिता केशवराय सं० १७५३ वि० के लगभग वर्त्तमान थे । इनकी एक रचना 'जैमुनी की कथा' काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा को खोज में मिली है ।[2]

विभिन्न संग्रहालयों में इनकी रचनाओं—कविप्रिया, रसिकप्रिया, विज्ञानगीता, रामचन्द्रिका और रतनबावनी—की अबतक सम्भवतः ९७ पाण्डुलिपियाँ सुरक्षित हैं । विस्तृत विवरण के लिए दे०—'प्राचीन हस्तलिखित पोथियों का विवरण', प्रथम खण्ड, तृतीय संस्करण; पृ० सं० ४—७ ।[3]

कवि केशवदास की पाँच पाण्डुलिपियाँ—कवित्त, कवि-प्रिया, नखसिख-वर्णन, रसिकप्रिया और रामचन्द्रिका—राजस्थान के शास्त्र-भण्डारों में भी सुरक्षित हैं ।[4]

९. गिरधरदास [कविराय] (१४)—गंगा-यमुना के मध्य स्थित किसी स्थान में इनका जन्म सं० १७७० वि० में हुआ । इनकी कुण्डलियाँ प्रसिद्ध हैं । का० ना० प्र० सभा के खोज-विवरण में भी इनके ग्रन्थ की चर्चा है । दे०—खो० वि०, सन् १९०६–९ ई०, सं० १६७ ।

मातादीन मिश्र-सम्पादित 'कवित्त-रत्नाकर' के भाग १, कवि-सं० २ में इन्हें जयपुर के महाराजा जयशाह का आश्रित कवि बताया गया है । महाराजा ने इन्हें 'कविराय' की उपाधि दी

---

१. दे०—खो० वि०, सन् १९०६—१९०८ ई०, ग्रं० सं० ५१ ।

२. दे०—खो० वि०, सन् १९०५ ई०, ग्रं० सं० १० ।

३. 'प्राचीन हस्तलिखित पोथियों का विवरण' (डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री), प्रथम खण्ड, तृतीय संस्करण, सन् १९७१ ई० (प्रकाशक—बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना); पृ० सं० ४—७ ।

४. राजस्थान के जैनशास्त्र-भण्डारों की ग्रन्थ-सूची (चतुर्थ भाग), प्रकाशक—श्रीदिगम्बर जैन अ० क्षेत्र श्रीमहावीरजी, महावीर-भवन, जयपुर, प्रथम संस्करण, १९६२ ई०; पृ०पृ० १६१, १९४, ६४३, ७७०, ७७१, ७७२, ७९९ ।

थी। इनका उल्लेख ग्रियर्सन ने कवि-सं० ३४५ और 'विनोद'-कार ने कवि-सं० ७३१ के अन्तर्गत किया है।

डॉ० भोलानाथ तिवारी ने इनके सम्बन्ध में लिखा है—"इनकी कुण्डलियाँ अधिकांशतः अवधी में मिलती हैं इनका रचना-काल अठारहवीं सदी का मध्यकाल माना जा सकता है। इनके सम्बन्ध में एक प्रसिद्ध जनश्रुति है। कहा जाता है कि एक बढ़ई से किसी कारण इनकी अनबन हो गई। बढ़ई ने इनसे बदला लेने के बारे में सोचा और उसने एक ऐसी चारपाई बनाकर वहाँ के राजा को दी कि उस चारपाई पर ज्यों ही कोई सोता था, तो उसके चारों कोनों पर लगे चारों पंखे चलने लगते थे। राजा वहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने उसी प्रकार की कुछ और चारपाइयाँ बनाने की आज्ञा दी। उसने कहा कि इसके बनाने के लिए बेर कीलकड़ी चाहिए। गिरिधर कविराय के आँगन में बेर का एक अच्छा पेड़ है, वह मुझे दिलवा दीजिए। राजा ने गिरिधर से कहा। गिरिधर ने बहुत अनुनय-विनय की, किन्तु कोई फल नहीं हुआ और उनके आँगन का पेड़ काट ही लिया गया। गिरिधर को स्वभावतः बहुत बुरा लगा और वे पत्नी को साथ लेकर राज्य छोड़कर निकल गये। वे फिर कभी उस राज्य में नहीं लौटे और आजीवन पत्नी के साथ घूमते तथा अपनी कुण्डलियाँ सुनाकर माँगते-खाते रहे। कहा जाता है कि उनकी जिन कुण्डलियों में 'साईं' शब्द की छाप है, वे उनकी पत्नी द्वारा पति को (अर्थात् स्वामी या साईं को) सम्बोधित करके लिखी गई हैं।"

"गिरिधर के समय तथा जीवन के सम्बन्ध में प्रामाणिक रूप से कुछ कहना कठिन है; क्योंकि अन्तःसाक्ष्य या बहिःसाक्ष्य, किसी से भी कोई आधार प्राप्त नहीं है। नाम के साथ 'कविराय' या 'कविराज' लगे होने से ये भाट जाति के ज्ञात होते हैं।"[१]

हस्तलिखित रूप में प्राप्त कुण्डलियाँ ग्रन्थाकार रूप में भी प्रकाशित हुई हैं। खेमराज श्रीकृष्णदास, बम्बई से ४५७

१. हिन्दी-साहित्य-कोश, भाग २, पृ०पृ० १२०, १२१।

कुण्डलियाँ संगृहीत होकर 'कविराय गिरिधरराय-कृत कुण्डलियाँ' नाम से सन् १९५३ ई० में प्रकाशित हुई हैं। सर्वप्रथम सन् १८७४ ई० में मुस्तफाए प्रेस, लाहौर से 'कुण्डलियाँ' नाम से संग्रह का प्रकाशन हुआ था। कहा जाता है, सन् १८३३ ई० में नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ से भी एक संग्रह प्रकाशित हुआ था, किन्तु वह अप्राप्त है। कवि की रचना विशेष रूप से 'नीतिपरक' है। 'सरोज-सर्वेक्षण' के ग्रन्थकार किशोरीलाल गुप्त ने इनका जन्मकाल जनश्रुति के आधार पर सं० १७३० वि० और रचनाकाल सं० १८०० वि० माना है।[1] 'पंजाब प्रान्तीय हिन्दी-साहित्य का इतिहास' के लेखक चन्द्रकान्त वाली ने अपने ग्रन्थ की पृ० सं० ३१५-१६ पर इन्हें पंजाबी कहा है और इनके पिता का नाम गोस्वामी धर्मचन्द (लाहौर-निवासी) बताया है। 'महान् कोश' के लेखक के ग्रन्थकार भाई काहन सिंह ने अपने ग्रन्थ की पृ० सं० १२२१ पर इनके द्वारा सं० १७५१ वि० में रचित 'नल-दमयन्ती' नामक प्रेमाख्यान की चर्चा की है। इनके द्वारा रचित ग्रन्थों की पुरानी हस्तलिखित प्रतियाँ राजस्थान के जैनशास्त्र-भण्डारों में सुरक्षित हैं।[2]

१०. तुलसीदास (१२-क, १३,१७,१९,२०,२१,२२,२६,३७,३८,४४,४८,४९,५३,६२, ६४,६५,६६,८४,८६,८७,९२,९४,१२८)—ये हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं। निम्नलिखित रचनाओं की कुल २५ प्रतियाँ मिली हैं, जिनका विवरण इस प्रकार है—

क्रम-सं०	ग्रन्थकार का नाम	प्रतियाँ	लि० का० निम्नलिखित रूप में
१	कवित्तरामायन	२	सं० १९१९ वि०
२	छप्पैरामायन	२	सं० १९१९ वि० (सन् १८६२ ई०)
३	तुलसी सतसई	२	सं० १९१५ वि० (सन् १८५८ ई०) और सं० १९७४ वि०।

१ 'सरोज-सर्वेक्षण'—किशोरीलाल गुप्त, प्रथम संस्करण (प्र० हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद), पृ० सं० ९८३।

२ राजस्थान के जैनशास्त्र भण्डारों की ग्रन्थ-सूची (चतुर्थ भाग); प्र०—श्री दि० जै० अ० क्षे० श्रीमहावीरजी, महावीर-भवन, जयपुर, प्रथम संस्करण, १९६२; पृ०पृ० ७७२, ७८६।

क्रम-सं०	ग्रन्थकार का नाम	प्रतियाँ	लि० का० निम्नलिखित रूप में
४	दोहावली	१	सं० १८४९ वि०
५	बरवै रामायण	३	सं० १९०५ वि०, १८८७ वि० (१८३० ई०), सं० १९१९ वि० (सन् १८६२ ई०)।
६	मणिमय दोहा	१	सं० १८१९ वि० (सन् १७६२ ई०)
७	विनय-पत्रिका	६	सं० १८९५ वि०, सं० १८६९ वि० (सन् १८२२ ई०)
८	वैराग्य-सन्दीपनी	१	सं० १९१९ वि० (सन् १८६२ ई०)
९	सप्तसतिका	१	सन् १२८६ साल
१०	गीतावली रामायन	३	सं० १९१० वि०, १८८३ वि०
११	सूक्ष्मरामायणछप्पावली	१	सं० १९४६ वि० (सन् १८८९ ई०)
१२	भरतविलाप	१	सं० १८८८ वि० (सन् १२९५ साल)
१३	रामसगुनमाला	१	सं० १९११ वि० (सन् १८५४ ई०, १२३२ साल)

हिन्दी-साहित्येतिहास के इदानीन्तनीन मान्य लेखकों में भी इनकी जन्म-तिथि और निर्वाण-तिथि के साथ-साथ जन्म-स्थान एवं साहित्य-रचना-भूमि को लेकर मतैक्य नहीं हो पाया है। जन्म के सम्बन्ध में सर्वाधिक मान्य समय सं० १५८९ वि० माना गया है। हाथरस के सन्त तुलसी साहब (सं० १८२० से १९०० वि० के मध्यवर्त्ती) की रचना 'घटरामायण' के आधार पर भी डॉ० माताप्रसाद गुप्त ने सं० १५८९ वि० के भाद्रपद शु० ११, मंगलवार को गो० तुलसीदास का जन्म लेना सिद्ध किया है।[1] कहा जाता है, ज्यौतिष-गणना से भी यह तिथि ठीक आती है। इस तिथि को मानने से इनके सम्बन्ध के ज्ञात तथ्यों तथा तिथियों में कोई असंगति नहीं होती है।

सन्तशिरोमणि तुलसीदास जी की निर्वाण-तिथि को लेकर भी पर्याप्त मतभेद है। यों लोक-परम्परा के अनुसार सं० १६८० वि०

---

१. हिन्दी-साहित्यकोश, भाग २ (नामवाची शब्दावली), प्र०—ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी, प्रथम संस्करण, सं० २०२०; ले०—माताप्रसाद गुप्त, पृ०पृ० २१८—२२०।

वि० की श्रावण-शुक्ला सप्तमी को उनकी निधन-तिथि मनाई जाती रही है। किन्तु, 'हिन्दी-साहित्य-कोश' में लेखक ने सूचना दी है, "उनके स्नेही टोडर के वंशज श्रावण-कृष्ण तृतीया को उनकी वर्षी मनाते रहे हैं। इसलिए सं० १६८० की श्रावण-कृष्ण तृतीया को तुलसीदास की निधन-तिथि माना जा सकता है।"[१]

गोस्वामीजी के कुल के सम्बन्ध में 'विनय-पत्रिका' की १३५वीं विनय ही उल्लेख्य है। 'कवितावली' के उत्तरकाण्ड की १०६ और १०७वीं कविता से और 'विनय-पत्रिका' की ७६वीं विनय से यह अवश्य सिद्ध होता है कि गोस्वामीजी के जीवन के उत्तरार्द्ध में काशी में उनकी जाति-पाँति को लेकर विवाद और वितण्डा छिड़ा था।

इनके जन्मस्थान के सम्बन्ध में पूर्ववर्त्ती साहित्येतिहास-लेखकों के मत से उत्तरप्रदेश के बान्दा जिले का राजापुर ग्राम ही मान्य था। किन्तु, कुछ नवप्राप्त आधारों पर सोरों (जिला एटा) को भी जन्मस्थान मानने का विवाद चल रहा है। इनका प्रारम्भिक जीवन अत्यधिक कष्टों तथा कारुणिक स्थितियों में बीता था। कहा जाता है कि किसी हनुमान-मन्दिर में आश्रय प्राप्त करके और 'मन्दिर के साथ लगी हुई खोंची माँग-माँगकर जीवन-निर्वाह करने लगे थे।'[२]

इनके गुरु का नाम 'नरहरि' या 'नरहरिदास' था, यह 'मानस' के एक सोरठे (बालकाण्ड, वन्दना) से सिद्ध होता है।

डॉ० माताप्रसाद गुप्त ने अपने लेख में सिद्ध किया है, "उन्होंने 'रामचरितमानस' की रचना सं० १६३१ वि० में अयोध्या में आरम्भ की थी,[३] किन्तु उसका कुछ अंश उन्होंने काशी में भी लिखा।[४] पीछे तो वे काशी में ही रहने लगे थे

१. हिन्दी-साहित्यकोश, भाग–२ (नामवाची शब्दावली), प्रथम संस्करण, सं० २०२० वि०; पृ० २१८–२२०।
२. उपर्युक्त।
३. उपर्युक्त—'रामचरितमानस' के बालकाण्ड में दोहा-सं० ३४-३५।
४. उपर्युक्त—'रामचरितमानस' के किष्किन्धाकाण्ड की वन्दना।

और वहीं उनका देहावसान भी हुआ। काशी में वह स्थान अब भी है, जहाँ तुलसीदास रहते थे और जो आजकल 'तुलसी-घाट' नाम से प्रसिद्ध है। वहाँ पर तुलसीदासजी द्वारा स्थापित रामपंचायतन की प्रतिमा और बीसा यन्त्र पर प्रतिष्ठित हनुमान जी की प्रतिमा अब भी वर्त्तमान है, जिसकी पूजा होती है। तुलसीदास जी द्वारा प्रयुक्त 'नाव' का एक अंश, उनकी 'चरण-पादुका' और उनके हाथ से लिखे गये 'मानस' का एक अंश आज भी वहाँ सुरक्षित है। इसके साथ ही तुलसीदासजी का प्राचीनतम चित्र भी उपलब्ध है, जिसमें उनके शिष्य टोडरमल चँवर डुलाते दिखाये गये हैं। इसी स्थान के अन्तर्गत तुलसी-दासजी द्वारा काशी में स्थापित हनुमानजी का मन्दिर आजकल 'संकटमोचन' के नाम से विख्यात है।"[1]

आधुनिकतम खोज के फलस्वरूप तुलसीदास की निम्नलिखित रचनाओं के प्राप्त हस्तलेखों के अधोलिखित विवरण हैं—

क्रम-संख्या	ग्रन्थ नाम	प्राप्त हस्तलेखों के विवरण	प्राप्त प्रतियाँ
१.	रामचरितमानस	का० ना० प्र० सभा; हि० सा० स०, प्रयाग; जैनशास्त्र भं०, राज० वि० रा० भा० प०; पट० मन्नू० पु०; गया; चै० पु०, पटना सिटी	५३०
२.	कवितावली	,,	१२५
३.	विनयपत्रिका	,,	८५
४.	गीतावली	,,	२२
५.	पर्वतीमंगल	,,	१५
६.	हनुमान-बाहुक	,,	१२
७.	बरवै रामायण	,,	८
८.	वैराग्य-सन्दीपनी	,,	१७
९.	रामलला-नहछू	,,	५
१०.	रामाज्ञा प्रश्न	,,	२२
११.	जानकीमंगल	,,	७
१२.	कृष्ण-गीतावली	,,	५

१. हिन्दी-साहित्य-कोश, पूर्ववत्।

क्रम-संख्या	ग्रन्थ-नाम	प्राप्त हस्तलेखों के विवरण	प्राप्त प्रतियाँ
१३.	दोहावली	का० ना० प्र० स०; हिं० सा० स०, प्रयाग; जैन-शास्त्र भं०, बि० रा० भा० प०, पटना, मन्नू० पु०, गया	१५
१४.	सतसई	,,	५
१५.	कुण्डलिया रामायण	,,	४
१६.	अंकावली	,,	२
१७.	छप्पय रामायण	,,	१७
१८.	हनुमान-चालीसा	,,	२
१९.	हनुमान-स्तोत्र	,,	५
२०.	हनुमान-पंचक	,,	२
२१.	बजरंग-बाण	×	×
२२.	बजरंग-साठिका	×	×
२३.	भरत-मिलाप	,,	३
२४.	विजय दोहावली	×	×
२५.	बृहस्पति काण्ड	×	×
२६.	छन्दावली रामायण	×	×
२७.	धर्मराय की गीता	×	×
२८.	ध्रुव प्रश्नावली	×	×
२९.	गीता-भाषा	×	×
३०.	ज्ञान-दीपिका	×	×
३१.	राम-मुक्तावली	×	×
३२.	पदबन्द रामायण	×	×
३३.	रसभूषण	×	×
३४.	साखी तुलसीदासजी की	×	×
३५.	संकटमोचन	,,	५
३६.	सतभक्त उपदेश	×	×
३७.	सूर्यपुराण	×	×
३८.	तुलसीदासजी की बानी	×	×
३९.	उपदेश दोहा[१]	×	×

१. मात्र यह ग्रन्थ-सूची 'हिन्दी-साहित्य-कोश' से उद्धृत

११. दलेल सिंह (१०२)—बिहार प्रान्त के हजारीबाग जिले में स्थित रामगढ़-राज्य के महाराजा साहब। साहित्य और काव्य से विशेष अनुराग। अनेक कवियों और संगीतज्ञों के आश्रयदाता। सं० १७३० वि० के लगभग वर्त्तमान। श्रीराम सिंह महाराज के पुत्र। कर्णपुर ग्राम में निवास। अनेक अप्रकाशित ग्रन्थों के प्रणेता। श्री पदुमनदास इनके आश्रित कवियों में प्रमुख थे। इनकी एक रचना 'रामरसार्णव' इस खोज-विवरण में है। अनुसन्धान की दृष्टि से कवि नवोपलब्ध हैं। इनकी चर्चा अन्य किसी खोज-विवरण में सम्भवतः नहीं है।

हजारीबाग गजेटियर के अनुसार इनका स्थिति-काल सं० १७२४ वि० (सन् १६६७ ई०) बताया गया है। एक दूसरे साक्ष्य (राज-रहस्य) से इनका राज्यारोहण-काल सं० १७३४ वि० और अवसान-काल १७८१ वि० है। वृद्धावस्था में, इनकी तपस्या से प्रसन्न होकर, कहा जाता है, शिव के वरदान-रूप में इन्हें एक पुत्र हुआ, जिसका नाम रुद्रसिंह रखा गया। रुद्रसिंह की शिक्षा-दीक्षा के लिए ही पदुमनदास ने हितोपदेश का पद्यानुवाद किया। खैरवार क्षत्रियों के अत्यन्त संघर्षशील वंश में इनका प्रादुर्भाव हुआ था। इनके पूर्व-पुरुष का नाम सिंहदेव था। इस वंश के लोग क्रमशः हजारीबाग जिले के सिसिया, उर्दा, बादम (करनपुर) में रहे। बुन्देलखण्ड की भूमि को छोड़कर आये और छोटानागपुर के राजा से युद्ध में विजयी इनके पूर्वजों ने उपर्युक्त स्थानों में रहने के बाद रामगढ़ में आकर अन्तिम पड़ाव या निवास किया। रामगढ़ के पहले राजा दलेल सिंह ही थे।[1]

रामरसार्णव में कवि ने अपने पिता की चर्चा की है। 'मुक्ति-रत्नाकर' के हस्तलेख में भी कवि ने अपने पिता का

---

१. दे०—काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा के आर्य-भाषा-पुस्तकालय में सुरक्षित 'रामरसार्णव' का हस्तलेख—ग्र० सं० १२१२/७८८।

"रामसिंह नृप के तनय रामभक्त के दास।
करनपुर पति मगध तजि कियो रामगढ़ वास ॥"

पुण्य स्मरण किया है। 'शिवसागर' में दलेल सिंह ने अपने वंश का विस्तृत परिचय दिया है। हितोपदेश, भक्ति-कल्पतरु, भाषा-भूषण और काव्यमंजरी के प्रणेता, दलेल सिंह के आश्रित कवि पदुमनदास ने 'भक्तिकल्पतरु' में महाराजा दलेल सिंह का विस्तृत वंश-परिचय दिया है। 'हितोपदेश' में तो अपने आश्रयदाता कवि के वर्णन में पदुमनदास ने अनेक पंक्तियाँ रची हैं। 'हजारीबाग गजेटियर' में इनकी विस्तृत वंशावली मिलती है, जो सन् १९१७ ई० में प्रकाशित हुई थी और जिसका सम्पादन मि० लिस्टर ने किया था। इन्होंने अपने गुरु भगतादास से भक्ति की दीक्षा ली थी। दलेल सिंह परम वैष्णव और कृष्णभक्त थे। राँची रोड में अवस्थित गंला में इनके द्वारा निर्मायित छिन्नमस्तका भगवती की मूर्त्ति से युक्त एक मन्दिर है।

इनके आश्रित कवियों में (१) दामोदर दास, (२) पदुमनदास, (३) हरिशंकर दास, (४) लालमणि दास, (५) कृष्णमणिदास, (६) युवराज रुद्रसिंह, (७) वंशी कवि और (८) महाराजा मुकुन्द सिंह उल्लेख्य हैं। इन सभी मुख्य तथा गौण कवियों पर पर्याप्त अनुसन्धान तथा विवेचन की आवश्यकता है।

इनके रचित पाँच ग्रन्थ मिलते हैं—१. रामरसार्णव, २. मुक्तिरत्नाकर, ३. शिवसागर, ४. राजरहस्य और ५. गोविन्द-लीलामृत।

इनकी रचनाओं पर बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थ-शोध-विभाग में अनुसन्धान हो रहा है। इनकी रचनाओं में 'शिवसागर', 'रामरसार्णव' और 'गोविन्द-लीलामृत' का पाठ-सम्पादन हो रहा है। रचनावली के रूप में उपर्युक्त ग्रन्थों के प्रकाशन की योजना है।

१२. दिनेशकवि (५५)—बिहार प्रान्तस्थ गया जिलान्तर्गत टिकारी राज्य के आश्रित कवि। सन् १८८३ ई० के लगभग वर्त्तमान। इनकी रचना 'रस-रहस्य' में नायक-नायिका आदि के लक्षण-उदाहरण के अतिरिक्त टिकारी-राज्य, राजवंश, फल्गु नदी, मगध-गौरव आदि का बड़ा सरस और सुन्दर चित्रण है।

इनके पुत्र वैजनाथ सुकवि की रचनाएँ भी मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित हैं तथा इस विवरण में ग्रन्थकार-सं० २६ और ग्र० सं० ९ तथा १०१ के अन्तर्गत द्रष्टव्य हैं। इन दोनों की रचनाओं पर पटना विश्वविद्यालय के हिन्दी-विभाग के प्राध्यापक डॉ० अमरनाथ सिन्हा (बी० एन० कॉलेज) ने शोध-ग्रन्थ लिखा है।

१३. दीनदयाल गिरि (१, २, ३, ८९, ९१, ९३)——इनके निम्नलिखित ६ ग्रन्थ इस संग्रह में हैं :—

क्र० सं०	ग्रन्थ-नाम	प्रति	र० का०	लि० का०
१.	अन्योक्ति-कल्पद्रुम	३	सं० १९१७ वि०	सं० १८२२ वि०
			सं० १९२२ वि०	सं० १९२७ वि०
२.	अनुराग-बाग	२	सं० १८८८ वि० (१८३१ ई०)	१२७८ साल
				सं० १९०९ वि० (१८५२ ई०)
३.	दृष्टान्त-तरङ्ग	१	सं० १८३९ वि० (१७८२ ई०)	

इनके आठ ग्रन्थ नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को खोज में उपलब्ध हुए हैं। दे०—ना० प्र० खो० वि० १९०४, ग्रं० सं० ——४०, ४४, ७१, ७७, ९१, ९२, ९९ और खो० वि० १९०९–११, ग्रन्थ-सं०—७४, ए०, बी०। इनमें ४ ग्रन्थ मुद्रित हो चुके हैं। दे०—हिन्दी-पुस्तक-साहित्य (डॉ० माताप्रसाद गुप्त), पृ० ४७७।

काशी-निवासी, शिवभक्त कवि, सं० १८७१ वि० में वर्त्तमान; गोस्वामी नाम से आदरास्पद; दशनामी सम्प्रदाय के संन्यासी; सं० १८५९ वि० में जन्म; कुशागिरि के शिष्य; स्वयंवरगिरि और रामदयालगिरि के समकालीन; काशी के पश्चिमी द्वार देहली-विनायक पर ("सुखद देहली पै जहाँ बसत विनायक देव। पश्चिम द्वार उदार है, काशी को सुर सेव ॥"—'अनुराग' बाग) आवासित। डॉ० भोलानाथ तिवारी के मत से "इनकी भाषा संस्कृत-मिश्रित और बहुत प्रौढ़ है। व्याकरणिक दृष्टि से वह

मूलतः ब्रज है, किन्तु अवधी-भोजपुरी का भी कहीं-कहीं प्रभाव है। हिन्दी के अन्योक्तिकारों में दीनदयाल का स्थान बहुत ऊंचा है। इनकी शैली का विशिष्ट सौन्दर्य इनकी अन्योक्तियों में परिलक्षित होता है। इनके प्रिय छन्द कुण्डलियाँ और दोहे हैं।"[१] इनके पाँच ग्रन्थ—(१) अनुराग-बाग, (२) दृष्टान्त तरंगिणी, (३) अन्योक्तिमाला, (४) वैराग्य-दिनेश और (५) अन्योक्ति कल्पद्रुम—श्यामसुन्दर दास द्वारा सम्पादित होकर 'दीनदयाल ग्रन्थावली' नाम से सन् १९१९ ई० में काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा से प्रकाशित हो चुके हैं। शिवसिंह-सरोज में उल्लिखित इनकी रचना 'बाग बहार' अबतक खोज में सम्भवतः नहीं उपलब्ध हुई है। सरोजकार ने इन्हें सं० १९१२ वि० में उपस्थित माना है।[२] डॉ० किशोरीलाल गुप्त के मतानुसार "१८५९ वि० में शुक्रवार, बसन्त पंचमी के दिन काशी के गायघाट मुहल्ले में एक पाठक ब्राह्मण-कुल में इनका जन्म हुआ था। जब यह ५-६ वर्ष के थे, तभी इनके माता-पिता दिवंगत हो गये और मरने के पहले इन्हें कुशागिरि को सौंप गये। इन्हीं महन्थजी ने इनका लालन-पालन किया तथा इन्हें शिक्षा-दीक्षा दी। महन्तजी के मरने के बाद ये देहली-विनायक के पास मौठली गाँववाले मठ में रहने लगे। इनकी मृत्यु सं० १९२२ वि० में हुई थी।"[३] आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र के मत से इनका जन्मकाल सं० १८५७ वि० के लगभग है।[४]

इनकी नौ रचनाएँ—(१) विश्वनाथ नवरत्न, (२) चकोर पंचक, (३) दृष्टांत तरंगिनी, (४) काशी पंचरत्न, (५) दीपक पंचक, (६) अंतर्लापिका, (७) वैराग्य दिनेश, (८) अनुराग-बाग और (९) कुण्डलिया—खोज में मिली हैं।[५] इनके अतिरिक्त

१. हिन्दी-साहित्य-कोश, भाग २, पृ० सं० २३६।
२. शिवसिंह-सरोज, कवि-सं० ३५६।
३. सरोज-सर्वेक्षण, पृ० सं० १५८।
४. हिन्दी-साहित्य का अतीत (भाग २), पृ० ७८६।
५. दे०—काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा का खो० वि० १९०४, ग्रं० सं०—४०, ४४, ७१, ७७, ९१, ९२, ९९; खो० वि० १९०९—११, ग्रं० सं०—७४ ए०, ७४बी०; खो० बि० १९२६—२८, ग्रं० सं० ४४।

(१) विश्वनाथ नवरत्न, (२) अन्योक्तिमाला और (३) अन्योक्ति-कल्पद्रुम की पाण्डुलिपियों के मिलने की भी चर्चा हुई है। श्रीवेदप्रकाश गर्ग ने इनका स्थितिकाल सं० १८१८ वि० को अशुद्ध माना है। रामसरूप शास्त्री 'रसिकेश' के मत से श्री गिरि शैव संन्यासी थे।[1] किन्तु 'हिन्दी-साहित्य-कोश' के अनुसार ये दशनामी संन्यासी तथा कृष्णभक्त कवि थे।[2] इनकी रचनाओं की पाण्डुलिपियाँ तथा रचनाकाल-सम्बन्धी निम्नलिखित तथ्य अबतक प्रायः उपलब्ध हुए हैं—

क्रम-संख्या	ग्रन्थ-नाम	रचना-काल	उपलब्ध पाण्डुलिपियाँ	प्रकाशन
१.	दृष्टान्त तरंगिनी	सं० १८७९ वि०		दी० द० ग्रं०
२.	विश्वनाथ नवरत्न	सं० १८७९ वि०	का० ना० प्र० स०, खो० रि० १९०४, ग्रं० सं० ४४, १५७ ख०। काशीनरेश के पुस्तकालय में एक प्रति सुरक्षित।	
३.	अनुराग-बाग	सं० १८८८ वि०		,,
४.	अन्योक्तिमाला	सं० १९०० वि०	का० ना० प्र० स०, खो० रि० (प्रथम खण्ड)—३ प्रतियाँ	,,
५.	वैराग्य-दिनेश	सं० १९०६ वि०	का० ना० प्र० स०, खो० रि० १९२३, ग्रं० सं० १०४ ख०; खो० रि० १९०९, ग्रं० सं० ७४बी०; दो प्रतियाँ।	,,
६.	अन्योक्ति-कल्पद्रुम	सं० १९१२ वि०		भारत जीवन प्रेस, काशी। सा० भ० लि०, प्रयाग।
७.	चकोर-पंचक		काशी-नरेश के पुस्तकालय में १ प्रति।	
८.	काशी-पंचरत्न		;, का० ना० प्र० स० खो० रि० १९०४, ग्रं० सं० ७१०, ९१, १५७ ख।	

---

१. हिन्दी में नीतिकाव्य का विकास, पृ० ५५७।
२. हिन्दी-साहित्य-कोश, द्वितीय भाग, पृ० २३६।

९. दीपक पंचक ,, का० ना० प्र० स० खो० रि० १९०४, ग्रं० सं० ९२।

१०. अन्तर्लापिका ,, का० ना० प्र० स० खो० रि० १९०४, ग्रं० सं० ९९।

१४. देवकवि (६७)—इनका पूरा नाम श्री देवदत्त था। हिन्दी के नवरत्नों में एक। सं० १७३० वि० के लगभग वर्त्तमान। इन्होंने लगभग ७० ग्रन्थों की रचना की है। इस संग्रह में इनके दो ग्रन्थ मिले हैं। नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को भी इनके १३ ग्रन्थ उपलब्ध हुए हैं। ये धौसरिया (इटावा), समनेगाँव (मैनपुरी)-निवासी थे। ये फफूँद (इटावा) के राजा मधुकर साहि के पुत्र राजा कुशल सिंह के आश्रित थे। कवि को संस्कृत में भी नायिका-भेद लिखने का श्रेय प्राप्त है, जिसकी एक प्रति नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) के संग्रहालय में सुरक्षित है। दे०—ना० प्र० स० के खो० वि० १९२६—२८, पृ० सं० ९१, क्र० सं० ९५ का लेख। नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को खोज में उपलब्ध ग्रन्थों के लिए दे०—खो० वि० १९०२, सं० ७, १२१; खो० वि० १९००, सं० ५३; खो० वि० १९०३, सं० २८, ४१, १०८; खो० वि० १९०४, सं० ३७, १०५, १२०, १२२; खो० वि० १९०५, सं० २६; खो० वि० १९०६—१९०८, सं० ५६; खो० वि० १९०९—१९११, सं० ६४ ए०, बी०, सी०, डी०, ई०। अबतक कवि के निम्नलिखित ग्रन्थ मुद्रित हुए हैं—अष्टयाम, भाव-विलास, रसविलास और भवानीविलास। दे०—'हिन्दी-पुस्तक-साहित्य', पृ० सं० ४७९।

१५. देवीदास (३४)—(अम्बष्ठ, कायस्थ) बिहार प्रान्त के हजारीबाग जिले के ईचाक ग्रामवासी; रामगढ़ राज्य के आश्रित; श्रीधरणीधरदास के पौत्र और श्रीराघवदास के पुत्र। इनके अनुज श्रीभवानीदास भी सम्भवतः कवि थे। इनकी रचना 'पाण्डव-चरितार्णव' की खण्डित प्रति मिली है। ये नवोपलब्ध कवि हैं। 'पाण्डव-चरितार्णव' की दो प्रतियाँ बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना के प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थशोध-विभाग के संग्रहालय में सुरक्षित

हैं। इस रचना पर विभाग में अनुसन्धान हो रहा है। पाठ-सम्पादन-सहित यह रचना परिषद् से प्रकाशित होगी।

१६. नन्ददास (८८, १२४)—प्रसिद्ध कवि तुलसीदास के भाई; इनका अष्टछाप के कवियों में सातवाँ स्थान है। स्वामी विट्ठलदास के शिष्य; सन् १६२४ ई० के लगभग वर्त्तमान। इस विवरण में एक ही ग्रन्थ 'अनेकार्थनाममाला' की दो प्रतियाँ मिली हैं, जिसका लेखकाल सं० १८५८ वि० (१८०१ ई०) है। दोनों में पाठान्तर प्रतीत होता है। इनके अन्य ग्रन्थ नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) की खोज में उपलब्ध हुए हैं। दे०—ना० प्र० स० का खो० वि० १९०१, ग्रन्थ-सं०—११, ६९; खो० वि० १९०२, ग्रं० सं० ५८, ७०; खो वि० १९०६—१९०८, ग्रं० सं० २०० ए०, बी०, सी०, डी०, ई०; खो० वि० १९०९–११, ग्रं० सं० २०८ बी०, डी०, ए०, सी०, ई०, एफ्०; खो० वि० १९०३, ग्रं० सं० १५३; खो० वि० १९१७–२०, ग्रं० सं० ११९ ए०; खो० वि० १९२०–२२, ग्रं० सं० ११३ डी०, ई०; खो० वि० १९२३–२५, ग्रं० सं० २९४; खो० वि० १९२६–२८, ग्रं० सं० ३१६ ए०, बी०, सी०, डी०, ई०, एफ०, जी०; ग्रं० सं० २४४।

अबतक इनके निम्नलिखित १५ ग्रन्थ खोज में मिले हैं—१. अनेकार्थमंजरी (नाममाला), २. भँवर गीत, ३. नाम-मंजरी या मानमंजरी, ४. फूलमंजरी, ५. रानी मंगी, ६. रास-पंचाध्यायी, ७. रुक्मिणीमंगल, ८. विरहमंजरी, ९. दशम स्कन्ध भागवत, १०. नामचिन्तामणिमाला, ११. जोगलीला, १२. श्यामसगाई, १३. नासुकेत पुराणभाषा, १४. रसमंजरी, १५. विरहमंजरी।

वल्लभ-सम्प्रदाय के दीक्षित माननीय कवि सूरदास वल्लभाचार्य के पुत्र विट्ठलनाथ के शिष्य थे। गुरु के ज्येष्ठ पुत्र गिरिधरजी के प्रति कवि की अपार श्रद्धा थी।[1] श्रीनन्ददास

१. "श्रीवल्लभ-सुत के चरन भजौं।" —श्री न० ग्रं०, संपा०—व्र० र० दा०, पृ० २८१, पद-सं० ६ (नन्ददास ग्रन्थावली: सं०—व्रजरत्नदास)।

संस्कृत के प्रकाण्ड पण्डित थे।[1] इन्होंने अपने पूर्ववर्त्ती ग्रन्थकार भानुदत्त-कृत 'रसमंजरी' का अनुसरण कर एक दूसरी 'रसमंजरी' की रचना की है।[2] शुद्धाद्वैत के प्रगाढ़ पण्डित एवं भक्ति-क्षेत्र में चैतन्य-सम्प्रदाय से प्रभावित। श्रीनाथजी की उपासिका ग्वालियर की एक 'रूपमंजरी' नाम की बेटी चौपड़ खेलने तथा वीणा बजाने में अति प्रवीण थी। वह भगवद्कीर्त्तन में भी निपुण थी। उससे प्रभावित होकर ही कवि ने उसके नाम की अमरता के लिए 'रूपमंजरी' ग्रन्थ की ही रचना नहीं की, अपितु 'मंजरी' नाम की अपनी पाँच रचनाओं द्वारा उसे प्रसिद्ध किया। श्रीगोवर्द्धननाथ जी की प्राकट्य-वार्त्ता में इसे विस्तारपूर्वक बताया गया है।[3] कवि के जीवन और कृतियों की प्रामाणिकता के सम्बन्ध में जिन ग्रन्थों पर आधृत अनुसन्धान हो सकते हैं, वे हैं—(१) मूल गोसाईं-चरित—बाबा वेणीमाधव दास-रचित; (२) भक्त नामावली—ध्रुवदासकृत; (३) अष्टसखामृत—प्राणेश-विरचित; (४) भक्तमाल—नाभादासकृत; (५) वार्त्ता-साहित्य और (६) सारों की सामग्री। मूल गोसाईं-चरित का रचनाकाल सं० १६३० वि० के लगभग माना जाता है। इसके अनुसार कवि ने काशी में शेष सनातन से शिक्षा प्राप्त की थी और तुलसीदास के गुरुभाई थे।

कवि के देहावसान का समय सं० १६३९ वि० माना गया है। नन्ददास जी के द्वारा रचित २८ ग्रन्थ बताये जाते हैं, किन्तु डॉ० दीनदयाल गुप्त ने १४ ग्रन्थों को ही प्रामाणिक माना है। वे हैं—(१) रासपंचाध्यायी; (२) श्रीकृष्ण पंचाध्यायी;

---

१. "उचरि सकति नहिं संस्कृत अर्थज्ञान असमर्थ,
तिनहित नन्द सुमति यथा भाषा कियो सुअर्थ"—अनेकार्थ मंजरी।

२. "रसमंजरी अनुसार के नन्द सुमति अनुसार।
बरनत बनिता भेद जहँ, प्रेमसार विस्तार।।" —र० मं०, पृ० १२७।

३. "एक दिनां श्रीनाथ जी ग्वालियर की बेटी रूपमंजरी के संग चौपड़ खेलने पधारे चार प्रहर चौपड़ खेले और बीन सुने वह बीन आछी बजावत हती चार प्रहर रात्री वहां ही बिराजे नन्ददास जी को वाको संग हतो गुणगान आजा करत हती ताके नन्ददास जी रूपमंजरी ग्रन्थ कियो है तामे चौपाई धरी है—रूपमंजरी लिया वो दियो। सो गिरिधर निज आलय कियो।"—पृ० ३६।

(३) अनेकार्थमंजरी; (४) मानमंजरी अथवा नाममाला; (५) रूपमंजरी; (६) रसमंजरी; (७) विरहमंजरी; (८) भ्रमरगीत; (९) गोवरधन-लीला; (१०) स्याम सगाई; (११) रुक्मिणीमंगल; (१२) सुदामाचरित; (१३) भाषा दशम स्कन्ध एवं (१४) पदावली।

इनके द्वारा विरचित अनेकार्थ नाममाला, अनेकार्थमंजरी, नाममंजरी, मानमंजरी, विरहमंजरी और श्यामबत्तीसी की पाण्डुलिपियाँ राजस्थान के शास्त्र-भण्डारों में सुरक्षित हैं।[1]

१७. नन्दकिशोर (१०९)—(पण्डित) साहित्य-जगत् के लिए नये हैं। 'विनोद' और पिछले खोज-विवरणों में इनका कोई उल्लेख नहीं है। प्रस्तुत संग्रह में 'रासपंचाध्यायी' की भाषाटीका इनके द्वारा रचित मिली है। इसमें रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख नहीं हुआ है। ग्रन्थ में सम्भवतः इनका कोई वृत्त भी नहीं मिलता है।

१८. नागरीदास (१२५)—वृन्दावन-वासी; राधावल्लभी (वैष्णव) सम्प्रदाय के गुरु श्री बिहारिनदास के शिष्य; सोलहवीं शती के अन्त में (सन् १५९३ ई० के लगभग) वर्त्तमान। 'नागरीदास की बानी' और 'नागरी दास के दोहे' के रचयिता; 'स्वामी हरिदास जी को मंगल' के भी रचयिता। महाराज सावंतसिंह (नागरीदास) से भिन्न। इनके सम्बन्ध में दे०—मिश्रबन्धु-विनोद, ग्रं० सं० १७६; ना० प्र० स० (काशी) खो० वि० १९०५, सं० ३१, ४०; खो० वि० १९१२, सं० ११९; खो० वि० १९२३–२५, सं० २९१। इस नाम से प्रसिद्ध अन्य कवि भी हो गये हैं, किन्तु ये उनसे भिन्न और सबसे पुराने हैं। इस संग्रह की प्रति से ना० प्र० खो० वि० की १९२३—२५, सं० २९१ के उद्धरण को मिलाइए।

नई प्राप्त सूचना के अनुसार ग्रन्थकार नागरीदास के गुरु

१. राजस्थान के जैनशास्त्र-भण्डारों की ग्रन्थसूची (चतुर्थ भाग), प्र०—श्रीदिगम्बर जैन अ० क्षेत्र श्रीमहावीर जी, महावीर-भवन, जयपुर, प्रथम सं० १९६२, पृ०पृ० २७१, २७६, ५८७, ६५७, ६८३, ६८७, ६९१, ६९७, ६९८, ७०४, ७०६, ७५६, ७६६; ७७०।

बिहारिनदास टट्टी सम्प्रदाय के आचार्य थे।[१] श्रीवेदप्रकाश गर्ग ने ग्रन्थकार के सम्बन्ध में पर्याप्त शोध किया है।

सरोजकार ने कवि का उपस्थिति-काल सं० १६४८ वि० माना है और कालिदास हजारा में इनकी कविताओं के उल्लेख की चर्चा की है।[२]

सरोज-सर्वेक्षण के लेखक डॉ० किशोरीलाल गुप्त के मत से इनका असल नाम शुक्लाम्बर धर था और इनके पिता का नाम कमलापति। इनका जन्मकाल सं० १६०० वि० तथा मृत्युकाल सत्तर वर्ष के वय में सं० १६७० वि० है। स्वामी हरिदास की शिष्य-परम्परा में ये बिहारिनदास के शिष्य थे और एक प्रसिद्ध महात्मा तथा कवि थे। इनके भाई सरसदेव (सं० १६११ से १६८३ वि० में अवस्थित) भी अच्छे कवि थे।[३] नागरीदास, हरिदासी सम्प्रदाय के तीसरे आचार्य थे। इनका आचार्यत्व-काल सं० १६५९–७० वि० था।

इनके अतिरिक्त तीन अन्य नागरीदास हुए हैं, जिनकी रचनाओं का उल्लेख काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा के खोज-विवरणों में हुआ है। डॉ० विजयेन्द्र स्नातक द्वारा 'हिन्दी-साहित्य-कोश' के दूसरे भाग की पृ० सं० २७५ पर विवृत नागरीदास इन ग्रन्थ लेखक से भिन्न नागरीदास प्रतीत होते हैं।

१९. पद्माकर (१५, १६)—प्रसिद्ध कवि; जन्म सन्—१७५३ ई० और मृत्यु १८३२ ई०; जन्मभूमि—सागर (बाँदा); मोहनलाल भट्ट के पुत्र। इनके पूर्वज मथुरा-निवासी थे। १६ वर्ष की अवस्था में जन्मभूमि सागर के मराठा-दरबार में इन्होंने सम्मान प्राप्त किया। जयपुर, उदयपुर, ग्वालियर, सतारा और बुन्देलखण्ड की अनेक रियासतों में सम्मानित। जयपुर-नरेश महाराजा प्रतापसिंह सवाई और महाराजा जगतसिंह सवाई के आश्रय में साहित्य-

---

१. दे०—'व्रजभारती', वर्ष १५, अंक २ (भाद्रपद, सं० २०१४ वि०), पृ० सं० ७७ पर श्रीवेदप्रकाश गर्ग का लेख।

२. दे०—शिवसिंह-सरोज, कवि-सं० ३९८/३५७।

३. दे०—सरोज-सर्वेक्षण, पृ० सं० ३८०।

रचना। विशेष विवरण के लिए दे०—ना० प्र० स० (काशी) का खो० वि० १९२०–२२, सं० १२३; खो० वि० १९२६–२८, सं० ३३८; खो० वि० १९०९–११, सं० २२०। इस संग्रह में इनके दो ग्रन्थ हैं।

२०. पदुमनदास (१८, ४०, ८१, ८२)—बिहार के कवि, हजारीबाग जिले के रामगढ़ राज्य के आश्रित, खैरवार श्रीदलेल सिंह (स्वयं राजा भी कवि थे) की संरक्षकता में रचना। भाषा और साहित्य पर समान अधिकार। सं० १७३८ वि० (१६८१ ई०) के लगभग वर्त्तमान। इनके ग्रन्थ अप्रकाशित और साहित्यिक-जगत् के लिए नये हैं। नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) के खोज-विवरण में इनकी चर्चा है। दे०—ना० प्र० सभा (काशी) की खोज-विवरणिका १९२६—२८ ई०, सं० ३३९। इस संग्रह में इनके ग्रन्थों की चार प्रतियाँ मिली हैं।

काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा से प्रकाशित 'हिन्दी-साहित्य का वृहद् इतिहास' (भाग ६) के उल्लेख के अनुसार ये बादम-नगर के शासक रामसिंह के पुत्र दलेलसिंह के आश्रित कवि पदुमनदास, कर्ण कायस्थ दामोदर लाल के पुत्र थे। 'हिन्दी-साहित्य-कोश' के सम्पादक का यह मत कि 'इनका केवल एक ग्रन्थ प्राप्त हुआ है—काव्यमंजरी'[1] गलत है। काव्यमंजरी के अतिरिक्त अन्य दो रचनाओं के हस्तलेख बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना के संग्रहालय में सुरक्षित हैं। 'काव्यमंजरी' ही मात्र प्रकाशित रचना है, जो सन् १८९७ ई० में लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई से प्रकाशित हुई थी।[2] ये केशव की परम्परा के कवि माने गये हैं।[3]

२१. प्रेमसखी (१३०, १३१)—रामानुज-सम्प्रदाय के सखी-समाज के वैष्णव कवि; सं० १७९१ वि० में उपस्थित; अयोध्यावासी। 'रसिक-विनोद'

---

१. हिन्दी-साहित्य-कोश, प्रथम संस्करण (प्र० – ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी), पृ० सं० २९६।

२. प्राचीन हस्तलिखित पोथियों का विवरण, प्रथम खण्ड, तृतीय संस्करण (प्र०—बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना), पृ० सं० १७, १८।

३. 'हिन्दी-साहित्य-कोश', भाग २, प्रथम संस्करण, पृ० सं० २९६।

के ग्रन्थकार प्रेमसखी की अन्य चार रचनाएँ—(१) प्रेमसखी की कविता, (२) होरी, (३) नखसिख और (४) जानकी राम को नखसिख—खोज में मिली हैं।[१] गोरखपुर विश्वविद्यालय के हिन्दी-विभाग के प्राध्यापक भगवती प्रसाद सिंह के मत से प्रेमसखी 'सिंगरौर' (शृंगवेरपुर) के समीपस्थ किसी ग्राम के निवासी ब्राह्मण थे। महात्मा रामदास गूदर से दीक्षा लेकर इन्होंने चित्रकूट में निवास किया था। छोटी आयु में ही विरक्त होकर इन्होंने मिथिला, अयोध्या, चित्रकूट आदि स्थानों का भ्रमण किया था। अवध के नवाब सआदत अली खाँ ने इन्हें अपने सम्पर्क में लाने का प्रयास किया था, किन्तु सवा लाख की भेंट को अस्वीकार कर इन्होंने उच्चतम विरक्ति का परिचय दिया था।[२] बुन्देल-वैभव के लेखक ने इनका जन्मकाल सं० १८०० वि० के लगभग और रचनाकाल १८४० वि० माना है।[३] मिश्रबन्धुओं के मत से भी इनका रचनाकाल सं० १८४० वि० है।[४] सरोजकार ने सं० १७९१ वि० में कवि को उपस्थित माना है।[५] अपने ग्रन्थ में कवि-सं० ४२३ ज० के अन्तर्गत डॉ० ग्रियर्सन ने भी इनको सं० १७९१ वि० में उपस्थित लिखा है।

२२. प्यारेलाल (११०)—श्रीप्यारेलाल जी नवोपलब्ध रचनाकार हैं। प्रतीत होता है, इन्होंने 'नन्दोत्सव' की टीका की है, जिसमें अपने विषय में कुछ भी संकेत नहीं किया है। टीका की भाषा से 'व्रज' के निकट के निवासी ज्ञात होते है। अन्य खोज-विवरणिकाओं में इनका उल्लेख नहीं हुआ है।

२३. फकीर सिंह (४६)—इनका ग्रन्थ 'वैतालपचीसी' प्राप्त हुआ है, जिसका रचनाकाल सं० १७८२ वि० है। यह ग्रन्थ अबतक के अन्य अन्वेषणों

---

१. दे०—काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा का खो० वि० १९००, ग्रं० सं० ३९; खो० वि० १९०६, ग्रं० सं० ३०८; खो० वि० १९०९–११, ग्रं० सं० २३० ए० और २३० बी०।
२. दे०—हिन्दी-साहित्य-कोश, भाग २, पृ० सं० ३३७।
३. दे०—बुन्देल-वैभव, भाग २, पृ० ५११।
४. दे०—विनोद कवि, सं० १२३९।
५. दे०—शिवसिंह-सरोज, कवि-सं० ४५३/३७७।

में प्राप्त प्रतियों से भिन्न है। ग्रन्थ से ग्रन्थकार के निवास-स्थान आदि का पता नहीं चलता है।

२४. बलदेव कवि (६१)—'रामविनोद' के कवि बलदेव नये कवि हैं। इनकी रचना अनुसन्धेय है। ग्रन्थ अप्रकाशित है। विस्तार के लिए इस ग्रन्थ पर दी गई टिप्पणी देखिए।

२५. बिहारीलाल (४२, ४३)—हिन्दी के प्रसिद्ध कवि (रीतिकालीन); माथुर चौबे; ग्वालियर-राज्य के निवासी; सं० १७३० वि० के लगभग वर्त्तमान। इस संग्रहालय में 'बिहारी-सतसई' की दो प्रतियाँ मिली हैं।

इनका जन्म सं० १६५२ वि० (१५९५ ई०) में हुआ था। इनके पिता का नाम केशवराय था। इनके एक भाई और एक बहिन थीं। इनका विवाह मथुरा के किसी माथुर ब्राह्मण की कन्या से हुआ था। इनके कोई सन्तान न थी, इसीलिए इन्होंने अपने भतीजे निरंजन को गोद ले लिया। ये धौम्य गोत्री सोती धरबारी चौबे थे।[1]

कहा जाता है, केशवराय इनके जन्म के ७-८ वर्ष बाद ग्वालियर छोड़कर ओरछा चले गये। वहीं इन्होंने हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि केशवदास से काव्य-शिक्षा ग्रहण की। ओरछा में रहकर इन्होंने काव्य-ग्रन्थों और संस्कृत-प्राकृत आदि का अध्ययन किया। आगरा जाकर इन्होंने उर्दू-फारसी का अध्ययन किया और प्रसिद्ध कवि अब्दुर्रहीम खानखाना के सम्पर्क में आये। ये शाहजहाँ के कृपापात्र थे तथा जोधपुर, बूँदी आदि अनेक रियासतों से इन्हें वृत्ति मिलती थी। इन्होंने अपनी काव्य-प्रतिभा से जयपुराधीश महाराजा जयसिंह तथा उनकी पटरानी अनन्तकुमारी को विशेष प्रभावित किया, जिनसे इन्हें पर्याप्त पुरस्कार और ग्राम मिला तथा ये दरबार के राजकवि भी हो गये। जयपुर के राजकुमार रामसिंह का विद्यारम्भ-संस्कार इन्होंने कराया था।[2]

---

१. 'हिन्दी-साहित्य-कोश', भाग २ (नामवाची शब्दावली), प्रकाशक—ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी—१; प्रथम संस्करण (२०२० वि०); आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र का लेख, पृ० पृ० ३६१, ३६२।

२. उपर्युक्त।

इनकी एक ही रचना 'सतसैया' मिलती है, जिसमें इनके बनाये ७१३ मुक्तक, दोहे तथा सोरठे संगृहीत हैं। इसके अतिरिक्त इनके तीन कवित्त भी उपलब्ध हैं। हिन्दी में समास-पद्धति की शक्ति का परिचय सबसे अधिक बिहारी ने दिया है।[1]

बिहारी कवि और इनकी रचना से सम्बन्धित निम्नलिखित विशेष ग्रन्थ अथवा निबन्ध द्रष्टव्य हैं—(१) राधाचरण गोस्वामी का 'भारतेन्दु' में, (२) महेशदत्त का 'भाषाकाव्य-संग्रह' में, (३) मिश्रबन्धुओं का 'हिन्दी-नवरत्न' में, (४) आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी का 'सरस्वती' में, (५) पद्मसिंह शर्मा का 'सरस्वती' में, (६) कृष्णविहारी मिश्र की पुस्तक 'देव और बिहारी' में, (७) लाला भगवानदीन का निबन्ध जबलपुर से प्रकाशित 'श्रीशारदा' में, (८) रत्नाकर जी का 'नागरी-प्रचारिणी पत्रिका' में और इनकी लिखी 'कविवर बिहारी' पुस्तक में, (९) रामचन्द्र शुक्ल द्वारा लिखित 'हिन्दी-साहित्य का इतिहास' में और (१०) आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र द्वारा विवेचित 'बिहारी की वाग्विभूति और बिहारी' में प्रस्तुत विवेचन पठनीय है।

काशी के निकटवर्त्ती माथुरपुर गाँव में सन् १८४८ ई० में जनमे और पटना कॉलेज में संस्कृत के प्राध्यापक, 'भाषाबोध', 'पत्रबोध', 'बिहारी-तुलसीभूषण', 'वर्णनाबोध', 'पदकाम्यबोध', 'प्रबोध', 'बालोपहार', 'चालचलन-बोध', 'दशावतार' और 'तुलसी-सतसई की टीका' आदि ग्रन्थों के प्रणेता बिहारीलाल चौबे और बुन्देलखण्ड के अन्तर्गत बिजावर ग्राम-निवासी, सं० १९४६ वि० (१८८९ ई०) में वर्त्तमान 'साहित्यसागर' नामक ग्रन्थ के ग्रन्थकार बिहारीलाल भट्ट इनसे भिन्न हैं।

इनकी रचनाएँ राजस्थान के जैनशास्त्र-भण्डारों में भी सुरक्षित हैं।[2]

---

१. हिन्दी-साहित्य-कोश, भाग २ (नामवाची शब्दावली), पृ० सं० ३६१, ३६२।
२. राजस्थान के जैनशास्त्र-भण्डारों की ग्रन्थसूची (चतुर्थ भाग), प्र०—श्री दि० जैन अ० क्षेत्र श्रीमहावीर जी, महावीर-भवन, जयपुर, प्रथम संस्करण, १९६२, पृ०पृ० ५७६; ६७५, ६८८, ७२७, ७६८।

२६. बैजनाथ सुकवि (९, १०१)—'आलंबनि विभाव' और 'वामविलास' के ग्रन्थकार श्रीसुकवि बैजनाथ नवोपलब्ध हैं। प्रस्तुत संग्रह में इनकी दो रचनाएँ मिली हैं। दूसरी रचना 'वामविलास' के देखने से इनकी विद्वत्ता और साहित्यिक प्रतिभा का पता चलता है। ये बिहार-प्रदेशीय गया जिले के बादशाहपुर ग्राम के निवासी बाबू सीताराम के आश्रित थे। इनके पिता दिनेश भी सुकवि थे। ग्रन्थ का रचनाकाल सं० १७३४ वि० है। ग्रन्थ में रचनाकाल-सूचक दोहा अस्पष्ट है। ग्रन्थ में लिपिकार ने लिपिकाल सं० १९२८ वि० बताया है और लिखा है, कवि की आज्ञा पाकर ही लिपि की गई है। इससे संगति नहीं बैठती है।

नये अनुसन्धान के क्रम में प्राप्त सूचनाओं के अनुसार कान्यकुब्ज ब्राह्मण-वंश में केशव द्विवेदी के पुत्र दिनेश द्विवेदी के द्वितीय पुत्र बैजनाथ द्विवेदी का जन्मकाल सं० १८९४ वि० की माघ-शु० चतुर्थी, सोमवार को हुआ। श्रीअवधविहारी लाल-लिखित इनके जीवन-चरित्र के अनुसार इनका जन्म टेकारी-राज्य के किले की पश्चिमोत्तर दिशा में अवस्थित तिताईगंज मुहल्ले में हुआ था।[१] इनका एक नाम शिवदीन द्विवेदी भी था। इनके पितामह केशवदेव द्विवेदी को 'केशो दूबे' भी कहा जाता था। इनके पूर्वज पश्चिम के बैसवारे से आये थे। इनके पिता शिवदीन द्विवेदी का साहित्यिक नाम 'दिनेश द्विवेदी' था। इसी नाम से उनकी रचित एक रचना—'रामरत्नावली'—मिलती है। दिनेश कवि की अन्य रचनाएँ—रामलीलावली, शिवरहस्य, रस-रहस्य आदि हैं। यह ग्रन्थ बाबू शिवप्रसाद सिंह की आज्ञा पर सन् १८८७ ई० में खड्गविलास प्रेस, पटना से प्रकाशित हुआ था। कहा जाता है, मम्मट के समान रसध्वनिवादी आधार पर रचित यह ग्रन्थ काव्यप्रकाश, साहित्यदर्पण और भानुदत्त की रसमंजरी से प्रभावित है। बैजनाथ कवि ने अपनी रचनाओं की पुस्तिकाओं में अपने को

१. 'साहित्य', वर्ष ११, अंक ४, जनवरी, १९६१।

'दिनेशात्मज' लिखा है। कवि के पिता दिनेश कवि टेकारी के महाराजा मित्रजित सिंह के दरबारी कवि थे।

'रस-रहस्य' में कथित इतिवृत्त के अनुसार टेकारी-राज्य के मिर्जा खानबहादुर इनके प्रशंसक तथा गुणकीर्त्तक थे। दिनेश कवि का देहावसान काशी में सं० १९०१ वि० के लगभग हुआ था। बैजनाथ कवि की दूसरी भार्या (गया जिले के जहानाबाद-स्थित काको ग्राम-निवासी गणपति ठाकुर की पुत्री) से दो पुत्र हुए थे, किन्तु अल्पायु में ही वे काल-कवलित हो गये। इनकी रचना 'वामविलास' पर इनके पिता द्वारा रचित 'रसरहस्य' का प्रभाव है। इनकी अन्य रचनाएँ—(१) सीतारामाभरण-मंजरी, (२) नखशिख, (३) रामरहस्य, (४) वृत्तनिदोष कदम्ब, (५) वामविलास, (६) उद्दीपन शृंगार-मंजरी, (७) अनुभव-उल्लास, (८) चित्राभरण, (९) भूषणचन्द्रिका, (१०) पंचदेवता-वन्दन चालीसा, (११) आलम्बनि विभाव, (१२) गयागदाधर वास-प्रकाश आदि भी खोज में मिली हैं। इन रचनाओं का लेखन-काल सं० १९२१ से १९२६ वि० के मध्य का है। ये बसकंडा-ग्रामवासी नृपति सीताराम के आश्रित और उनके प्रिय कवि थे। इनकी रचनाओं में बैसवारा मूलस्थान होने के कारण ब्रजभाषा और मगही का प्रभाव परिलक्षित होता है। कवि बैजनाथ टेकारी राज्य के राजा मोदनारायण की विधवा पत्नी रानी अश्वमेध कुँवर के विशेष कृपापात्र थे। उनके अनुरोध पर ही इन्होंने 'गया गदाधर वास-प्रकाश' नामक रचना लिखी थी। इनकी रचनाओं पर विशेष रूप से विस्तृत अध्ययन की आवश्यकता है।

२७. **भारामल (९९)**—'सीलकथा' के रचयिता श्रीभारामल जैनकवि हैं। इनकी रचनाएँ अप्रकाशित हैं। ग्रन्थ की भाषा राजस्थानी है।

इनकी अन्य रचनाएँ—(१) मुक्तावली-कथा, (२) दर्शन-कथा, (३) कर्मपचीसी, (४) चारुदत्त-चरित्र, (५) सप्तव्यसन-कथा, (६) दानकथा और (७) निशि-भोजन-कथा—भी खोज

में मिली हैं। 'चारुदत्त-चरित्र' के अनुसार कवि का रचनाकाल सं० १८१३ वि० है।[1] कवि के हस्तलेख काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा को खोज में प्राप्त हुए हैं।[2] राजस्थान के जैनशास्त्र-भण्डारों में इनकी रचनाएँ सुरक्षित हैं।[3] श्रीमुनि कान्तिसागर ने इन्हें मध्यप्रदेश के ग्वालियर संभाग के अन्तर्गत 'स्यौपुर' ग्रामवासी बताया है। जैनकवि भारामल की विशेष चर्चा काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा के खोज-विवरणों में द्रष्टव्य है।[4] जैनधर्म के दिगम्बर-सम्प्रदाय में यह रचना समादृत है। जैनशास्त्र-भण्डारों में प्राप्त ग्रन्थकार घासीराम इनके समकालीन और मित्र थे। श्री वेदप्रकाश गर्ग और श्री डॉ० किशोरीलाल गुप्त ने ग्रन्थकार के सम्बन्ध में तथा रचनाओं पर उल्लेखनीय विवेचन किया है।

२८. मतिराम (५४)—कानपुर जिले के तिकवाँपुरवासी प्रसिद्ध कवि; कान्यकुब्ज त्रिपाठी ब्राह्मण; सं० १७०७ वि० के लगभग वर्त्तमान; बादशाह औरंगजेब और बूँदी-नरेश झाऊसिंह के दरबारी कवि थे। इनके और तीन भाई—चिन्तामणि, भूषण और नीलकण्ठ (जटाशंकर) थे। सम्प्रति इनकी निम्नलिखित रचनाएँ मिली हैं—

१. ललितललाम—ना० प्र० स० (काशी) खो० वि०—१९०३, सं० ६७।

२. साहित्यसार— " खो० वि० १९०६—८, सं० १९६ बी०

३. लक्षणश्रृंगार— " खो० वि० ,, सं० १९६ सी०

४. मतिराम सतसई—" खो० वि० १९०९—११, सं० १९६

---

१. दे०—मासिक 'सरस्वती' (मई, १९६३ ई०) में श्रीमुनि कान्तिसागर, उदयपुर का प्रकाशित निबन्ध।

२. दे०—काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा, चौदहवाँ त्रैवार्षिक विवरण।

३. दे०—राजस्थान के जैनशास्त्र-भण्डारों की ग्रन्थ-सूची, भाग ४, पृ० ७६९।

४. दे०—का० ना० प्र० स० खो० वि० १९२३—२५, सं० ५१, पृ० सं० ३०० तथा खो० वि० १९२९—३१, सं० ३९, पृ० सं० १४८।

५. रसराज—ना० प्र० स० (काशी) खो०वि० १९००, सं० ४०
१९०६—८, सं० १९६ ए०
१९०१, सं० ६७।

ग्रन्थ-सं० (रसराज) प्रस्तुत संग्रह में उल्लिखित है। नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को खोज में इसके सात हस्तलेख अबतक मिले हैं।

२९. मलिक मुहम्मद जायसी (३०, ३२, ३३)—जायस-निवासी; प्रसिद्ध सूफी कवि; सं० १५८७ वि० के लगभग वर्त्तमान; इस संग्रह में इनकी प्रसिद्ध रचना 'पद्मावत' की तीन हस्तलिखित प्रतियाँ विवृत हैं। ग्रन्थ का लिपिकाल है—सं० १८७३ वि० (सन् १८१६ ई०) और सं० १८९१ वि०।

३०. महाराज उदित नारायण (१२-ख)—काशी-नरेश। सं० १८४२—१८९२ के लगभग वर्त्तमान। साहित्यिक-समाज के प्रेमी। महाराज बरिबंड सिंह के पुत्र। प्रस्तुत संग्रह में इनकी रचना मिली है। नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को भी इनका ग्रन्थ खोज में मिला है। दे०—खो० वि० १९०४, १९०६ और 'हस्तलिखित हिन्दी-पुस्तकों का संक्षित विवरण', पृ० सं० १५।

३१. राधालाल गोस्वामी (१२)—मथुरा-निवासी, वैष्णव-मत (माध्व सम्प्रदाय) के आचार्य; गायघाट, पटना-स्थित चैतन्य पुस्तकालय के सस्थापक; अनेक ग्रन्थों के प्रणेता, सम्पादक और टीकाकार। साहित्य-रचना-स्थान—बिहार प्रान्त। सं० १९१० वि० के लगभग वर्त्तमान।

३२. रामप्रसाद (८)—बेतिया राज्य (चम्पारन, बिहार) के राजा आनन्दकिशोर के आश्रित कवि। सं० १८७७ वि० के लगभग वर्त्तमान। प्रस्तुत संग्रह में 'आनन्दरसकल्पतरु' नामक रचना मिली है, जो अप्रकाशित है। महाराजा के विशेष आग्रह से कवि ने इस ग्रन्थ की रचना की थी। कवि ने संक्षेप में राजवंश-वर्णन भी किया है। ग्रन्थ की विशेषता यह है कि इसमें नायक के भी उतने ही भेद किये गये हैं, जितने नायिकाओं के।

३३. **रामलाल गोस्वामी** (१११)—'नन्दोत्सव' के ग्रन्थकार श्रीरामलाल गोस्वामी व्रजवासी (मथुरा) थे। ये वैष्णव-मत (माध्व सम्प्रदाय) के आचार्य और संस्कृत तथा हिन्दी के सम्मानित विद्वान् और लेखक रहे हैं। सं० १९२० वि० के लगभग वर्त्तमान।

३४. **रामलालशरण वैद्य** (२८)—जानकी-कुंज (अयोध्या)-वासी वैष्णव; नवोपलब्ध ग्रन्थकार। इनका ग्रन्थ 'दृष्टान्तप्रबोधिका' है। ग्रन्थ में स्थान-स्थान पर प्रयुक्त 'रामचरन' (शब्द अथवा नाम) से प्रतीत होता है कि इस ग्रन्थ के ग्रन्थकार और ग्रन्थकार-सं० ७ की टिप्पणी वाले ग्रन्थकार एक ही हैं। ग्रन्थ का लिपि-काल सं० १८९९ वि० (सन् १८४२ ई०) है।

३५. **रामवल्लभशरण** (९०)—'प्रिया प्रीतम रहस्य' के रचयिता श्रीस्वामी रामवल्लभ-शरण नवोपलब्ध हैं। इनकी रचना में रचनाकाल अथवा लिपिकाल का उल्लेख नहीं हुआ है। ग्रन्थ अप्रकाशित है।

३६. **लालचदास** (१०५, १०६)—बरेली-निवासी। जाति के हलवाई। भागवत पुराण (दशम स्कन्ध) के आधार पर रचित 'हरि-चरित्र' के ग्रन्थकार। सं० १५२७ वि० (सन् १४७० ई०) के लगभग वर्त्तमान। इनकी शिवसिंह-सरोज' और 'मिश्रबन्धु-विनोद' में मात्र नाम-चर्चा। नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को भी खोज में इनके हस्तलेख मिले हैं। दे०—खो० वि० १९२३—२५, सं० २३८; खो० वि० १९२६—२८, सं० २६१। बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना को इनके चार हस्तलेख प्राप्त हुए हैं। दे०—परिषद् से प्रकाशित 'प्राचीन हस्तलिखित पोथियों का विवरण', खण्ड १, ग्रं० सं० १। इनके सम्बन्ध में पूरा अनुसन्धान अभी नहीं हुआ है।

इनके रचित ग्रन्थों में 'हरिचरित' का प्रथम खण्ड, छह पाण्डुलिपियों के पाठभेद-सहित, बि० रा० भा० प०, पटना से प्रकाशित हो चुका है। ग्रन्थ के पच्चीस अध्यायों पर पाठ-सम्पादन के कार्य हो चुके हैं। विश्वभारती (शान्ति-निकेतन) से भी सम्भवतः इनके सद्यः प्रकाशन की योजना है। गोस्वामी तुलसीदास से पूर्ववर्त्ती; अवधी-भाषा में तथा दोहे-चौपाइयों

में रचित कृष्णभक्ति-शाखा का यह सम्भवतः प्रथम प्रबन्ध-काव्य है। 'हरिचरित' का शेष खण्ड भी बि० रा० भा० प०, पटना से पाठ-सम्पादन के साथ शीघ्र प्रकाशित होनेवाला है। सन्त लालचदास की दूसरी रचना 'विष्णुपुराण' भी खोज में मिली है।

३७. विद्यारण्यतीर्थ (३१, ५०)—'पञ्चकोश-सुधा' और 'युगल-सुधा' के ग्रन्थकार श्री विद्यारण्यतीर्थ जी 'विद्यारण्य स्वामी' नाम से भी खोज में मिले हैं। इनकी रचना अप्रकाशित है। ग्रन्थकार का समय सं० १८९८ वि० (सन् १८४१ ई०) है।

३८. सरदार कवि (६८)—ललितपुर (झाँसी)-निवासी, काशी-नरेश महाराजा ईश्वरी प्रसाद के आश्रित। सं० १९०३ वि० के लगभग वर्त्तमान। ८ (आठ) ग्रन्थों के प्रणेता। इनके अन्य ग्रन्थ नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को खोज में मिले हैं।

३९. तुलसीदास (१०३)—'राधा-सुधानिधि' की 'सुधानिधि-सार' टीका के रचयिता राधावल्लभ-सम्प्रदाय के भक्तकवि हैं। इन्होंने अपनी रचना में अपने को प्रसिद्ध कवि हितहरिवंश का शिष्य अथवा उनके मन्दिर का पुजारी बताया है। ग्रन्थ में रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख नहीं है। विशेष सूचना के लिए देखिए—ग्रं० सं० १०३ की टिप्पणी।

४०. सुन्दरदास (७५, ७६)—दादूजी के शिष्य। शार परमानन्द के पुत्र। खण्डेलवाल वैश्य। द्यौसा (जयपुर-राज्य)-निवासी श्रीसुन्दरदास जी प्रसिद्ध कवि और ग्रन्थकार हैं। इनका जन्मकाल सं० १६५३ वि० है और मृत्यु सं० १७४६ वि० में हुई। 'सवैया' के अतिरिक्त इनके द्वारा रचित अन्य २० (बीस) ग्रन्थ नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को खोज में मिले हैं। प्रस्तुत संग्रह में इनके दो हस्तलेख हैं।

४१. सुन्दरलाल गोस्वामी (१०८, ११५, ११६, ११७, ११८, १२०, और १२२)—श्रीगोस्वामी सुन्दरलालजी वैष्णव-सिद्धान्त (माध्व सम्प्रदाय) के आचार्य हो चुके हैं। प्रस्तुत संग्रह में इनके द्वारा रचित, सम्पादित अथवा अनूदित छह ग्रन्थ हैं। ग्रन्थों में रचनाकाल नहीं

दिया हुआ है । उन्नीसवीं सदी के प्रारम्भ में इनका स्थितिकाल माना गया है । इनकी कुछ रचनाएँ प्रकाशित भी हुई हैं ।

४२. सूरजदास (४७)—'रामजन्म' (कथा) के रचयिता श्रीसूरजदास की रचना अप्रकाशित है। रचना से प्रतीत होता है कि इनकी साहित्य-भूमि बिहार है। इनके ग्रन्थ 'रामजन्म' के आठ हस्तलेख खोज में मिले हैं। इनकी एक और रचना 'एकादशी-माहात्म्य' नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को खोज में मिली है। दे०—खो० वि० १९२३–२५, सं० ४१७; खो० वि० १९२६–२८, सं० ४७३ और दे०—बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् की खोज-विवरणिका (खं० १), ग्रं० सं० ४५ (क)। इनके सम्बन्ध में अनुसन्धान अभी नहीं हुआ है।

इस रचना का पाठ-सम्पादन-सहित प्रकाशन बि० रा० भा० प०, पटना से हो चुका है।

४३. सूरदास (३९, ६३, ८०, १००)—हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि, वल्लभ-सम्प्रदाय के वैष्णव भक्त और अष्टछाप के कवियों में एक; व्रज-निवासी; सं० १५४० से १६२० तक वर्त्तमान। इनके निम्नलिखित ग्रन्थ इस खोज में मिले हैं :

सूरसागर　२ प्रतियाँ सं० १९१३ वि०, सन् १८५७ ई०;
विनयपत्रिका　　　　सं० १९२४ वि०

नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को इनके अन्य ग्रन्थ भी खोज में प्राप्त हुए हैं। 'सूरसागर' का एक और हस्तलेख बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् (पटना) को खोज में उपलब्ध हुआ है और वह परिषद् के संग्रहालय में सुरक्षित है, जिसका लिपि-काल सं० १८२५ वि० है। देखिए—वि० रा० भा० प० की खोज-विवरणिका, खण्ड १, तृ० सं० ग्रं० सं० ४३।

महाकवि सूरदास का समय सामान्यतया सं० १५३५ से १६४० वि० तक माना जाता है।[1] सूरदास के जीवन के एक सौ वर्ष से ऊपर के इस काल में इब्राहीम लोदी, शेरशाह सूरी,

---

१. 'सूर की काव्य-साधना' : नेशनल पब्लिशिंग हाउस, २३, दरियागंज, दिल्ली—६; गोविन्दराम शर्मा, पृ० सं० २।

हुमायूँ, अकबर आदि बादशाहों ने दिल्ली पर अधिकार जमाया।[1]

मूल चौरासी वार्त्ता में लिखा है—"सूरदासजी ने सहस्रावधि पद किये हैं ताको सागर कहिये सो जगत में प्रसिद्ध भये।" हरिराय-कृत भावप्रकाशवाली सूरदासजी की वार्त्ता (प्रसंग १०) में कहा गया है—

"सो तब सूरदासजी ने मन में विचारे, जो मैं तो मन में सवा लाख कीर्त्तन प्रकट करिवे को संकल्प कियो है। सो तायेंतें लाख कीर्त्तन तौ प्रकट भये हैं सो भगवत इच्छातें पच्चीस हजार कीर्त्तन और प्रकट करने हैं।"

इसी वार्त्ता के प्रसंग १० में आगे लिखा है—

"सूरदासजी, तुमने जो सवा लाख कीर्नन को मनोरथ कियो है सो तो पूरन होय चुको है, जो पच्चीस हजार कीर्तन मैंने पूरन करि दिए हैं ताय तुम अपने कीर्तन को चोपड़ा देखौ……।" इन पंक्तियों से यही ज्ञात होता है कि सूरदास ने सहस्रावधि अथवा एक लाख पदों की रचना की थी। उन्होने सवा लाख पदों की रचना का संकल्प किया था।[2]

भक्तकवि सूरदास के सम्बन्ध में शोध के निम्नलिखित बिन्दु भी विचारणीय हैं—

(क) अन्तःसाक्ष्य

सूरसारावली, साहित्य-लहरी, सूरसागर और सूरदास के कतिपय स्फुट पदों में पाई जानेवाली सूरदास की आत्म-विषयक उक्तियाँ।

(ख) बाह्यसाहित्य

अधोलिखित पाँच वर्गों में—

१. वार्त्ता-साहित्य, २. साम्प्रदायिक साहित्य, ३. सम-

१. 'सूर की काव्य-साधना': नेशनल पब्लिशिंग हाउस, २३, दरियागंज, दिल्ली-६; गोविन्दराम शर्मा, पृ० सं० २। पृ० सं० ३।

२. उपर्युक्त, पृ० सं० ५७-५८।

कालीन तथा परवर्त्ती भक्तों की रचनाएँ, ४. विविध इतिहास-ग्रन्थ और ५. आधुनिक आलोचनात्मक साहित्य।

१. **वार्त्ता-साहित्य में**—१. चौरासी वैष्णवन की वार्त्ता, २. निजी वार्त्ता, ३. श्रीहरिराय-कृत भावप्रकाश।

२. **साम्प्रदायिक साहित्य में**—१. वल्लभ-दिग्विजय, २. संस्कृत वार्त्तामणिमाला, ३. अष्टसखामृत, ४. सम्प्रदाय कल्पद्रुम, धौल और वैष्णवाह्निक पद (जमुनादास-कृत)।

३. **समकालीन और परवर्त्ती भक्तों की रचनाएँ** : भक्तमाल—नाभादास-कृत; भक्त नामावली—ध्रुवदास; रामरसिकावली—रघुराज सिंह; भक्त-विनोद—कवि मियाँ सिंह; नागर-समुच्चय (नागरीदास)।

४. **विविध इतिहास-ग्रन्थ**—आईने-अकबरी, खोज-रिपोर्ट (का० ना० प्र० स०), शिवसिंह-सरोज, ग्रियर्सन, मिश्रबन्धु-विनोद, आ० रा० शु० का इतिहास, डॉ० रा० कु० व० का इतिहास, आ० ह० प्र० द्वि० का इतिहास आदि।

मूल चौरासी वार्त्ता के अनुसार सूरदास महाप्रभु वल्लभाचार्य (सं० १५३५—१५९२ वि०) से गऊघाट पर भेंट होने के समय संन्यासी-देश में अपने सेवकों के साथ-साथ रहते थे। इससे प्रकट होता है कि उस समय सूरदास कम-से-कम प्रौढावस्था के निकट अवश्य रहे होंगे। 'वल्लभ-दिग्विजय' के अनुसार यह घटना सं० १५६७ वि० के आसपास की है। सूरदास गोस्वामी विट्ठलनाथ जी के ब्रजवास-काल में जीवित थे तथा उन्हें गोस्वामीजी का पर्याप्त सत्संग प्राप्त हुआ था। गोस्वामीजी सं० १६२८ वि० में स्थायी रूप से गोकुल में रहने लगे थे। ब्रज के जिस वैभव का संकेत सूरदास ने किया है और परोक्ष रूप से उसका श्रेय श्रीविट्ठलेश्वर को दिया है, उसे देखते हुए यह अनुमान हो सकता है कि सूरदास सं० १६३८ वि० या कम-से-कम १६३४ वि० के बाद तक जीवित रहे होंगे। सम्प्रदाय-प्रवेश के ७३ वर्ष बाद उनका देहान्त हुआ। सम्प्रदाय-प्रवेश के समय उनकी अवस्था ३०-३२ वर्ष अनुमान करने से उनका

जन्म सं० १५३५ वि० के आसपास माना जा सकता है, जो सम्प्रदाय में प्रचलित जनश्रुति के अनुसार है। अकबर से सूरदास की भेंट सं० १६३२-३३ वि० में हुई होगी। गोस्वामी विट्ठलनाथ से भेंट करने का भी अकबर का यही समय था। सूरदास शतायु होने के बाद सं० १६४० वि० के लगभग गोलोकवासी हुए होंगे।[1]

सूरदास की जीवनी के अध्ययन-क्रम में निम्नलिखित आधार-सामग्री प्राप्त होती है—१. सूरदास की रचनाएँ, २. चौरासी वैष्णवन की वार्त्ता, ३. हरिराय के भावप्रकाश-सहित वार्त्ता, ४. अन्य वार्त्ता-साहित्य, ५. वल्लभ-दिग्विजय—गोस्वामी यदुनाथ, ६. भक्तमाल—नाभादास, ७. भक्तविनोद,—कवि मियाँ सिंह, ८. रामरसिकावली—महाराज रघुराज सिंह, ९. भक्तनामावली—ध्रुवदास, १०. नागरसमुच्चय—नागरीदास, ११. व्यासवाणी—हरिदास व्यास, १२. आईने-अकबरी, १३. मुंतखब्बुत्तवारीख, १४. मुंशियाते अबुलफजल, १५. मूलगुसाईंचरित तथा १६. जनश्रुतियाँ।[2]

अन्य सामग्री–भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, गार्सा द तासी, ग्रियर्सन, इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका और श्रीराधाकृष्ण के लेख।

सूरदास की तीन प्रसिद्ध रचनाएँ हैं— १. सूरसागर, २. सूरसागर-सारावली और ३. साहित्य-लहरी।[3]

नागरी-प्रचारिणी सभा, वाराणसी के हस्तलिखित पुस्तकों के विवरण में 'सूरसागर' के अतिरिक्त अन्य निम्नलिखित रचनाओं का परिचय दिया गया है—

१. व्याहलो—विवाह-सम्बन्धी २३ पद्य[4],

---

१. दे०—'सूरदास' : डॉ० व्रजेश्वर वर्मा, एम्० ए०, पी०-एच्० डी०, डी० फिल्०; प्रकाशक हिन्दी-परिषद्, प्रयाग-विश्वविद्यालय, प्रयाग, द्वितीय संस्करण, पृ० सं० २।
२. उपर्युक्त, पृ० सं० १६, १७।
३. उपर्युक्त, पृ० सं० ४८-४९।
४. खोज-रिपोर्ट १९०६, १९०७, १९०८, पृ० ३२३।

२. पद-संग्रह—सामान्य धर्मोपदेश-सम्बन्धी ४१७ पद्य [१];

३. दशम स्कन्ध-टीका—भागवत के दशम स्कन्ध की कथा के १९१३ पद्य [२],

४. नागलीला—कालियदमन की कथा, ४० पद्य [३];

५. भागवत दशम स्कन्ध के अतिरिक्त भागवत के शेष ११ स्कन्धों की कथा, पद्य-सं० ११२६ [४];

६. सूरपचीसी—प्रेम की महत्ता-सूचक २५ दोहे [५];

७. गोवर्द्धनलीला बड़ी—गोवर्द्धन-धारण-सम्बन्धी ३०० पद्य [६];

८. प्राणप्यारी—राधाकृष्ण-विवाह-सम्बन्धी ३२ पद्य [७];

९. सूरसागरसार—रामकथा और रामभक्ति-सम्बन्धी ३७० पद्य [८];

१०. सूरदासजी के दृष्टिकूट (सटीक), असम्पूर्ण [९];

११. सूरदासजी का पद [१०];

सूरदासजी से सम्बन्धित निम्नलिखित निबन्ध विवेचनीय हैं :

१. सूरसागर की भूमिका के रूप में भारतेन्दु का लेख।
२. भक्तशिरोमणि महाकवि सूरदास (नलिनीमोहन सान्याल)
३. सूरसाहित्य (डॉ० ह० प्र० द्वि०)
४. सूरदास (आ० रा० च० शु०)
५. सूरनिर्णय (प्रभुदयाल मित्तल तथा द्वारिकादास पारीख)
६. सूरसौरभ (डॉ० मुंशीराम शर्मा)
७. अष्टछाप और वल्लभ-सम्प्रदाय (डॉ० दी० द० गुप्त)

---

१. खोज-रिपोर्ट, पृ० ३२४।
२. वही, पृ० ३२४।
३. वही, पृ० २३३।
४. खो० रि० १९१२—१४, पृ० २३३।
५. वही, पृ० २३३।
६. खो० रि० १९१७—१९, पृ० ३७२।
७. वही, पृ० ३७३।
८. खो० रि० १९०९—११, पृ० ४२०।
९. खो० रि० १९००, पृ० २०।
१०. खो० रि० १९०२, पृ० ८२।

८. सूरदास (डॉ० व्रजेश्वर वर्मा)
९. सूरसाहित्य की भूमिका (डॉ० रामरतन भटनागर)
१०. महाकवि सूरदास (डॉ० नन्ददुलारे वाजपेयी)
११. सूर और उनका साहित्य (डॉ० हरवंशलाल शर्मा)

सूरदास की रचनाएँ :

(१) सूरसारावली, (२) साहित्य-लहरी, (३) सूरसागर, (४) भागवत-भाषा, (५) दशम स्कन्ध-भाषा, (६) सूरसागर-सार, (७) सूररामायण, (८) राधा रसकेलि कौतूहल, (९) गोवर्द्धन-लीला (सरस लीला), (१०) मानलीला, (११) दान-लीला, (१२) नागलीला, (१३) भँवरगीत, (१४) प्राण-प्यारी, (१५) व्याहलो, (१६) सूरशतक, (१७) दृष्टिकूट के पद, (१८) सूरसाठी, (१९) सूर-पचीसी, (२०) सेवाफल, (२१) सूरदास के विनय आदि के स्फुट पद, (२२) हरिवंश-टीका (संस्कृत), (२३) एकादशी-माहात्म्य, (२४) नल-दमयन्ती, (२५) रामजन्म।

सूरदास की उपर्युक्त २५ रचनाओं में सूरसारावली, सूर-सागर और साहित्य-लहरी को ही सूरदास का प्रामाणिक ग्रन्थ माना जाता है। इन पच्चीस रचनाओं में से अनेक तो सूरसागर के ही अंश माने जाते हैं। ऐसा लगता है कि सूरदास के पदों एवं उनके नाम से प्रचलित पदों के अनेक हस्तलिखित संग्रह विभिन्न पुस्तकालयों तथा विद्वानों के पास सुरक्षित थे और उनमें से अनेक हस्तलिखित संग्रह सूर के नाम से अलग ग्रन्थों के रूप में प्रसिद्ध हो गये हैं।

हरिवंश-टीका—यह संस्कृत रचना है। कैटेलोगस कैटेलोगोरम में इसको सूरदास-कृत होना लिखा है।[१]

सूरसारावली—यह रचना नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ और वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई से प्रकाशित सूरसागर के आरम्भ में छपी हुई है।

---

१. सूर की काव्य-साधना, पृ० सं० ५९।

सूरसागर के इन दोनों संस्करणों के प्रकाशित होने से पहले श्रीकृष्णानन्द व्यासदेव ने अपने संगीत-ग्रन्थ 'रागकल्पद्रुम' में सूरसागर के पदों के साथ भी सूरसारावली प्रकाशित की थी। इस समय श्रीप्रभुदयाल मित्तल द्वारा सम्पादित सूरसारावली का एक प्रामाणिक संस्करण स्वतन्त्र ग्रन्थ के रूप में उपलब्ध है। सूरसारावली में ११०७ द्वितुकीय छन्द हैं। अग्रवाल प्रेस, मथुरा से प्रकाशित।

सूरसारावली की रचना होली के बृहद्गान के रूप में हुई है। इसमें कुल ११०७ छन्द हैं।

गुजरात के प्रसिद्ध भक्त कवि दयाशंकर उपनाम दयाराम भाई ने सं० १८८० वि० में गुजराती में इसका अनुवाद किया था। सूरसारावली में ११०७ तुक हैं। सं० १६०२ वि० तक सूरदास ने हरिलीला-विषयक जिन कथात्मक और सेवात्मक पदों का गायन किया था, उन्हीं के सैद्धान्तिक सार-रूप उन्होंने 'सारावली' की रचना की थी।[1] सूरसागर की हरिलीलाओं का सिद्धान्त-निरूपण ही सारावली का मुख्य विषय है। यह ग्रन्थ सिद्धान्त-परक है, लीला-परक नहीं।[2]

साहित्य लहरी—रचनाकाल सं० १६१७ वि०। आ० रा० च० शु० ने सं० १६०७ वि० इसका रचनाकाल माना है।

जन्म-संवत्—१५४० वि०, मिश्रबन्धु, आ० शुक्ल और डॉ० रामकुमार वर्मा के अनुसार है। सं० १५३५ वि०, सूरनिर्णय के लेखक दी० द० गुप्त और गोविन्दराम शर्मा के अनुसार है।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, जॉर्ज ग्रियर्सन और महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री ने साहित्य-लहरी के अनुसार इन्हें चन्द्रवरदाई का वंशज ब्रह्मभट्ट माना है।[3]

---

१. सूर की काव्य-साधना, पृ० सं० ६४।
२. वही, पृ० सं० ६३।
३. "प्रथम ही प्रथु जागतें भे प्रगट अद्भुत रूप
ब्रह्मराव विचारि ब्रह्मा राखु नाम अनूप।"

सूरदास को 'वल्लभ-दिग्विजय' में सारस्वत ब्राह्मण, 'संस्कृतवार्त्तामणिमाला' में प्राच्य ब्राह्मण और प्राणनाथ कवि-रचित 'अष्टसखा वार्त्ता' तथा हरिराय-कृत 'अष्टसखान वार्त्ता' में भीसारस्वत ब्राह्मण बताया गया है।

'एकादशी महातम' और 'रामजन्म' अष्टछाप के सूरदास-रचित नहीं हैं।

सूरसागर दो रूपों में उपलब्ध है— (१) संग्रहात्मक और (२) द्वादश स्कन्धात्मक। संग्रहात्मक, सूरसागर का मूल रूप है। द्वादश स्कन्धात्मक में सूरदास के स्फुट पदों का विषयानुसार संकलन है।

हस्तलिखित प्रतियों के आधार पर 'सूरसागर' के निम्न-लिखित संस्करण अबतक प्रकाशित हुए हैं—

(१) नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ से प्रकाशित, (२) वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई से प्रकाशित और काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित। नवलकिशोर प्रेस—संग्रहात्मक, वेंकटेश्वर प्रेस—द्वादश स्कन्धात्मक और का० ना० प्र० स० वाला बारह स्कन्धों में विभाजित और विवरणात्मक, जिसमें ४, ९३६ पद हैं।

साहित्य-लहरी— दृष्टिकूट पदों में रचित एक विशिष्ट रचना। इसमें ११८ पद हैं। चमत्कारपूर्ण शैली में शब्दों के अर्थों का प्रस्तुतीकरण इसमें हुआ है।

साहित्य-लहरी की कोई हस्तलिखित प्रति आज उपलब्ध नहीं है, किन्तु काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा की खोज-रिपोर्ट में सूरदास-रचित 'दृष्टिकूट सटीक' और 'सूरशतक'—इन दो कृतियों का उल्लेख है। सूर के दृष्टिकूट पदों पर एक टीका खड्गविलास प्रेस, बाँकीपुर से सन् १८९२ ई० में प्रकाशित हुई, जिसका संकलन भारतेन्दु हरिश्चन्द्र तथा प्रकाशन बाबू रामदीन सिंह ने किया था। सूरदास के दृष्टिकूटों पर सरदार कवि की टीकावाले संस्करण का नाम 'सूरदास के दृष्टिकूट सटीक' है। इस टीका के अन्त में लिखा है—साहित्य-लहरी का एक

संस्करण महादेव प्रसाद की टीका के साथ पुस्तक-भण्डार, लहेरियासराय, पटना से संवत् १९९६ में प्रकाशित हुआ। वास्तव में यह संस्करण भारतेन्दु द्वारा संगृहीत प्रति का ही रूपान्तर था।[1] साहित्य-लहरी का एक प्रामाणिक संस्करण प्रभुदयाल मित्तल ने साहित्य-संस्थान, मथुरा से प्रकाशित किया है।

बृहद् हिन्दी-ग्रन्थ-सूची, पृ० सं० ७०—सूरदास-भ्रमरगीत-सार, संपा० राजनाथ शर्मा विनोद—संपा० रामचन्द्र शुक्ल, संशोधित सं० १३, सा० से० स० ५; सूरसागर—संपा० नन्ददुलारे वाजपेयी, २ भा० सं० ४, ना० प्र० स०, १२५०, प्र०।

४४. शिव प्रसाद (४, २९, ७१, ७२, ७३, ७४, ७७, ८३)—दरभंगा-राज के दीवान थे; जाति के ब्राह्मण; सं० १९४१ वि० के लगभग वर्त्तमान; रामकथा के कवि। इनकी रचनाएँ अप्रकाशित हैं। प्रस्तुत संग्रह में 'सप्तछप्पै रामायण', 'नन्दमदन हर छन्द रामायण', 'सप्तहरि गीत', 'गीत छन्द रामायण', 'सप्तसोरठा रामायण', 'साहिनी छन्द रामायण', 'हरिहरात्मक हरिवंश-पुराण' और 'संक्षिप्त दोहावली रामायण' नामक इनके दो ग्रन्थ हैं। नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को भी इनके हस्तलेख खोज में मिले हैं। दे०—खो० वि० १९००, ग्रं० सं० ५१। वस्तुतः, इस संग्रह के ग्रन्थकार शिव प्रसाद गया-निवासी श्रीवास्तव कायस्थ थे। इनका रचनाकाल १९४६ वि० है।

४५. शिवदीन कवि (९०)—नवोपलब्ध कवि श्री शिवदीन जी की रचना 'रामरत्नावली' इस खोज में नई है। ग्रन्थ की पंक्तियाँ अथवा कथावस्तु विशेष महत्त्व नहीं रखती हैं। ग्रन्थ में रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख नहीं है।

४६. श्रीभट्ट (५)—'आभास दोहा' के ग्रन्थकार; निमादित्य के शिष्य; वृन्दावन-निवासी; सं० १६०१ के लगभग वर्त्तमान; इस संग्रह में इनकी एक रचना मिली है। नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को भी इनका 'जुगलसत' नाम का हस्तलेख मिला है। दे०—खो० वि०

---

१. सूर की काव्य-साधना, पृ० ७३।

१९००, ग्रं० सं० ३६, ७५; खो० वि० सं० १९०६—८, सं० २३७। यह ग्रन्थ परिषद् को भी खोज में प्राप्त हुआ है। दे०—बि० रा० प० खोज-विवरणिका (खण्ड १), ग्रं० सं० ३७।

इनकी रचना का नाम 'जुगलसत' भी उल्लिखित हुआ है। निम्बार्क-मतानुयायी, राधा और कृष्ण की समान भावना से अर्चना करनेवाले, कृष्ण की मधुर भक्ति से ओत-प्रोत कविता के लेखक श्रीभट्ट ने इस रचना में दोहा और उसके बाद उसके विशिष्ट भाव को गेय पद में व्यक्त किया है। भाव, भाषा और शृंगारिक दृष्टि से राधा-कृष्ण की छवि उपस्थित करने में परम निपुण शब्द-शिल्पी कवि की इस रचना को निम्बार्क मत के माननेवाले 'आदिवाणी' भी कहते हैं।[१] काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा की खोज में कहा गया है—"व्रज के कवियों में राधाकृष्ण का शृंगार-वर्णन करने में ये (श्रीभट्ट) दक्ष थे। आज दिन भी व्रज के प्रमुख मन्दिरों में जब भी राधाकृष्ण का शृंगार किया जाता है, इन्हीं के पद गाये जाते हैं।"[२] कवि की इस रचना (आदिवाणी) के सम्बन्ध में अठारहवीं-उन्नीसवीं शती के निम्बार्क-सम्प्रदाय के गोविन्द स्वामी ने 'हरिगुरु सुयश-भास्कर' नामक रचना की उन्नीसवीं किरण में एक छप्पय इस प्रकार लिखा है—

"आदिबानी श्रीभट्ट प्रभु की जगत उजागर।
महाबानी श्री हरिव्यास देव की सब सुख सागर॥
श्री परशुराम देव की प्रभुजी की बानी।
श्री वृंदावन देव श्री जूकी जांनी॥"[३]

काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा के त्रैवार्षिक (१९४१—४३) खो० वि० के अनुसार श्रीभट्ट अलाउद्दीन के समय में वर्त्तमान थे।[४]

१. दे० 'सरस्वती' (मई, १९६३ ई०) में श्रीमुनि कान्तिसागर का लेख।
२. हस्तलिखित हिन्दी-ग्रन्थों का पन्द्रहवाँ त्रैवार्षिक विवरण (काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा), पृ० सं० ३२७, ग्रं० सं० २०४।
३. दे० १९६३ ई० के मई की 'सरस्वती' में श्रीमुनि कान्तिसागर का प्रकाशित लेख।
४. काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा से प्रकाशित "हस्तलिखित हिन्दी-ग्रन्थों के त्रैवार्षिक विवरण" (१९४१—४३), पृ० सं० १५०।

नई सूचना के अनुसार कवि श्रीभट्ट केशव भट्ट के शिष्य थे। ठाकुर जुगलकिशोर के नाम से कवि ने अपने आश्रयदाता नहीं, अपितु इष्टदेव (राधा और कृष्ण) को स्मरण किया है।[१]

एक मत के अनुसार श्रीभट्ट बादशाह अलाउद्दीन के समकालीन थे।[२] श्रीमुनि कन्तिसागर की स्थापना के अनुसार निम्बार्क-सम्प्रदाय-मान्य साहित्य और आचार्य परम्परानुसार श्रीभट्ट जी सुप्रसिद्ध विद्वान् और निपुण शास्त्रार्थी आचार्य केशव कश्मीरी के शिष्य और महावाणी के प्रणेता हरिव्यास जी के गुरु थे। वृन्दावनदेवाचार्य-रचित 'सम्प्रदाय स्तोत्र' और इनके शिष्य श्रीगोविन्द स्वामी-प्रणीत 'हरि गुरु सुयशभास्कर' के निम्नांकित उल्लेख उपर्युक्त मत का समर्थन करते हैं :

"तस्य केशव कश्मीरी शिष्यो विद्या निकेतनः।
यवनाचार्य सञ्जेता नेता दिग्विजियी गुरुः॥
श्रीमच्छ्रीभट्टनामानं स्वपट्टेऽभिषिक्तवान्।
महाभावेन केनापि राधिकाकृष्णयोः रहः॥
× × × ×

तिनके शिष्य अमित मुखी जानौ केशव कश्मीरी भट मानौ
दिग्जेता नेता सब के रे अनगन पंडित जिनके चेरे॥
भक्त गुणागण सबके नायक बंदौ तिनके पद सुख दायक।
तिनके सिष्यन में अति सायक बंदौ श्रीभट प्रेम प्रदायक॥

संत प्रवर नाभादास जी ने अपने 'भक्तमाल' में गुरुशिष्य केशव और श्रीभट्ट का उल्लेख किया है। समसामयिक अन्य कृतिकारों ने भी इन दोनों का अपनी रचनाओं में आदरणीय स्थान दिया।"[३]

४७. हरदेव (४१)—श्रीहरदेव 'पिंगलसार' के नवानुसंहित ग्रन्थकार हैं। यह कोई विशिष्ट रचना नहीं प्रतीत होती है। ग्रन्थ का लिपिकाल

---

१. श्रीवेदप्रकाश गर्ग का 'व्रजभारती' (वर्ष १५, अंक २, भाद्र, सं०२०१४ वि०) में प्रकाशित लेख से।

२. आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र द्वारा सम्पादित 'हस्तलिखित हिन्दी-ग्रन्थों के त्रैवार्षिक विवरण' (१९४१—४३ ई०), पृ० १५०।

३. दे०—'सरस्वती' (मई, १९६३ ई०) में श्रीमुनि कन्तिसागर का लेख।

सं० १९१३ वि० (सन् १८५७ ई०) है। ये सम्भवतः नागपुर के रघुनाथराव के आश्रित थे। नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को इनके द्वारा रचित 'नायिका-लक्षण' मिला है। दे०—खो० वि० १९०६–१९०८, ग्रं० सं० १७१।

४८ हलधरदास (२५)—'सुदामाचरित्र' के रचयिता हलधरदास बिहार-प्रदेश के मुजफ्फरपुर जिला-वासी थे। ये १९वीं सदी के प्रारम्भ में हुए थे, ऐसा प्रतीत होता है। उपलव्ध ग्रन्थ की प्रति में रचना-काल का संकेत सन्दिग्ध-सा है। ग्रन्थ अप्रकाशित है। कवि पर अभी अनुसन्धान नहीं हुआ है। नई खोज के परिणाम-स्वरूप कवि हलधरदास मुजफ्फरपुर जिले के बिसारा परगने में स्थित पद्मौरा नामक ग्राम में जन्मे थे। मुजफ्फरपुर शहर से लगभग बारह मील दक्षिण, गोरौल स्टेशन से प्रायः दो मील पूरब यह ग्राम अवस्थित है। इनका जन्म सं० १५८२ वि० (१५२५ ई०) के लगभग अनुमित है। इन्हें जगन्नाथ-पुरी जाते समय इस ग्रन्थ की रचना की प्रेरणा मिली थी। हलधरदास बल्यावस्था में शीतला रोग से पीड़ित होकर अन्धे हो गये थे। संस्कृत और फारसी से अभिज्ञ सन्त कवि ने पुराण, शास्त्र और व्याकरण का भी पर्याप्त अध्ययन किया था। ये आजन्म अविवाहित तथा ब्रह्मचर्यव्रतधारी थे। कहा जाता है, इन्होंने इस ग्रन्थ को एक वर्ष में पूरा किया था। ये प्रतिदिन एक-एक छन्द रचते थे और इनके मुंशी रामलाल जी रोज लिख लिया करते थे। ये १०१ वर्षों तक जीवित रहे। इनका मृत्युकाल सं० १६८३ वि० (१६२६ ई०) है। इस ग्रन्थ के अतिरिक्त इनकी अन्य दो रचनाएँ—'शिवस्तोत्र' और 'श्रीमद्भागवतभाषा'—भी मिलती हैं। गया के मन्नूलाल पुस्तकालय में 'सुदामाचरित्र' के ५ और पटना सिटी के चैतन्य पुस्तकालय में २ हस्तलेख सुरक्षित हैं। परिषद् के संग्रहालय में इस पोथी की सात प्रतियाँ संगृहीत हुई हैं। गार्साँ द तासी ने भी इस ग्रन्थकार का उल्लेख किया है।

हारवर्ड विश्वविद्यालय के पुस्तकालय में भी इसकी एक

प्रति संकलित है। कलकत्ता के सुधानिधि प्रेस से इस ग्रन्थ का मुद्रण भी हो चुका है, जो अलभ्य है।

४९. हरिराम (६९)--'श्रीनाथजी के मन्दिर की भावना' ग्रन्थ के रचयिता। हरिराम का यह ग्रन्थ खोज में नया है। ग्रन्थ का लिपिकाल सं० १९७८ वि० (सन् १९२१ ई०) है। ग्रन्थ अप्रकाशित प्रतीत होता है। नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को खोज में इस नाम के अन्य अनेक कवि मिले हैं। सभा की निम्नलिखित खोज-विवरणिकाओं की टिप्पणी द्रष्टव्य है—खो० वि० १९३२—३४ ई०, सं० ८३; खो० वि० १९२९—१९३१ ई०, सं० १४० और १४४। और देखिए—नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) से प्रकाशित 'हस्तलिखित हिन्दी-पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण' शीर्षक ग्रन्थ की पृ० सं० २९६ में 'हरिराय' और 'हरिराम' की टिप्पणी। एक हरिराम, 'व्यास' उपाधि से ख्यात ग्रन्थकार हो चुके हैं, जो इनसे भिन्न नहीं प्रतीत होते हैं। ओरछाधीश मधुकरशाह के राजगुरु, सं० १५५० वि० के लगभग उपस्थित व्यास हरिराम, इस विवरण के उपबृंहित हरिराम और हरिराय कवि एक ही हैं। दे०—हिन्दी-साहित्य-कोश, भाग २ की पृ० सं० ५५४, ५५५।

५०. हितहरिवंश (१२६)—राधावल्लभी (वैष्णव) सम्प्रदाय के संस्थापक हिन्दी के प्रसिद्ध भक्त कवि; सं० १५८०—१६२४ तक वर्त्तमान; वृन्दावन-निवासी; संस्कृत और हिन्दी के ज्ञाता। इनका 'चौरासी पद' नामक ग्रन्थ प्रसिद्ध है। इस खोज में उपलब्ध 'हितवाणी' ग्रन्थ नया है, किन्तु प्रतीत होता है, यह 'चौरासी पद' का ही खण्डित अंश है। नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) की खोज-विवरणिकाओं में दे०—खो० वि०१९००, ग्रं० सं० ८; १९०६-८, ग्रं० सं० १७४; १९०९—११, ग्रं० सं० १२०; १९२३—२५, ग्रं० सं० १६८; १९२६—२८, ग्रं० सं० १७९; १९२९—३१, ग्रं० सं० १५५।

नई खोज के फलस्वरूप वैष्णवभक्ति-सम्प्रदाय में 'राधावल्लभ' पन्थ के प्रवर्त्तक, राधा के अनन्य उपासक, व्यास मिश्र के पुत्र, केशव मिश्र (नृसिंहाश्रम) के भ्रातृज, तारा रानी के आत्मज

हरिवंश का जन्म सं० १५५९ वि० (१५०२ ई०) की वैशाख-शु० एकादशी, सोमवार को मथुरा के निकटवर्त्ती बादगाँव में हुआ था। इनके पूर्वज उत्तरप्रदेश के सहारनपुर जिले के देववन्द नामक ग्राम के निवासी थे। इन्होंने राधा को अपनी इष्टदेवी तथा गुरु माना था। इनके सम्प्रदाय में इन्हें कृष्ण की वंशी का अवतार माना जाता है। रुक्मिणी देवी के साथ विवाह-विधि करके इन्होंने गृहस्थाश्रम में प्रवेश किया था और आदर्श दाम्पत्य-जीवन बिताते हुए एक पुत्री तथा तीन पुत्रों के पिता के आस्पद को प्राप्त किया था।

गोस्वामी हितहरिवंश-लिखित चार ग्रन्थ मिलते हैं। संस्कृत के दो ग्रन्थ—(१) राधासुधानिधि और (२) यमुनाष्टक तथा हिन्दी की दो रचनाएँ—(१) हितचौरासी एवं (२) स्फुटवाणी—अबतक प्रकाश में आ चुकी हैं। 'हितचौरासी' इनकी प्रसिद्ध रचना है, जिसमें चौरासी पदों में व्रजभाषा तथा काव्य-रस का मनोहर और मधुर लालित्य है। राधावल्लभी सम्प्रदाय के सिद्धान्तों के प्रतिपादक चौबीस पदों से युक्त रचना है—'स्फुटवाणी'। गोस्वामी हितहरिवंश ने और इनके अनुयायियों ने अपनी रचनाओं में व्रजभाषा का ही प्रयोग किया है। इनका निर्वाण सं० १६०९ वि० (१५५२ ई०) में हुआ। हितहरिवंश ने अपनी उपासना-पद्धति को प्रचलित करने के लिए सेवाकुंज नामक स्थान में अपने उपास्य इष्टदेव का विग्रह सर्वप्रथम स्थापित किया। सं० १५९१ वि० (१५३४ ई०) में प्रथम पाटोत्सव इसी सेवाकुंज में सम्पन्न हुआ था। लगभग आधी शती तक सेवाकुंज में ही श्रीराधावल्लभ का विग्रह प्रतिष्ठित रहा। सं० १६४१ वि० में अब्दुर्रहीम खानखाना के साथी दीवान या खजांची दिल्ली-निवासी सुन्दरलाल भटनागर ने लाल पत्थर का मन्दिर बनवाया। लाल पत्थर का यह मन्दिर आज भी वृन्दावन में स्थित है। व्रजप्रदेश में औरंगजेब के आक्रमणों के समय मन्दिर से विग्रह को उठाकर कामवन (भरतपुर) ले जाया गया। अँगरेज लेखक ग्राउस ने इस मन्दिर का विस्तृत

वर्णन अपनी 'मथुरा मेमॉयर्स' नामक पुस्तक में किया है।[१] राजा मानसिंह ने पटना सिटी (बिहार प्रदेश) के लल्लू बाबू का कूचा में एक मन्दिर का निर्माण कराया, जिसके सम्बन्ध में कहा जाता है कि यह गोस्वामी हितहरिवंश के वंश के गोस्वामियों को सौंप दिया। उक्त मन्दिर का नाम 'हितहरिवंशवाणी-भवन' है। गोस्वामी व्रजजीवन लाल जी ने बताया कि उनके पिता गो० गोवर्द्धनलाल 'कवि-चूड़ामणि', जिन्होंने कलकत्ता से हिन्दी-पद्य में 'प्रेमपुष्प' नामक साप्ताहिक अखबार निकाला था, इसी मन्दिर में रहते थे। सम्प्रति उनके वंशधर गोस्वामी मधुकर लाल जी मन्दिर तथा ग्रन्थ-संग्रहालय को सुरक्षित रखे हुए हैं।[२] उक्त संग्रहालय से कतिपय हस्तलिखित पोथियाँ प्राप्त हुईं हैं, जो बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के संग्रहालय में संकलित हैं।

१. दे०—हिन्दी-पुस्तक-साहित्य, दूसरा भाग, पृ० सं० ३४५, ३४६ और ३४७।
२. श्रीपरमानन्द पाण्डेय द्वारा प्राप्त सूचना पर आधृत।

श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया (बिहार) के संग्रहालय में संकलित पोथियों के

ग्रन्थकारों की कृतियों के विवरण

१. अन्योक्ति-कल्पद्रुम—ग्रन्थकर्त्ता—दीनदयाल गिरि। लिपिकार—जुगल किसोर। अवस्था—प्राचीन, देशी कागज। पृष्ठ-सं०—३५। आकार १३′ × ६¾″। प्रतिपृष्ठ पंक्ति लगभग—२०। लिपि—नागरी। रचनाकाल—सं० १९१२ वि०, माघ-शुक्ल वसन्त पंचमी, रविवार। लेखनकाल—संवत् १८२२, भाद्र-कृष्ण ७, रविवार। यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में है। पुस्तकालय की क्रम-संख्या क-१ है।

प्रारम्भ की पंक्तियां—"ॐ श्री गणेशाय नमः श्री राधावल्लभाय नमः।
अथ अन्योक्ति कल्पद्रुम ग्रन्थो लिख्यते ॥ कुण्डलिया छंद ॥
बंदो मंगल मैं बिमल ब्रज सेवक सुष दैंन ॥
जो करिवर मुष मूक ही गिरा नचाब सुषैंन ॥
गिरा नचाब सुषैंन सिद्धि दायक सब लायक ॥
पसुपति प्रिय हिय बोध करन निरजरगन नायक ॥
बरनै दीनदयाल दरसि पद द्वंद अनंदौं ॥ लंबोदर मुदकंद देबःदामोदर बंदौं ॥१॥
इति श्लेषमय मंगलम् ॥ अथ कल्पद्रुमाऽन्योक्ति ॥
दानी हो सब जगत मैं एके तुम मंदार ॥
दारन दुष दुषियांन के अभिमत फल दातार ॥
अभिमत फलदार देवगन सेवे हित सों ॥
सकल संपदा सोह छोह किन राषत चित्त सों ॥
बरनै दीनदयाल छांहं तब सुषद वषानी ॥
ताहि सेइ जौं दीन रहै दुष तौ कस दांनी ॥२॥"

मध्य की पंक्तियाँ—"(१७ पृ०) अथ कोकिलाऽन्योक्ति ॥ कोकिल लोचन ललित करि करियन कोप विषाद ॥ भयो कि मूढ़ द्रपोन जो सुनि के पंचमनाद ॥ सुनि कै पंचमनाद द्रबै सुर चतुर विवेकी ॥ तेंन द्रबै जेहि लगै सुषम बानी कौवे की ॥ वरनै दीनदयाल लगे प्रीय सापनिको विल ॥ कहा करेंते रंग भौं न एहे कोकिल ॥५४॥"

अन्त की पंक्तियाँ—"दोहा ।। पंचक यह है प्रेम को रंचक चित्त जो देइ ।। छल वचक वंचे न तेहि दीनदयाल जु सेइ ।।७५।। ग्रंथान्ते मंगलम् ।। मेटन हारे विघनके विघन विनायक नाम ।। रिधि सिधि विद्या उदर तें लंबोदर अभिराम ।। लंबोदर अभिराम सकल सुभगुण हिय धारे ।। और गहन के हेत देत मनु दंत पसारे ।। वरनै दीनदयाल भरयौ अजहूं लो पेटन ।। बक्र तुंड करि काहू चहत ब्रहमंड समेटन ।।७६।। यह अन्योक्ति सुकल्प द्रुम साषा वेद वषानि ।। विरचीदीनदयालगिरिकवि दुजवर सुषदानि ।।७७।। कुंडलिका सु सघनाक्षरी सुषद सुदोहावृत्त ।। हरे सवैया मालिनी मिलि पंचामृत मित्त ।।७८।। यहकल्पद्रुमग्रंथमैमधुर छंद सुचि पंच ।। पंचामृत हिय पान करि जडता रहे न रंच ।।७९।। कर छिति निधि ससि साल मैं माघ मास सित पक्ष । तिथि वसंत जुत पंचमी रविवासर सुभ स्वक्ष ।।८०।। सोभित तेहि औसर विषे वसि कासी सुषधाम विरच्यौ दीनदयाल गिरी कल्पद्रुम अभिराम ।।८१।। अभिमत फल दातार यह विविधि अर्थ को देत ।।ज्यों धुनि गुनि कवि मुदित मन पठिहैं प्रेमसमेत।।८२।। उपालंभ अरुनीति जुत प्रिति रसहुं सुविराग ।। विविधि भांति सुमनसलसैं यामें सुमनसराग ।।८३।। सोभित अति मति थल सुषह सुमन सहित सबकाल ।। अरच्यौ दीनदयाल गिरि वनमालिहि सुरसाल ।।८४।। इत्यन्योक्ति कल्पद्रुम सम्पूर्नम् ।।"

विषय—अन्योक्तियाँ ।

टिप्पणी—ग्रन्थ के प्रारंभ में, पद्य में—'अभिमत फलदार देवगन सेवे' अशुद्ध प्रतीत होता है । वह 'फलदातार देव' होना चाहिए । ग्रन्थ-सं० २ में ऐसा ही है ।

२. **अन्योक्ति-कल्पद्रुम**—ग्रन्थकर्त्ता—दीनदयाल गिरि । लिपिकार—जुगल किशोर लाल । अवस्था—अच्छी । पृष्ठ-सं०—२३ । आकार—१२$\frac{1}{6}$" × ९$\frac{1}{8}$" । प्रतिपृष्ठ पंक्ति लगभग—४० । लिपि—नागरी । रचनाकाल सं०—१९१२ सं० वि०, माघ-शुक्ल वसन्तपंचमी, रविवार । लिपिकाल—'संवत् १९२७ मार्ग मास, सित पक्ष, ८, बुधवार, ता० २३ शन् १२७८ शाल' ।। यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है । पुस्तक की क्रम-संख्या क-२ है ।

प्रारम्भ की पंक्तियाँ—"श्री गणेशाय नमः ।। कुंडलिया छंद बंदी मंगल मै विमल ब्रज सेवक सुषदैन ।। जो करिवरमुख मूकहीं गिरा न चाव सुषैंन ।। गिरा न चाव सुखैन सिद्धि दायक सब लायक ।। पसुपति प्रिय हिय बोध करन निरजरगन नायक ।। बरनै दीनदयाल दरसि पद द्वंद अनंदौं ।।

लंबोदर मुद कंद देव दामोदर बंदौं ।।१।। इति श्लेषमय मंगलम् ।। अथ कल्पद्रुमान्योक्तिः ।। दानी हो सब जगत मै ऐके तुम मंदार ।। दारण दुष दुषियांन के अभिमत फल दातार । अभिमत फलदातार देवगण सेवे हित सौं ।। सकल संपदा सोह छोह किन राषत चित्त सों । बरनै दीनदयाल छांह तब सुषद वषानी ।। ताहि सेइ जौं दीन रहे दुषती कस दानी ।।२।।"

मध्य०—"अथ चातकाऽन्योक्तिः—लागे सर सरवर पर्‌यो करी चोंच घन ओर ।।
धनि धनि चातक प्रेंम तो पन पाल्यौ बर जोर ।।
पन पाल्यो बरजोर प्रान परजत निबाह्यौ ।। कूपन दीनदयाल सिंधुजल ऐक न चाह्यौ । बरने दीनदयाल स्वाति बिन सबही त्यागे ।। रही जनम भरि बूंद आस अजहूं सर लागे ।"

अन्त०—।।२६०।। "दोहा—यह न्योक्ति सुकलपद्रुम साषा वेद बषानि । विरची दीनदयाल गिरि कवि दुजवर सुषदानि । कुंडलिका सुघनाक्षरी सुषद सुदोहावृत्त ।। हरे सबैया मालिनी मिलि पंचामृत मित्त ।। यह कल्पद्रुम ग्रंथ मै मधुर छंद सुति पंच ।। पंचामृत हिय पान करी जडता रहे न रंच ।। कर छिति निधि ससिसाल मै माघ मांस सित पक्ष । तिथि वसंत जुत पंचमी रविवासर सुभ स्वक्ष । सोभित तेहि औसर बिषै वसि कासी सुषधाम ।। बिरच्यौ दीनदयाल गिरि कल्पद्रुम अभिराम । अभिमत फल दातार यह विविध अर्थ को देत ।। ज्यौं धुनि गुनि कवि मुदित मन पठिहैं प्रेंम समेत ।। उपालंभ अरु नीति जुत प्रीति रसहुँ सुविराग ।। विविध भांति सुमनस लसै यामे सुमनसराग ।। सोभित अति मति थलसु यह सुमन सहित सवकाल ।। अरच्यौ दीनदयाल गिरि बनमालिहि सुरसाल ।।२६१।।"

विषय—अन्योक्तियाँ ।

विशेष टिप्पणी—इस ग्रन्थ के लिपिकार श्री जुगल किशोर जी ने ग्रन्थ के अन्त में अपना परिचय यों दिया है—"हस्ताक्षर जुगल किशोर लाल वासिंदे दादपुर प्रगन्ने पचरूखी जिले गया ।। पोथी लिषाया बाबू सीताराम मालिक मोकररीदार मोजे बकसंडा जिले सदर प्रगने सदर ।।"

३ **अनुराग-सुवाम**—ग्रन्थकर्त्ता—दीनदयाल गिरि । लिपिकार—जुगल किशोर लाल । अवस्था—अच्छी, प्राचीन कागज । पृष्ठ-सं०—३५ । आकार १२½" × ९⅙" । प्रतिपृष्ठ पंक्ति लगभग—३७ । लिपि—नागरी । रचनाकाल—सं० १८८८, मधुमास, ९, भौमवार । लिपिकाल—ता० १५ माह फागुन, सन् १२७८ साल । यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है । पुस्तकालय की क्र० सं० क-३ है ।

प्रारम्भ०—"श्री गणेशाय नमः दोहा—श्री पसुपति प्रिय पद पदुम प्रनवो परमपुनीत ।।
मंगल रूप अनूप छवि कवि बरदानि सुगीत ।।१।।

कवित्ता—बिनसै विघिनि वृंद द्वंद पद बंदत हीं मानि अरबिंद जेमिलिंद परसत है ॥
ध्याबत जोगींद गुन गावत कविंद जासु पावत पराग अनुराग सरसत है ॥१॥
भागे डर भाग अंग राग देषि दीनद्याल पूरण प्रताप पाप पुंज धरसत है ॥
ज्योंज्योंहीपिनाकीतनैबक्र तुंड झांकिपरेत्योंत्योंकविताके झुंडवांके दरसत है ॥२॥"

मध्य०—"अथ मधुपुर गमन समय वात्सल्यरस—यसोदावाक् सरणी कवित्त—
प्रान के अधारे मेरे बारे एष धारै चहै भूप के अषारे जहाँ भारे सजे सूरमै ॥
पीर बडी है सरीर वूडति वियोग नीर धीर धरों कैसे करो आषिन के दूरमै ॥
डारो वरू कंस कारागार में जंजीर भरि एरी बीर जाँउ जरि धनधाम धूरमें ॥
जो पै ऐ कन्हैया बलभया दोऊलाल मेरे षेले कहिमैया वैन नैंन के हजूर मैं ॥"

अन्त०—"यह अनुराग सुबाग मैं सुचि पंचम केदार बिरच्यौं दीनदयाल गिरि वनमाली सुबिहार ॥ सुषद देहली पै जहाँ वसत विनायक देव . पश्चिम द्वार उदार है कासी को सुर सेव ॥ तह निवास गणपति कृपा बूझि पर्‍यौ कवि पंथ दीनदयाल गिरिसपद बंदि करयौ यह ग्रंथ ॥ मुनि करनी सुरसरि सरन परि करि कियो प्रकास । गति सुरनी वरनी कविन महिमा धरनी जासु । वसु वसु वसु ससि साल मैं रितु वसंत मधुमास राम जनम तिथि भौंम दिन भयो सुवाग विकास ॥ सुमन सहित यह वाग है यामे संत वसंत । सुष दायक सब काल मै दुज नायक विलसंत । जो कहुं अंग विहीन हुं होय कवित वृत दोष । छमियो सो अपराध मम समरथ कवि तजि रोष ॥ रोहिनीय मुषरद मघा हस्तकमल से जासु । अनुराधा जाके फिरैं श्रवण करो गुण तासु ॥"

विषय—ॠतुओं के वर्णन के साथ ही उद्धव-गोपी-संवाद है । पृ० ९ के पद १०६ में एक खण्डिता कृष्ण के प्रति कहती है—

"आए सकारे स्याम स्रमित हमारे धाम प्यारे अभिराम भौंन भीतर पधारिऐ
कीजिए सयन सेज सारस नयन यह मंद मंद गौव पैंग चंद कोरि बारिऐ ॥
निगुण कहायो किन विगुण धरे हो हार वेद पर पुरुष वषानत विचारिऐ
ब्रज के बिहारी तुम रसिक अपूरब हो जाँउबलिहारी लाल मुकुर निह रिऐ ।"

४. **सप्त छप्पै रामायण**—ग्रन्थकर्त्ता—शिव प्रसाद । लिपिकार—शिव प्रसाद । अवस्था—अच्छी । पृष्ठ-सं०—४ । आकार ५" × ८¼" । प्रति पृष्ठ पंक्ति लगभग—१२ । लिपि—नागरी । रचनाकाल—१९४१ सं० माघ-शुक्ल ५, बुधवार । लिपिकाल—सं० १९४६ का० शुक्ल १०, शनिवार । यह ग्रन्थ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है । पुस्तक की क्र० सं० क-४ है ।

प्रारम्भ०—"श्री गणेशाय नमः । श्री हरये नमः । श्री रामाय नमः । छप्पै
अवध जन्म लै वटी राम जानकी सुशीला ॥ पितु आयसु मुनि वेष, जाइ वन कुत बहु लीला ॥

पृया हरण पुनि गृद्ध मरण सुग्रीव राज पुनि।
हनुमतादि गण गमन दहन लंका सिय सुधि सुनि॥
वर वारिधि बांधि सकीशःदल। उतारि पार परिवार सह॥
रण शिव प्रसाद रावण हत्यौ रामायण बुध जानु यह॥

अथ सप्त छप्पै रामायणः॥ दोहा श्री गुरु गणपति शरण गहि गिरा गौरी गौरीश॥ कहौं कछुक सिय राम यश...।" (इसके बाद खण्डित।)

अन्त०—"दोहा॥ इन्दु वेद ग्रह शुक्र दृग शुभ सम्वत परिमानु॥
माघ शुक्ल तिथि पंचमी बुधवासर बुध जानु॥
इति श्री सप्त छप्पै रामायण शिव प्रसाद कृत संपूर्णम्॥"

विषय—रामचन्द्रजी के जीवन की विशेष घटनाओं के आधार पर संक्षिप्त रचना की गई है।

टिप्पणी—प्रारम्भ का पद अष्ट छप्पं रामायण के रूप में है। उसके बाद के पद सप्त छप्पै में सम्पूर्ण है। ग्रन्थ स्थान-स्थान पर फट गया है। फटे अंश पर कागज साट दिया गया है। अतः पढ़ने में असुविधा होती है। ग्रन्थकार ने अन्त में लिखा है—"हस्ताक्षर शिवप्रसाद बाबू विष्णु हेतु लिखित्वा शुभ सं० १९४६ कार्त्तिक शुक्ल १० सनि॥"

५. आभास दोहा (जुगल मत)[1]—ग्रन्थकर्त्ता—श्रीभट्ट। लिपिकार—...×। अवस्था—अच्छी। पृष्ठ-सं०—७६। आकार—७″ × ५″। प्र० पृ० पं० लगभग—१६। लिपि—नागरी। रचनाकाल—.....×। लेखनकाल—......×। यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० सं० क-५ है।

प्रारम्भ०—"श्री गणेशाय नमः॥ आभास दोहा॥ चरण कमल की दीजिये सेवा सहज रसाल।
घर जायो मोहि जानिकै चेरो मदन गोपाल॥१॥
पद इकताला॥ मदन गोपाल शरण तेरी आयो॥
चरण की सेवा दीजै चेरौ करि राखौं घर जायो॥टेक॥
धनि धनि मात पिता सुत बन्धू धनि जननी निज मोद खिलायो॥
धनि धनि चरण चलत तीरथ को धनि गुरु जिन हरिनाम सुनायो॥१॥
जे नर विमुख भये गोविन्द से जनम अनेक महा दुख पायौ॥
श्री भटके प्रभु दियौ है अभय पद जम डरप्यौ जब दास कहायो॥२॥"

मध्य०—"आभास दोहा॥ जमुना जल में निरख ही झुकी चंचल निज छांहि॥
दोउ जन ठाढे लपटि उर एकहि खुहिया माहि॥१॥

१. श्रीवेदप्रकाश गर्ग ने इस ग्रन्थ का नाम 'जुगल सत' ठहराया है। दे०—'व्रजभारती', वर्ष १५, अंक २ (भाद्रपद, २०१४ वि०), पृ० सं० ७४।

पद इकताला—ठाढ दोउ एक खुहिया माहीं ॥
वंसीबट तट जमुना में निरखत चंचल छाहीं ॥
टेक ॥ कारी कमरिया अन्तर दंपति स्यामा स्यामा लपटाहीं ॥
श्री भट कृष्ण कूट मैं कंचन जल वरषत झलकाहीं ॥१॥९॥९०॥"

अन्त०—"आभास दोहा ॥ तेहि छन की वलि जाउं सखि सखि जिहि छन भावरि लेत ॥
लाख विहारी सांवरे गौर बिहारिनि हेत ॥
पदताल चपक—जै सिय विहारिनि गौर विहारीलाल सांवरे ॥
तेहि छन की बलि जाउं सखी री परत जेहि छन भांवरे ॥
टेक ॥ कंचन मनि मरकत मनि प्रगटी बरसाने नन्द गांवरे ॥
विधि वा रचित न होहि जै श्री भट राधा मोहन नांवरे ॥१००॥ सम्पूर्णम् ॥"

विषय—यह ग्रन्थ राधा, कृष्ण और गोपियों के परस्पर हाव-भाव और कथनोपकथन के आधार पर एक मुक्तक रचना है। एक-एक दोहा के बाद गेय पद है। गेय पद की पुनः टेक है। गेय पद दोहे के आधार पर ही है। इस ग्रन्थ में साहित्य और संगीत दोनों हैं। प्रत्येक टेक में 'श्रीभट' का नाम आया है।

टिप्पणी : १—यद्यपि ग्रन्थ के प्रारम्भ और अन्त में ग्रन्थकार ने नाम-निर्देश नहीं किया है तथापि यत्र-तत्र सभी पदों में 'श्रीभट' नाम आया है। पृ० सं० ६५ में भट केशव प्रसाद का नाम उल्लिखित है—"नित अभंग केलि हित हिय में राग ॥ फाग खेलि चलीं गावत बाद ॥ देखत श्री भट केशव प्रसाद ॥"

२—स्थान-स्थान पर प्रसंग-समाप्ति के बाद लिखा है—"इती श्री आदि व नी जुगल सत व्रजलीला पद सम्पूर्णम् ॥ शुभम् ॥" (पृ० २३ में देखिए) ॥

३—ग्रन्थ में सबसे पूर्व दूसरी लिपि में लिखा है—"बाबू माधो परसाद साहेब का पुस्तक है साकिन मिरजापुर, हाल मोकामी बनारस, महल्ला ज्ञानवापी थाने दसासमेध; मी० वैसाख, वदी १ संमत १९५३।"

६. **अष्टयाम**—ग्रन्थकर्त्ता–देव कवि। लेखक—······×। अवस्था—अच्छी। कागज—देशी, प्राचीन। पृष्ठ-सं०—१३। आकार—८१/६″ × ५१/८″। प्र० पृ० पं० लगभग—३७। लिपि—नागरी। रचनाकाल—···×। लिपिकाल –···×। श्री ग्रन्थ मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० सं० क-७ है।

प्रारम्भ०—"श्री गणेशाय नमः ॥ अथ अष्ट जाम लिख्यते ॥ यथा सवैया ॥
सराहैं जिन्हें सुर सिद्ध समाज जिन्है लषि लाज मरैं रति मार ॥
महा मुद मंगल संग लर्शं। विलशैं भव भार निवार निहार ॥
विराजै त्रिलोक लोनाई के वोक मुनीस मनोहर नूपुर सार ॥
सदा दुलही वृषभानु सुता दिन दूलह श्री वृजराज कुमार ॥१॥
दोहा—दम्पतीन के देव कवि वरणत बिबिध विलास ॥
आठ पहर चौसठ घरी। पूरण प्रेम प्रकास ॥२॥

प्रथम जाम पहिली घरी । पहिले सूर उदोत ।
सकुचि सेज दम्पति तज्यो । वोलत हसत कपोत ।।३"

अन्त०—"कवित्त—जाको मुष देषति ही देषत लहत सुख जाहि देषि देषन की साधना बुझाए री । तासो कीन्ही तीषी डीठि पीठ दीन्ही भौहैं तानि याजी की महा कवानि देत्र कहा पाए री । कहा जानो का सौ कहाँ कौन हरि मेटी मति न्यारे कीन्हो प्रानपति प्यारो जो कन्हाई री ।। कहा कहो मानी मान कीन्हो मन भावन ते सो मैं न जानो मेरो मन मेरो दुखदाईरी १६ ।।"

विषय—इस ग्रन्थ में सवैया, दोहा और कवित्त में विषय का वर्णन है । राधा-कृष्ण को प्रतीक मानकर आश्रित राजा बृजराज कुमार के जीवन का भी वर्णन है । ग्रन्थ में आठ पहर को ध्यान में रखकर ही कविता की गई है । पुस्तक में ब्रजभाषा की शैली है । खड़ीवोली भी कहीं-कहीं स्पष्ट है ।

टिप्पणी—ग्रन्थ प्रारम्भ होने के पूर्व दो पृष्ठों में श्री बलभद्रकृत 'नख-शिख-वर्णन' दे दिया गया है । इनमें केश-पाटी, माँग, वेणी, सिन्दूर, भौंह और पर्यंक का शृंगार-वर्णन है । ग्रन्थ की लिखावट परिष्कृत है ।

७. अष्टयाम—ग्रन्थकर्त्ता—देव कवि । लिपिकार—करण सिंह राजपूत । पुस्तक का कुछ भाग खण्डित । जिल्द बाँधने के समय भी गड़बड़ी हो गई है । पृष्ठ-सं०—४ । आकार—९१/८" × ५" । प्र० पृ० पं० लगभग—१७ । लिपि—नागरी । रचनाकाल—...× । लेखनकाल—सं० १८९२, ज्येष्ठ-कृष्ण ११, शनिवार । यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है । पु० सं० क-८ है ।

प्रारम्भ०—"श्री गणेशाय नमः श्री महादेवाय नमः । श्री गंगाजी शाहाय नमः । श्री लक्ष्माय नमः । सराहै सवै सुर सिधि समाज जिन्हें लखि लाज मर रति मार महा मुद मंगल संगलसैं विलसै भुव-भार निवारन हार विराजै त्रिलोक लोनाइ के वोक सुदेव मनोहर रूप अपार ।
सदा दुलही वृष भानु सुता दिन दूलहः श्री वृजराज कुमार ।।१।।

दोहा—दंपतीन के देव कवि वरनत विविधि विलास ।।
आठ पहर चौसठ घरी पुरन प्रेम प्रकास ।।२।।
प्रथम जाम पहिली घरी पहिले सूर उदोत ।
सकुचि सेज दम्पति तजौ बोलत लसत कपोत ।।३।।"

अन्त०—"दोहा ।। आठ पहर चौसठ घरी बरनि कहि कबि देव ।।
कहत सुनत अरु पठत जे बड़े भाग के तेव ।।१३०।।
इति श्री कवि देव विरचितायां अष्टयाम समाप्तम् ।"

विषय—पूर्व ग्रन्थवत् है । इसकी लिखावट उससे थोड़ी परिष्कृत है ।

टिप्पणी—यह ग्रन्थ विशाल प्रतीत होता है । इसका बड़ा भाग इसमें नहीं है ।

पूरा ग्रन्थ १३० दोहे में है। प्रारम्भ के २५ दोहे हैं। अन्त के १२६ से १३० दोहे ग्रन्थ—समाप्ति तक हैं। बीच के १०१ दोहे नहीं हैं। ग्रन्थ की जिल्द बँधते समय भी ग्रन्थ की समाप्ति २२ दोहे के बाद १२६ से १३० दोहे तक कर दी है। उसके बाद २३ से २५ दोहे तक दिया है। एक पृष्ठ आगे पीछे हो गया है।

८. **आनन्द-रस-कल्पतरु**—ग्रन्थकार—राम प्रसाद। लिपिकार—स्वयं ग्रन्थकार। अवस्था —अच्छी, देशी कागज। पृष्ठ-सं०—८६। आकार—८"×६"। प्र० पृ० पं० लगभग—३७। लिपि—नागरी। रचनाकाल—सं० १८७१, का० शु० ८ रविवार। लेखनकाल—···×। यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० सं० क-९ है।

प्रारम्भ०—"श्री गणेशाय नमः ॥ अथ ग्रन्थ आनन्द रस कल्पतरु लिख्यते ॥
दोहा ॥ जय जय जयति गणेश तव पुन्य पयोधि उदार।
जाचक अभिमत दान प्रद सद आनन्द अगार ॥१॥

दोहा—आश्रित राम प्रसाद की यह विनती शुनि लेहु।
नूतन ग्रन्थ अनन्दमय रचत बुद्धि कर देहु ॥"

मध्य०—पृ० ४३—"अथ उद्वेगलक्षण यथा—दोहा ॥ व्याकुलता अति विरह ते सरसै रुचै न गेह ॥
ताहि कहत उद्वेग है कोविद सहित सनेह ॥ ३४।
अथ नायिका को उद्वेग यथा सवैया मत्तगयन्द ॥ औचक चाहि गई जब तैं मनमोहन मूरति रावरी नीकी ॥ दौरति है तब तैं विरहाकुल कुन्दन सी दुति ह्वै रही फीकी ॥ आंगन मैं षिन भौंन अटा छन सेज महा दुष दाई निजी की ॥ वेतन तीर के पीरनीतें भई ऐसी दशा वृष-भान लली की ॥ अथ नायक को उद्वेग यथा दोहा ॥ प्यारी तोहि बिलोकिगे जब तें मोहनलाल तब तें कछु मन सोहात है धावत विरह विहाल ॥१॥"

अन्त०—"दोहा ॥ जे ते हैं ह्वै हैं जिते। कवि कोविद गुन मान ॥
रस ग्याता रस भोगता सब विधि चतुर सुजान ॥१॥
तिन सौं यह विनती करत कवि प्रशाद कर जोरी ॥
अकथनीय बरनन कियो छमव चूक सब मोरि ॥२॥
है कवि कोन प्रशाद यह जानो चाहै जोइ ॥
छन्द रूप घन अक्षरी नीकैं बांच सोइ ॥३॥
अंतबरन कवित्त को लै उवरो तजि देई ॥
नाम जाति वंशावरी पुर परगनय ठिलेइ ॥४॥
राम भक्ति रसमय सुषद पा कबित्त को अर्थ ॥
अंतर वरन सुचित्र ह जानत शकल समर्थ ॥१॥

संवत रिषि स्वर सिद्धि ससि १८७७ मास निदाघ उदार ॥
राज रजायसु पाइकै लियो ग्रन्थ अवतार ॥२॥
संवत दिन मुनि नाग महि (१८७७), कार्तिक मास सुपंथ ॥
शुक्ल अष्टमी वार रवि भो संपूरन ग्रन्थ ॥३॥ इति"

विषय—इस ग्रन्थ में रस, नायक, नायिका तथा अनुभाव, संचारी भाव आदि के सोदाहरण लक्षण दिये हुए हैं। ग्रन्थ में विशेषतः नायक को स्थान दिया गया है। अन्य ग्रन्थकार अधिकतर नायक से नायिका को अधिक महत्त्व देते हैं। यह ग्रन्थकार और इसके राजा को अच्छा नहीं मालूम होता, अतएव इसकी रचना करनी पड़ी है। जैसा कि ग्रन्थकार ने ग्रन्थ के प्रारम्भ में कहा है—

दोहा—"सम्वत दिन मुनि नाग महि ज्येष्ठ कृष्ण शुभ पाष।
परिवा तिथि कवि दिवस तिन कियो ग्रन्थ अभिलाष ॥१॥
सकल सभा जुत मुदित मन सीस महल सुख पाइ ॥
बैठे कवि कोविद सबै लीन्है निकट बोलाय ॥१३॥
सादर सब सो बचन यह बोले श्री महाराज।
नयो ग्रथ रस कल्पतरु रच्यो चही सुख साज ॥१७॥
आश्रित राम प्रसाद सुनी भूपति वचन विनीति।
विनय कियो केहि भांति सो होय ग्रन्थ की रीति ॥१८॥
श्री श्री श्री आनन्द निधि श्री आनन्द किशोर।
विहित वचन वोले वहुरि देखि दया दृग कोर ॥१९॥
जेते कवि रस ग्रन्थ कृत प्रथम वचन यह चाह।
होत नायिका नायकहि आलंवित श्रृंगार ॥२०॥
तातें अधिकारी दोउ सम रस सम सुख अैन।
तिय बिनु पियहि न चैन हय पिय बिनु तियहि न चैन ॥२१॥
सब कवि बरनत नायिका वहु विधि सहित सनेह।
नायक वहु वरनै नही यह गुनि मन संदेह ॥२२॥
कहे भेद करि ग्रन्थ मे जितने तिय के जोग। तितने नायक होत है महि वरने कवि लोग। तेहि तें जस वहु नायिका वरने परम प्रवीन। कहहु नायिका तैसियै विरचि कवित्त नवीन। वही नाम लक्षण वही नायक मै दरसाय। सजहु कन्त प्रति नायिकहि नूतन ग्रन्थ बनाय ॥२४॥ राज रजाएसु शीस धरि आश्रित राम प्रसाद। रचत ग्रन्थ रस कल्पतरु दायक अति अहलाद। रस ग्याता रस भोगता कवि कोविद गुण मान। आश्रित राम प्रसाद कृत सोधव जानि अजान ॥२६।"

टिप्पणी—१. ग्रन्थकर्त्ता बिहार प्रान्त के चम्पारन जिले के बेतिया राज के राजा आनन्द किशोर के यहाँ रहते थे। कवि ने लिखा है--

पूरा ग्रन्थ १३० दोहे में है। प्रारम्भ के २५ दोहे हैं। अन्त के १२६ से १३० दोहे ग्रन्थ—समाप्ति तक हैं। बीच के १०१ दोहे नहीं हैं। ग्रन्थ की जिल्द बँधते समय भी ग्रन्थ की समाप्ति २२ दोहे के बाद १२६ से १३० दोहे तक कर दी है। उसके बाद २३ से २५ दोहे तक दिया है। एक पृष्ठ आगे पीछे हो गया है।

८. **आनन्द-रस-कल्पतरु**—ग्रन्थकार—राम प्रसाद। लिपिकार—स्वयं ग्रन्थकार। अवस्था—अच्छी, देशी कागज। पृष्ठ-सं०—८६। आकार—८"×६"। प्र० पृ० पं० लगभग—३७। लिपि—नागरी। रचनाकाल—सं० १८७१, का० शु० ८ रविवार। लेखनकाल—···×। यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० सं० क-९ है।

प्रारम्भ०—"श्री गणेशाय नमः ॥ अथ ग्रन्थ आनन्द रस कल्पतरु लिख्यते ॥
दोहा ॥ जय जय जयति गणेश तव पुन्य पयोधि उदार।
जाचक अभिमत दान प्रद सद आनन्द अगार ॥१॥

दोहा—आश्रित राम प्रसाद की यह विनती शुनि लेहु।
नूतन ग्रन्थ अनन्दमय रचत बुद्धि कर देहु ॥"

मध्य०—पृ० ४३—"अथ उद्वेगलक्षण यथा—दोहा ॥ व्याकुलता अति विरह ते सरसैं रुचै न गेह॥ ताहि कहत उद्वेग है कोविद सहित सनेह ॥ ३४। अथ नायिका को उद्वेग यथा सवैया मत्तगयन्द ॥ औचक चाहि गई जब तैं मनमोहन मूरति रावरी नीकी॥ दौरति है तब तैं विरहाकुल कुन्दन सी दुति ह्वै रही फीकी ॥ आंगन मै षिन भौंन अटा छन सेज महा दुष दाई निजी की ॥ वेतन तीर के पीरनीतें भई ऐसी दशा वृष-भान लली की ॥ अथ नायक को उद्वेग यथा दोहा ॥ प्यारी तोहि बिलोकिगे जब तें मोहनलाल तब तें कछु मन सोहात है धावत विरह विहाल ॥१॥"

अन्त०—"दोहा ॥ जे ते हैं ह्वै हैं जिते। कवि कोविद गुन मान ॥
रस ग्याता रस भोगता सब विध्रि चतुर सुजान ॥१॥
तिन सौं यह विनती करत कवि प्रशाद कर जोरी ॥
अकथनीय बरनन कियो छमव चूक सब मोरि ॥२॥
है कवि कोन प्रशाद यह जानो चाहै जोइ ॥
छन्द रूप घन अक्षरी नीकैं बांच सोइ ॥३॥
अंतबरन कवित को लै उवरो तजि देई ॥
नाम जाति वंशावरी पुर परगनय ठिलेइ ॥४॥
राम भक्ति रसमय सुषद पा कबित्त को अर्थ ॥
अंतर बरन सुचित्र ह जानत शकल समर्थ ॥१॥

संवत रिपि स्वर सिद्धि ससि १८७७ मास निदाघ उदार ॥
राज रजायसु पाइकै लियो ग्रन्थ अवतार ॥२॥
संबत दिन मुनि नाग महि (१८७७), कार्तिक मास सुपंथ ॥
शुक्ल अष्टमी वार रवि भो संपूरन ग्रन्थ ॥३॥ इति"

विषय—इस ग्रन्थ में रस, नायक, नायिका तथा अनुभाव, संचारी भाव आदि के सोदाहरण लक्षण दिये हुए हैं। ग्रन्थ में विशेषतः नायक को स्थान दिया गया है। अन्य ग्रन्थकार अधिकतर नायक से नायिका को अधिक महत्त्व देते हैं। यह ग्रन्थकार और इसके राजा को अच्छा नहीं मालूम होता, अतएव इसकी रचना करनी पड़ी है। जैसा कि ग्रन्थकार ने ग्रन्थ के प्रारम्भ में कहा है—

दोहा—"सम्बत दिन मुनि नाग महि ज्येष्ठ कृष्ण शुभ पाष।
परिवा तिथि कवि दिवस तिन कियो ग्रन्थ अभिलाष ॥१॥
सकल सभा जुत मुदित मन सीस महल सुख पाइ ॥
बैठे कवि कोविद सबै लीन्है निकट बोलाय ॥१३॥
सादर सब सो बचन यह बोले श्री महाराज।
नयो ग्रथ रस कलपतरु रच्यो चही सुख साज ॥१७॥
आश्रित राम प्रसाद सुनी भूपति वचन विनति।
विनय कियो केहि भांति सो होय ग्रन्थ की रीति ॥१८॥
श्री श्री श्री आनन्द निधि श्री आनन्द किशोर।
विहित वचन बोले वहुरि देखि दया दृग कोर ॥१९॥
जेते कवि रस ग्रन्थ कृत प्रथम वचन यह चाह।
होत नायिका नायकहि आलंबित शृंगार ॥२०॥
तातें अधिकारी दोउ सम रस सम सुख अंन।
तिय बिनु पियहि न चैन हय पिय बिनु तियहि न चैन ॥२१॥
सब कवि बरनत नायिका वहु विधि सहित सनेह।
नायक बहु वरनै नही यह गुनि मन संदेह ॥२२॥
कहे भेद करि ग्रन्थ मे जितने तिय के जोग। तितने नायक होत है महि वरने कवि लोग। तेहि तें जस वहु नायिका वरने परम प्रवीन। कहहु नायिका तैसियै विरचि कवित्त नवीन। वही नाम लक्षण वही नायक मै दरसाय। सजहु कन्त प्रति नायिकहि नूतन ग्रन्थ बनाय ॥२४॥ राज रजाएसु शीस धरि आश्रित राम प्रसाद। रचत ग्रन्थ रस कलपतरु दायक अति अहलाद। रस ग्याता रस भोगता कवि कोविद गुण मान। आश्रित राम प्रसाद कृत सोधव जानि अजान ॥२६॥"

टिप्पणी—१. ग्रन्थकर्त्ता बिहार प्रान्त के चम्पारन जिले के बेतिया राज के राजा आनन्द किशोर के यहाँ रहते थे। कवि ने लिखा है--

दोहा—"तिलक सवल सूवानिको सूवा वृहद विहार ।
प्रगट मझौवा परगनो चंपारन सरकार ॥३४॥
तहाँ बेतिया नगर वर विवित राज अस्थान ।
सुखी वसहि चारो वरन यथा योग्य धनमान ॥५।"

इसके बाद बड़े ही अच्छे शब्दों में चारो वर्णों के कार्यों तथा उनकी स्थिति का वर्णन किया है। उसके बाद—

"अथ विमल राजवंश वर्णन कवित्त सुघनाक्षरी। स्वस्ति श्री श्री श्री श्री श्री नृप मणि महराज उदित प्रताप जिन्है जानत जहाँन है ॥ ज्ञानमान साहसी सुजान उग्र सेनि सिंह ताके गज साहि भये जीत्यो जिन दानु है ॥ फैलि रही कीरती चहूंधों,चन्द्र चाँदनी सी जाके गुन आजु हूं लो गावैं गुन मानु है ॥ शाके वन्त भये ताके भूपति दिलीप साहि सुजस समूह जाकी दशहु दिशानु हैं ॥ ०॥"

छप्पै "प्रकट भये वध्र् साहि नृपति तिनके सुखकारी ॥
देग तेग में पूर प्रवल जिन शत्रु संघारी ॥
जुगल किशोर महीप भये तिनके गुन आगर ॥
तिनके वीर किशोर सील सागर नय नागर ॥
जग विदित जासु जस कल्पतरु दायक वांछित अति अमल ॥
सुत जुगल प्रकट तिनके भये नृपति शिरोमणि कुल कमल ॥११॥

दोहा—श्री श्री श्री नृप मुकुट मणि महाराज शिर मौर ॥
श्री आनन्द किशोर श्री बाबू नवल किशोर ॥१३॥"

२—इस ग्रन्थ में चम्पारन जिले की बिहारी बोली के भी शब्द हैं। सम्बोधन के लिए 'दई मारी' शब्द पृष्ठ ६७, घनाक्षरी १८ में है। एक स्थान पर 'फुरती' शब्द आया है। 'वेतन-तीर' कामदेव के बाण के लिए प्रयुक्त हुआ है। इसी प्रकार अनेक शब्द हैं।

९. **आलंवनि विभाव (बारहमासा)**—ग्रन्थकार—दिनेशात्मज बैजनाथ सुकवि। लिपिकार—... × । अवस्था—प्राचीन, नीला कागज। पृष्ठ-सं०—२। आकार—८"×५"। प्र० पृ० पं० लगभग—१८। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लेखनकाल—×। यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क-१०

प्रारम्भ०—"श्री गणेशायनमः। सिषवत कत जोग ऊधो विरहिन गोपिन सन ॥
सीतल मंद सुगंधित वात॥ कुसुमित कुसुम अनेक लषात ॥
सुवेलिन ते जनु वरसत आगि॥ विरहिनि वाम वचत नहि भागि।
चैत माधव विन ॥१३॥"

अन्त०—"बैजनाथ जेहि नाथ अगार। भावत ताहि संजोग शींगार।।
सो गावत यह बारह मास।। पावत निसि दिन परम सुपास।।
संग भामिनी को ।।१।।
इति श्रीमत् द्विवेदिना सुकवि दीनेशात्मज
बैजनाथ विरचिते आलंबनिविभावे संजोग शींगारे अलि अलिमति वचनो नाम द्वादश मासि संपूर्णम् ।।"

विषय—आलम्बन विभाव का वर्णन बारह मासों के आधार पर किया गया है। जिस मास में जैसी अवस्था होती है, वैसा ही चित्रण है।

१०. सहज चन्द्रिका टीका (कविप्रिया)—ग्रन्थकार—केशवदास। लिपिकार—दिनेश। अवस्था—अच्छी, प्रारम्भ का एक पृष्ठ नहीं है। पृष्ठ-सं०—८५। आकार—६"×१२"। प्र० पृ० पं० लगभग—२८। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। टीकाकाल—१८३४। लेखनकाल—१८८२। यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० सं० क-११ है।

प्रारम्भ०—लिखावट स्पष्ट नहीं है। ११ दोहे के बाद लिखा है—
"संवत अठदश शत बरस चौंतीसै चितवार।
रची ग्रन्थ रचना रुचिर विजय दशमि सनिवार ।।१२।।
सहज राम कृत चन्द्रिका धर्‌यो ग्रंथ को नाम। पठे गुने पंडित...(आगे अस्पष्ट है) अथ मूल मंगलाचरन दोहा।। गजमुख सनमुख होतही विघन विमुख लै जात ज्यौ पग परत प्रयाग में पाप पहार विलात ।।१।।"

अन्त०—"केशव सोरह भाव शुभ सुवचन मय सुकुमार
कवि प्रिया जे जानियहु रहउ सिंगार ।।९५।।

सुगमनि—सहज राम कृत चन्द्रिका शसि चंद्रिका समान
ताकत ही शंसय तिमिर प्रति दिन करत प्रपान ।।९६।।
इति श्री नाजर सहज राम विरचितायां कविप्रिया टीकायां सहज राम चन्द्रिकायां चित्रालंकार विवेचण नाम षोडशः प्रकाशः ।।१६।।
लोचन वसु वसु चंद सम्वत सावन अधि आसिन वसु तिथि कस्य..." (आगे अस्पष्ट है)

विषय—केशवदास के काव्य-ग्रन्थ 'कविप्रिया' की टीका है। टीका गद्य-पद्यमय प्रश्नोत्तर के रूप में है। उदाहरण भी दिया गया है।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के टीकाकार श्रीसहजराम जी किसी महाराज गर्जसिंह के यहाँ रहते थे। ग्रन्थ के प्रारम्भ में नाम आया है। टीकाकार ने अपने विषय में भी कुछ लिखा है।[1]

---

१. श्रीअगरचन्द नाहटा ने सूचित किया है कि इनके आश्रयदाता गर्जसिंह बीकानेर के महाराजा थे।

११. **कविप्रिया**—ग्रन्थकार—केशवदास। लिपिकार—करनसिंह, राजपूत, गया-वासी। अवस्था—अच्छी, देशी कागज। पृष्ठ-सं०—२१। प्र० पृ० पं० लगभग—१५। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लेखनकाल—श्री संवत् १९००, चैत्र-शुक्ल षष्ठी, गुरुवार।

प्रारम्भ की पंक्तियाँ—"अथ चित्रालकार वर्णनम् ॥ दोहा॥ केशव चित्र कवित मे वूडत परम विचित्र ॥ ताके वुंदक के कनहि बरनत हौं सुनि मित्र ॥१॥ अध उरध विनु विंदु युत जति रस हीन अपार ॥ वधिर अंध गन अगन के गनियत अगनि विचार ॥२॥ केशव चित्र कवित्त में इतने रोष न देषि ॥ अक्षर मोटे पातरे व व ज य एकै लेषि ॥३॥ अति रति मति गति एक करि वहु विवेक युत चित्र। ज्यों न होइ क्रम भंग त्यौं वरनौ चित्र कवित्त ॥"

मध्य की पंक्तियाँ—"अथ व्यस्त समस्त गतागत वर्णनम् ॥ उत्तर व्यस्त समस्त मैं दुऔ गतागत जानि। एकहि अर्थ समस्त गति केशव दास वषानि ॥६७॥ सोरठा। कंठ वसत को सात को ककहा वहु विधि कहै ॥ को कहिए सुर तात को कामी हित सुरत रस ॥६८॥"

अन्त की पंक्तियाँ—"मूल-दोहा। कामधेनु है अदि अरु कल्पवृक्ष पर्यन्त ॥ वरनत केशौदास कवि चित्र कवित्त अनन्त ॥९०॥ इहि विधि केशव जानियहु चित्र कवित्त अपार ॥ वरनत पंथ बताइ मैं दीनो बुद्धि अनुसार ॥९१॥ सुवरन जट्टित पदारथनि भूषण भूषित मानि ॥ कवि प्रिया है कवि प्रिया कवि संजीवनि जानि ॥२॥ पल पल प्रति अवलोकिवो सुनिवो गनिवो चित्र। कवि प्रिया यौं रक्षियो कवि प्रिया ज्यों मित्र ॥९६॥"

विषय—चित्रालंकार वर्णन से प्रारम्भ करके 'निरोष्टक'-वर्णन, मात्रा-रहित एक स्वर चित्र वर्णन, एकाक्षरादि शब्द-वर्ण,न द्व्यक्षरशब्दकथन से षड्विंशति अक्षर-वर्णन तक है। अन्तर्लिपि का और भिन्न-भिन्न नायिकाओं की दशाओं के भी वर्णन हैं।

टिप्पणी : १—इस ग्रन्थ के साथ ही श्रीनाजर सहज-कृत टीका भी है। यहाँ 'नाजर' अशुद्ध प्रतीत होता है। 'नाजर' के स्थान पर 'नाजिर' पढ़ा जाय तो ठीक होगा। टीका का नाम 'रामचन्द्रिका' टीका है। टीका अच्छी है। ग्रन्थ का मूल लिखने के बाद टीका और उदाहरण दिया है। ग्रन्थ के अन्त में टीकाकार टीका के सम्बन्ध में लिखता है—"केशव सोरह भाव शुभ सुवरनमय सुकुमार कवि प्रिया जे जानियहु सो रहउ सिगार ॥ सहज रामकृत चन्द्रिका शसि चन्द्रिका समान ताकत ही संशय तिमिर प्रतिदिन करत प्रयान ॥"

२—ग्रन्थ पूर्ण नहीं है। अन्त के 'इति पोडशोप्रकाशः' से अन्य पन्द्रह

प्रकाशों का भी स्पष्ट संकेत है। ग्रन्थ के अन्त में—"इति श्री नाजर सहजराज विरचितायां कविप्रिया टीकायां सहजराम चन्द्रिकायां चित्रालंकार विवरणनं नाम षोडशो प्रकाशः ॥६॥"

३—ग्रन्थ में चित्रालंकारों और बन्धनों के सचित्र उदाहरण बड़े ही स्पष्ट और अच्छे हैं। जैसे—"जगजगमगतमगतजनरसवसभवभयहरकरकरत अचरचर। कनकवसनतनअसनअनलवडवटदलवसनसजलथलथलकर…।"

४—यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है।

१२. क–रामसतसै (प्रमतिक)—ग्रन्थकार–तुलसीदास। लिपिकार–जुगल किशोर लाल। अवस्था—अच्छी। पृष्ठ-सं०—४०। प्र० पृ० पं० लगभग—१८। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—१२८६ सन्, आश्विन-शुक्ल ९, शुक्रवार।

प्रारम्भ०—"श्री गणेशाय नमः दोहा—नमो नमो श्री रामप्रभु परमातम परधाम जेहि सुमरे सिधि होत है तुलसी जन मन काम।
राम वाम दिसि जानकी लषन दाहिने वोर
ध्यान सकल कल्यान कर तुलसी सुर तरु तोर
परम पुरुष पर धामवर जापर ऊपरन आन
तुलसी समुझत सुनत राम सोई निर्वान
सकल सुषद गुण जासु सो राम कामना हीन
सकल काम प्रद सर्वहित तुलसी कहहि प्रवीन
जाके रोम सुरोम अमित अमित ब्रह्मंड
सो देषत तुलसी प्रगट अमल सु अचल अषंड
जगत जननि श्री जानकि जनक राम शुभरूप
जासु कृपा अति अघ हरन कारण विवेक अनूप"

मध्य—३४ पृष्ठ—"मंत्र तंत्र तंत्री तिया पुरुष अस्वधन पाठ
पति गुण जोग विजोग तें तुरित जोहिऐं आठ
नीच निचाई नहि तजै जो पावहि सतसंग
तुलसी चंदन विटप वसि विन विष भुवन भुजंग
दुरजन दरपन सम सदा करि देषौ हिय दौंर
सन्मुष की गति और है विमुख भये कुछ और"

अन्त०—"जनम जनम तुलसी चहत राम चरन अनुराग
का भाषा का संसकृत विभौ चाहियत सांच ॥
कामजू आवै कामरी कालै करिय कुमांच।
वरन विराद मुक्ता सरिस अर्थ सूत्र सम तूल ॥

सतसैया स्तुति वर विशद गुण सोभा सुभ मूल
वर माला वाला सुमति उर धारै जुत नेह।
सुष सोभा सरसाई नित लहै राम प्रति गेह ॥
भूप कहहि लघु गुनिन कहं गुनी कहहि लघु भूप
महि गिरि गत दोउ लषत जिमि तुलसी षर्व सनूप।
दोहा चारु विचारु चलु परिहरु वाद विवाद
सुकृत सीम स्वारथ अवधि परमारथ मरजाद"

विषय—इस ग्रन्थ में १—प्रेम भक्ति निर्देशो नाम, २—उपासना पराभक्ति निर्देशो नाम, ३—संकेत वक्रोक्ति राम-रस वर्णनं, ४—आतम बोध निर्देशो नाम, ५—कर्म सिद्धान्त योगो नाम, ६—ज्ञान सिद्धान्त योगो नाम, और ७—राजनीति प्रस्ताव वर्णनो नाम, ये सात सर्ग हैं। प्रत्येक सर्ग में सौ-सौ पद्य हैं।

टिप्पणी : १—ग्रन्थ-लेखक ने अपना पूरा परिचय दिया है—"जुगल किशोर लाल, वाशिंदे मौजे दादपुर प्रगन्ने पचरुषि पोथी लिखावल वापू मुकटधारी लाल मालिक मोकररीदार मौजे वकसंडा प्रगन्ने पचरुषी जिले गया।"

२—यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है।

ख—कवित्त लीला प्रकाश—ग्रन्थकार—'महराज उदीतनारायण'। लिपिकार—जुगल किशोर लाल। अवस्था—अच्छी। पृष्ठ-सं०—६। प्र० पृ० पं० लगभग—३५। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—सन् १२८६, आश्विन-शुक्ल ११ (एकादशी), शनिवार ॥

प्रारम्भ०—"श्रीगणेशाय नमः रामचन्द्र वंश वर्णनं ॥ कवित्त ब्रह्म के सनाल कंजु कंज सो भयो है ब्रह्म ब्रह्म के मरीच ताकै कश्यप के भान भौ भानु के यही ॥"

अन्त०—"गायो वालमीकि नीलकण्ठ जो न ठीक ठीक नीक नीक नाटक में घात जो जो कीन्हो है। गायो कागराज पक्षीराज सो सो कहो गयो तहि को भयो है।"

विषय—राम-जीवन-चरित।

टिप्पणी : १—ग्रन्थ के अन्त में लिखा है—"महाराज उदित नारायन मों महाराज रामचन्द्र चरित प्रकास कर दीन्हो है।" इससे ग्रन्थकार के नाम का पता लगता है। ग्रन्थकार ने अपने विषय में और कुछ भी नहीं लिखा है।

२—दोनों क और ख ग्रन्थ एक ही जिल्द में बँधे हुए हैं। दोनों के लिपिकार एक ही व्यक्ति हैं।

३—यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है।

१३. कवित्त रामायण (कवितावली)—ग्रन्थकार—श्रीतुलसीदास जी। लिपिकार—जुगल-केस्वर लाल। अवस्था—अच्छी, देशी, पुराना हाथ का बना कागज। पृष्ठ-संख्या—३३। प्र० पृ० पं० लगभग—४४। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—संवत् १९१९, आषाढ़-शुक्ल दशमी, सोमवार॥

प्रारम्भ०—"ओं श्रीगणेशाय नमः अथ कवित्त रामायन लिख्यते॥—सवैया॥ अवधेस के द्वार सकार गई सुत गोद के भूपति लै निकसे॥ अवलोकि हौं सोच विमोचन को ठगि सी रही जो न ठके धिक से॥ तुलसी मन रंजित अंजन नैन सुखंजन जातक से॥ सजनी ससि मैं समसील उभै नवनील सरोरह से विलसे॥१॥"

अन्त०—"आस्त्रभय रन करि विवस विकल भये निज निज मरजाद मोररी सी डारही॥ संकर सरोष महाँ मारिहीं ते जानियत साहिव सरोष दुनी दीन दीन दारदो॥ नारि नर आरत पुकारत सुनैन कोउ काह देवतन्हि मिलि मोररी मुरी मारिदी॥ तुलसी सभीत पाल सुमिरे कृपाल राम समय सुकरुना सराहि सनकारि दी॥१७९॥ इति श्री कवित्त रामायने श्री गोशाई तुलसीदास कृते उत्तरकांड सम्पूर्णम्॥७॥"

विषय—श्री रामचन्द्र के जीवन से सम्बन्धित प्रसिद्ध मुक्तक-काव्य।

टिप्पणी: १—ग्रन्थ-लेखक ने अन्त में अपना परिचय दिया है—"जुगलकेस्वरलाल। वासींदे अमावाँ प्रगने जररा जिले वीहार पोथी लिखावल वावू सीताराम मालिक मोकररीदार मौजे वकसंडा प्रगने पचरुखी जिले मजकूर॥"

२—यह पुस्तक श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित हैं।

१४. कुण्डलिया—ग्रन्थकार—गिरिधरदास कविराय। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी, देशी कागज। पृष्ठ-सं०—१०। प्र० पृ० पं० लगभग—१८। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लेखनकाल—×।

प्रारम्भ०—"मेटनहारे विघिन के विधिन विनायक नाम
रधि सिधि विद्या उदरते लम्बोदर अभिराम
सकल सुभ गुन हिये धारे और गहन के हेत देत मनु दन्त पसारे
कह गिरिधर कविराय भरयौ अजहूँ ले पेटन
वक्र तुंड करि काह वहत ब्रह्मंड समेटन ॥१॥
जगदम्बा जग तारनी तू सों करो प्रकास
एकवार ऊव डारिये सत्रुन के दृग छार ॥ ···· ।

अन्त० "कहत विलैया बाघ सो हम तुम है इक रंग तुम वस्ती के वन वसो हम वस्ती के संग हम वसती के संग नित भोजने दधी को तुम चठि रणते उतरु हुकुम जब होत धनी को कह गिरधर कविराय सुनो हे जगल रैया दै मोछन पर ताव बाघ सो कहत विलैया ॥७७॥'

विषय—जीवनोपयोगी, उपदेशात्मक पद्य-ग्रन्थ।

टिप्पणी—यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। ग्रन्थ की लिपि प्राचीन है। सुपठ्य नहीं है। पुस्तकालय की सूची में 'श्री आगरदास' की कुण्डलिया भी है, किन्तु यह ग्रन्थ पुस्तकालय में नहीं है।

१५. **गंगालहरी**—ग्रन्थकार—पद्माकर। लिपिकार—जुगलकेस्वरलाल। अवस्था—अच्छी, देशी कागज। पृष्ठ-सं०—११। प्र० पृ० पं० लगभग—१८। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—संवत् १९२०, फाल्गुन-कृष्ण चतुर्दशी।

प्रारम्भ०—"ओं श्री गणेशायनमः॥ कवि पद्माकर कृत गंगालहरी लिख्यते ॥दोहा॥
हरिहर विधि को सुमिरि कै काटहिं कलुष कलेस
कवि पद्माकर रचत है गंगालहरी वेस ॥१॥"

कवित्त—"वईति विरंचि भई वामन पगन पर फैली फैली फीरीइ ससी सबै सुगथ की ॥
आइकै जहान जन्हु जंघा लपटाय फिरी दीननके लीन्है दौर कीन्ही तीन पथ की ॥
कहै पद्माकर सु महिमा कहां लौ कहों गंगा नाम पायो सही सवके अरथ की ॥
चारयौ फल फूली गह गही वह वही लह लही कीरति लता है भगीरथ की ॥
कूरम पै कोल कोल हू पै सेस कुंडली है कुंडली पै फवी फैल सुफन हजार की ॥
कहै पद्माकर त्यौं फन परफ वीहे भूंमि-भंमि पै फली है थिति रजत हार की ॥
रजत पहार पर संभु सुरनायक है संभु पर ज्योति जटाजूट सो अपार की।
संभु जटाजूट पर चंद्र की छुटी है छटा चंद्र की छटान पै छटा है गंगधार की ॥२॥"

अन्त०—"जोग हू मे भोग मै वियोग हूं मे संयोग मे रोग हूं मे रस नैनन को विसराइये
कहै पद्माकर पुरी मे पुण्य सैलन मे फैलन मे फैल फैल गैलन में गाइये ॥
वैरिन मे वंधु मै विथा में वंस वालन मै व्रन मै विषै मै रन हूं मे जहां जाइये ॥
सोच हूं मे सुष मै सुरी मै साहिबी मै कहूं गंगा गंगा कहि जनम बिताइये ॥५३॥"

दोहा—' गिरीस गजानन गिरिसुता ध्याम समुझि स्तुति पंथ ॥
कवि पद्मकार ही कियो गंगा लहरी ग्रन्थ ॥५४॥
श्री गंगालहरी जो जन कहे सुने स्तुति सार
ताको गंगा देति है सदा सुभग फल चार ॥५५॥
इति श्री पद्माकर गंगालहरी समप्तम् ॥"

विषय—गंगा-महिमा-काव्य । स्तोत्र-ग्रन्थ ।

टिप्पणी : १—यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है ।
२—ग्रन्थ-लेखक ने अपना परिचय— 'जुगल केसवरलाल वासीं दे दादपुर प्रगने पचरुषी जीले बिहार" शब्दों में दिया है ।

१६. जगत-विनोद—ग्रन्थकार—पद्माकर कवि । लिपिकार—सुसिग्रिफलान । अवस्था—अच्छी है, मोटे और नीले रंग के कागज पर लिखावट सुन्दर है । पृ०-सं०—५९ । प्र० पृ० पं० लगभग—४९ । लिपि—नागरी रचनाकाल—सं० १९२२, फाल्गुन-शुक्ल नवमी ।

प्रारम्भ०—"श्री गणेशाय नमः ॥ अथ कवि पद्माकर कृत जगतविनोद लिख्यते ॥

दोहा—सिद्धि सदन सुन्दर वदन नंद नंदन मुद मूल ॥
रसिक सिरोमनि सावरे सदा रहहु अनुकूल ॥१॥
जय जय सकति सिला मई जय जय गढ़ आमेर ।
जय जयपुर सुर पुर सदश जो जाहिर चहुं वोर ॥२॥
जय जय जाहिर जगपति जगतसिंह नरनाह ॥
श्री प्रताप नंदनवली रविवंसी कछवाह ॥३॥
जगत सिंह नरनाह को समुझि सवन को ईस ॥
कवि पद्माकर देत है कवित्त बनइ असीस ॥४॥"

कवित्त—"छविन के छव छत्र धारिन के छत्रपति छाजत छटनि छिति छेप के छवैया हो ।
कहै पदमाकर प्रभाव के प्रभाकर दया के दरियावहुहि हू हर के रचैया हो ।
जागते जगत सिंह साहेब सवाइ श्री प्रताप नंदकुल चंद आज रत्रुरैया हो ।
आछे रहौ राज राजन के महाराज कछ कुल कलस हमारे तो कन्हैया हौ ॥५॥
आप जगदीसुर ह्वै जग मैं विराजमान होहूं तौ कवीसुर ह्वै राजते रहत हौं ।
कहे पदमाकर ज्यों जोरत सुजस आपु हौं त्यों तिहार जस जोरि उमहत हौं ।
श्री जगत सिंह महराज मानसिंह वत बात यह कुछ सांची कांची न कहत हौं ॥
आपु ज्यौं चहत मेरी कविता दराज त्यौं मैं उमिरि दराज राज गउरी चरत हौं ॥"

दोहा—"जगत सिंह नृप जगत हित हरष हियै निधिनेहु ।
कवि पदमाकर सो कह्यो सुरस ग्रन्थ रचि देहु ॥७॥
जगत सिंह नृप हुकुम तें पाइ महा मन मोद ।
पदमाकर जाहिर कहत जगहित जगत विनोद ॥८॥

अंत०—दोहा—सबहित तैं विरकत रहत कछू न संका त्रास ।
विहित करत सुनहित समुझि सिसुवत जे हरिदास ।।१२२।।

इति नवरस निरूपनम् ।" (यह दोहा शान्त-रस के उदाहरण में कहा गया है ।)

दोहा—"जगत सिंह नृप हुकुमतें पदमाकर लहि मोद ।
रसिकन के बस करन को कीन्हा जगत विनोद ।।१२३।।
सिद्धि श्री कूर्म्मवंशावतंस श्री मन्महाराजाधिराज राजेन्द्र श्री सवाइ महाराज जगतसिंहाज्ञया मथुरा स्थाने मोहनलाल भट्टात्मज कवि पद्माकर विरचित जगत विनोद नाम काव्ये षष्टमोऽध्यायः समाप्ताः ।।६।। शुभमस्तु ।। सीताराम ।।"

विषय—नवरस और नायक-नायिका का पाण्डित्यपूर्ण वर्णन है। उदाहरण-प्रत्युदाहरण भी दिये गये हैं। जैसे—"अथ नायका लक्षणम् ।।

रस सिंगार को भाव उर उपजहि जाहि निहारि ।
ताही को कवि नायका वरनत विविधि विचारि ।।११।।"

"उदाहरण यथा कवित ।।
सुंदर सुरंग नैन सोभित अनंग रंग अंग अंग फैलत तरंग परिमल के ।
वारन के भार सुकुमारि कौ लचत लंक राजै परजंक पर भीतर महल के
कहै पद्माकर विलोकि जन रीझैं जाहि अंवर अमल के सकल जल-थल के ।।१२।।"

टिप्पणी : १—ग्रन्थ का नाम कवि ने अपने आश्रयदाता महाराज जगत सिंह के नाम पर जगत-विनोद रखा है, किन्तु ग्रन्थ में रस और नायक-नायिका का विशद वर्णन है। ग्रन्थ के लिपिकार ने, अपनी ग्रन्थ-लिपि के विषय में यों लिखा है—

छप्पय—जगत सिंह नृप हुकुम पाइ करि कवि पद्माकर ।
विरच्यो जगत विनोद काव्य-सुन्दर सुष-सागर ।।
जगमगात जग माहि सरस गाय्यो गुन गन ते ।
कह्यौ नायिका भेद सुहाव भाव रस मन ते ।।
लहेउ मोद नृप निरषि करि और सकल कवि जन सुषद ।।
लषि चाव भयउ सिंग्रिफ हृदय लिख्यो पूर्ण करि अति विसद ।।

दोहा—राम नयन रिपु नयन निधि वसु सम्वत मानि ।
सुकुल पक्ष मधु मास शुभ राम जनम तिथि जानि ।।

सोरठा—जगत विनोद हरसाल । जग में जग मग जगि रह्यो
लिख्यो सुसिंग्रिफ लाल । राधा कृष्ण विलास लषि ।।३।। इति शुभः"
"इस ग्रन्थ का प्रारम्भ षडनदी तटनि धरा सम्वत मे किया था सो बहुत काल वितीत होय गया अब श्री राम कृपा ते सम्पूर्ण होय गया ।। इस ग्रन्थ के

विषे:—टवर्गीणकार संभोगी क्षकार कवर्गी खकार तालव्य शकार ए सब वर्ण नहीं लिखे हैं क्यों की भाषा मे कवियों ने निषेध किया है।"

दोहा - दोहा में लक्षण कह्यौ लक्ष कवित्त दोहादि ।। धरयौ सोच करि कवि सुघर समुझि होइ अहलादि ।। दोहा और कवित्त के संख्या लिख्यो सुधारि। रसकर मुनि सब जोरि करि लीजे सुजन विचारि। इति। प्रारंभ १९२५ संवत्। सम्पूर्ण—संवत् १९३३।"

२—ग्रन्थ के लिपिकार ने इस पोथी के अतिरिक्त ७२५ पोथियाँ और भी लिखी हैं। इस पोथी के अन्त में ७२६ संख्या दी हुई है। ऐसा प्रतीत होता है, ग्रन्थ की समाप्ति पर लिपिकार पोथी की संख्या भी लिख दिया करते थे।

३—यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है।

१७. **गीतावली रामायन**—ग्रन्थकार—गो० तुलसीदास। लिपिकार—×। अवस्था—मोटा, हाथ का बना देशी कागज। पृष्ठ-सं०—१४५। प्र० पृ० पं० लगभग—३८। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लेखनकाल—अगहन-शुक्ल पंचमी, सं० १९१० वि०।

प्रारम्भ०—"श्री गनेसजी सहाऐ श्री सुरसतीजी सहाऐ श्री हनुमानजी सहाऐ। श्री पोथी राम गीतावली विनय पट्टरामाएन कीरत गोसाई तुलसी दासजू का ।। वालकांड लीख्यते। श्री रामजी सहाए नमः ।। राग असावरी। आज सुदिन सुभ घड़ी सुहाए ।।५ रूप सील गुन ....प्रकट भए प्रेआग ।।"

अन्त०—"चौदह भुवन चराचर हरषि आए राम राजधानी ।।
मिले भनत जननी गुन पनिजन चाहत पनमानन्द घने
उसि वियोग जनित......................................
वेद पुरान विचारहि सगुन सुभ महाराज अभिषक कियो।
तुलसिदास जिय जानि सुऔसर भगित दान वर मांगलियो ।।"

विषय—श्रीरामचन्द्रजी के जीवन-सम्बन्धी गीत-काव्य।

टिप्पणी : १—इस ग्रन्थ की लिपि अत्यन्त प्राचीन प्रतीत होती है। लिपि नागरी और कैथी के मिले-जुले अक्षरों में है। दोनों लिपियों के मिले-जुले अक्षर होने से पढ़ने में कठिनाई होती है। पोथी में अशुद्धियों का भी आधिक्य है। प्रकाशित प्रतियों से पाठ-भेद भी है।

२—यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है।

१८. **काव्य-मञ्जरी**—ग्रन्थकार—श्री पदुमनदाश। लिपिकार—×। **अवस्था**—अच्छी, हाथ का बना देशी कागज। पृष्ठ-सं०—५। प्र० पृ० पं० लगभग—१६।

आकार—× । लिपि—नागरी । रचनाकाल—× । लिपिकाल—सं० १७४१ वि० ।

प्रारम्भ की पंक्तियाँ—"अथ हास रस होहा ॥ हाँस भाव तसुमूल है हरष संचरत तासु ॥
मन प्रसन्न ते होत है तितहि प्रकट रस हासु ॥

यथा कवित्त ॥ आइ आजु वृष भान सुता गो दुहावन को ॥ सखिन्ह समेत वछरा धनेरे जोरि कै ॥ जेते वग वारि तेह कारि वलवारणी के । पान के रभस सभ गौ तितहि दौरि कै ॥ दोहन को मोहन अके भए गाय धनी ॥ छूटे बछरौ कै कौन तिन्ह को अरोरि कै ॥ अैसे अकुलाने लेरुआ लैनो यो वृषग ने ॥ हंसि सषीगन भयौ राधा मुख मौरि कै ॥२०॥

करुणरस दोहा—अस्थाई यशु सोक है आसू मोह विवर्ण ॥
भूमि पतन विलपन रुदन करुणारस मे वर्ण ॥२१॥"

अन्त की पंक्तियाँ—"दोहा—ए नव रस रुद्भुट जगत महवीर वलवान ॥
जो जेहि को हित अहित सभ तिन्ह को शुनत वषान ॥४१॥

यथा दोहा—स्याम वरण शृंगार को मित्र हांस रस जासु ॥
वैरी करुण शान्त तसु । और सकल सम ताशु ॥४२॥
उज्जवल तन रस हास को हित अद्भुत शृंगार ॥
वैरी करुणा ताहि को अवरहि सभवेवहार ॥४३॥
करुणा कर्वुर रंग है वैरी हास सिंगार ॥
मयत्री मानै सांत तें अपरहि शिष्टाचार ॥४४॥
अरुण रूप रस रौद्र को हिता को है वीर ॥
बैरी सान्त वषानियें औरहि समता थीर ॥४५॥
पीत वरण तन वीर को हास रौद्र ते रीति ॥
भै रस की अद्भुत सुहृद करुण विभत्सहि प्रीति ॥४६॥
सान्त हि संगी को नही सरस माह विरोध ॥
उज्ज्वल तन रुचि जानिवो करउ ताहि को शोध ॥४७॥
इहि विधि नवरस र्वणिअउ कोउ करहिं नहि वाद ॥
पूरण भौ प्रारम्भ यह गुरु द्विज देव प्रशाद ॥४८॥
भूपति शिह दलेल ढिग वरणे पदुमन दाश ॥
जिन्ह महीप को दाश न यश जग मे करत प्रकाश ॥

कवित्त—दान दिये गजराज जिन्है गनिको शकन कै कव शिजत धारैं ॥
शेवक को शिर पाव निरन्तर । जायक को जर वाप के जोरे ।
रीझत हो जिनके गुण मे तिन्ह के कल के कलि दारिद तोरे ॥
सिंह दलेल उदार महीपति देत मे लाषै लगे जेहि थोरे ॥५०॥

दोहा—सभकलिका विगशित भई अमल कुशुम अमलान।
अर्पण कीन्हे विस्नु को जेहि प्रशाद कल्यान ॥५१॥ संख्या ७१६॥
इति श्री पदुमन दाश विरचितायां श्री दलेल सिंह प्रतापार्क प्रकाशित काव्य मंजय्यीं नव रस वर्णनो नाम चतुर्दश कलिका प्रकाशः ॥१४॥

विषय—साहित्य। रस, अलंकारों के सोदाहरण वर्णन।

टिप्पणी—यह ग्रन्थ अपूर्ण है। प्रारम्भ के पृष्ठ नहीं हैं। प्रारम्भ होता है हासरस से। इससे प्रतीत होता है, अन्य रसों के वर्णनवाले पृष्ठ फट गये हैं। दोहे की संख्या भी २० दी गई है। स्पष्ट है कि पूर्व के १९ दोहों के वर्णनवाले पृष्ठ फट गये हैं। ग्रन्थकार ने नवरस के अतिरिक्त अलंकार पर भी रचना की है। ग्रन्थ के अन्त में 'इति चतुर्दश कलिका' से ज्ञात होता है कि पहले और बाद में भी और 'कलिकाएँ' हैं। ग्रन्थकार ने अध्याय के लिए 'कलिका' का प्रयोग किया।

२—यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पुस्तकालय की पु० सं० क-१५ है।

१९ छप्पैरामायण—ग्रन्थकार—गोस्वामी तुलसीदास। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी, मोटा देशी कागज। कहीं-कहीं स्याही पुत गई है। पृष्ठ-सं०—९। प्र० पृ० पं० लगभग—३८। आकार—×। लिपि—नागरी, अस्पष्ट। रचनाकाल ×।—लिपिकाल—×।

प्रारम्भ०—"श्रीगनेस जी सहाय अथ पोथी छप्पैरामायन कृत गोसाई तुलसीदास लीषतेः

श्री गुरुचरन सरोज वंदि गननाथ मनावों जेहि प्रसाद सुभहोइ रामसोइ विनय सुनाबों। आरत भंजनरामनाम मुनि साधुनिगाइ सुमिरत गहिनाथहोत सवठौर सहाइ। श्रीपति रघुपति अवधपति करों नामसोइ जापना कृपा करहू श्रीरामचन्द्रमम हरहु सोकसंतापना ॥१॥ रहि कपोत शिशुपति समेत वैठे तरु पासा गगण उडे सवचान भूमितल दबे मगासा व्याध गहें करवान देषि लोचन जल मोचनि पंछी सो मन महसभीत दम्पति उर सोचति दुष्ट दमन करुणायतन. राषि लेहु सरणा पना कृपा करहु श्रीरामचन्द्र मम हरहु सोग संतापना ॥२॥"

अन्त—"सरणागत के आवते माँगिसिंधु को नीर
लंका दियो विभीषणहि जय जय जय रघुवीर ॥५॥
कुंभकरण घननाद सो राबण कटक सरीर
सकल निसाचर मारेउ जय जय जय रघुवीर ॥६॥

आए अवधपुर सुख दियो मेट्यो पुरजन पीर
सुरभि धर धरनि रह्यौ जय जय जय रघुवीर ॥७॥
सिंहासन वैठे रामजू भयो विमानन्ह भीर
हरषित वरषहि सुमन सुर जय जय जय रघुवीर ॥८॥
मरिजन आनंद धन सकल धरो शिति धीर
तुलशि दास के उर बसो जय जय जय रघुवीर ॥९॥
सप्तपान को दोहरा तुलशी सुरसरि नीर
दरस परस कलि मल हरे जय जय जय रघुवीर ॥१०॥
इति श्री छप्पैरामायण तुलशीकृत सम्पूरण"

विषय—राम-जीवनी।

टिप्पणी—यह ग्रन्थ आधुनिक प्रतीत होता है। प्रारम्भ की पाँच पंक्तियाँ दूसरे अक्षरों में हैं, जो अस्पष्ट हैं। शेष के ऊपर अक्षर स्पष्ट हैं। छप्पै के ३१ पदों और १० दोहों में ग्रन्थ समाप्त है। यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पुस्तकालय में इसकी क्रम-संख्या क-२४ है।

२०. **छप्पैरामायन**—ग्रन्थकार—गोस्वामी तुलसीदास जी। लिपिकार—युगलकिशोर लाल। अवस्था—अच्छी, देशी कागज। पृष्ठ-सं०—४। प्र० पृ० पं० लगभग—४६। आकार—×। लिपि—नागरी। रचना-काल—×। लिपिकाल—आषाढ़-शुक्ल ११ (एकादशी), भौमवार, सं० १९१९ वि० (१८६२ ई०)।

प्रारम्भ०—"श्री गनेसजी साय नमः ॥ उों श्री पोथी छप्पै रामायनकृत गोसाई तुलसीदास जी का लिष्यते ॥छप्पै॥

श्री गुरुचरन सरोज वंदिगननाथ मनावों ॥ जेहि प्रशाद शुभ होइ रामसोई विनै सुनावों ॥ आरत भंजन राम नाम मुनि शाधु न गाई ॥ सुमिरत गाठे नाथ होत सव ढौर सोहाई ॥
श्रीपति रघुपति अवधपति करौं नाम सोइ जापना
कृपा करहु श्री रामचन्द्र मम हरहु शोक संतापना ॥१॥"

मध्य की पंक्तियाँ—"विविध भाँति दय धीर मातु पर वंदि कपीसा।
चले सुभासिष पाय आय भेंटे सव कीसा ॥
चरन चूंमिकर सकल श्रीस पूछि कुसलाइ।
कहत कथा सव भांति आए मधुवन फल षाई ॥
वंदि राम पद पंकजहि सीता सुधि इतिहासना।
कृपा करहु श्री रामचन्द्र मम हरहु सोक संतापना ॥१७॥

विरहानल तनु तपत आपु हित रापति नयना ।
अब विलंबि जनि करिय सीय कहि राजीव नैना
शक्र सुअनमृत हेम जानु तव बान प्रतापा ॥
जान कवंध अरु वालि कहां भयो सो सर चांपा ॥
सीय विनय चरनन्हि परी चूडामनि दिहु आपना ।
कृपा करहु श्री रामचन्द्र मम हरहु सोक संतापना ॥१८॥"

अन्त०—"दोहा—आय अवधपुर सुष दियो मेट्यौ पुर जन पीर ॥
सुरभी घर घर रमि रह्यौ जय जय जय रघुवीर ॥३८॥
सींहासन बैठे रामजू भयो विमानन्ह भीर ।
हरषित वरषहि सुमन सुर जय जय जय रघुवीर ॥३९॥
अरि गंजन आनंद घन सकल धरो मति धीर ।
तुलसीदास के उर वसो जय जय जय रघुवीर ॥४०॥
सप्तपान के दोहरा तुलसी सुरसरि नीर ॥
दरस परस कलि मल हरे जय जय जय रघुवीर ॥४१॥

इति श्री छप्पै रामायन कृत गोशाई तुलसीदास जी का समपूरनम् ॥
सिद्धिरस्तु शुभ मस्तु सुभम् भूयियात् ॥"

शुभ संवत् ॥१९१९॥ शाल समय नाम मिति आषाढ़ मासे सुक्ल पक्षे एकादश्यां दिनौ भौंमवासरां के लीषल भेल ॥ हस्ताक्षर जुगल के स्वर स्थरू लाल । वासींदे आमावाँ प्रगने जररा जीले बीहार ॥"

विषय—रामचरितमानस के सातों काण्डों की गाथा के आधार पर संक्षिप्त रचना ।

टिप्पणी : १—छप्पं ३१ हैं और १० (दस) दोहे हैं । इसमें बाल्य-जीवन नहीं है । ताडका-वध से प्रारम्भ होकर राज्याभिषेक तक की गाथा है । इस ग्रन्थ की लिपि स्पष्ट और सुन्दर है ।

२—यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में संगृहीत है । पुस्तकालय की क्रम-सं० क-२५ है ।

२१. सूक्ष्म रामायण छप्पावली (छप्पैरामायण)—ग्रन्थकार—गो० तुलसीदास । लिपिकार—श्रीशिव प्रसाद । अवस्था—अच्छी, मोटा कागज । पृष्ठ-सं०—११ । प्र० पृ० पं० लगभग—१३ । आकार—× । लिपि—नागरी । रचनाकाल—× । लिपिकाल—कार्त्तिक-शुक्ल ३ (तृतीया), रविवार, सं० १९४६ (१८८९) ।

प्रारम्भ०—"श्री गणेशाय नमः ॥ अथ सूक्ष्म रामायण छप्पावली लिख्यते ॥

दोहा—पहले गुरु को गाइये जो गुरु रच्यो जहान।
पानी से जो पिंड किय अलष पुरुष निर्वाण ॥१॥
विघन विनाशन भय हरण करत बुद्धि परगास।
नाम लेत गणराज को होत शत्रु के नाश ॥२॥
रामचरित रामायण करौं कथा अनुसार।
आसन लीजै परम हित आवहु पवन कुमार ॥३॥

छप्पै—श्री गुरुचरण सरोज वंदि गणनाथ मनावौं ॥
जेहि प्रसाद शुभ होय राम सों विनय सुनावौं ॥
आरत भंजन राम नाम मुनि साधुन गाई ॥
सुमिरत गाठे नाथ होत सब ठौर सहाई ॥
श्री पति रघपति अवधपति करौं नाम मँजापना ॥
कृपा करहु श्री रामचन्द्र मम हरहु शोक संतापना ॥१॥"

ी पंक्तियाँ०—"दोहा—आनँद दायक दुख हरण रघुनायक मति धीर।
रतीराम के उर वसौ जय जय जय श्री रघुवीर ॥८॥
सप्त सोपान को दोहरा जिमि सुरसुरि को नीर ॥
दरस परस कलिमल हरे जय जय जय श्री रघुवीर ॥९॥
इति श्री सूक्ष्म रामचरित्र रामायण छप्पावली सम्पूणम् ॥"

विषय—रामजीवन-सम्बन्धी काव्य।

टिप्पणी : १—इसके प्रारम्भ में पूर्व के ग्रन्थों के अतिरिक्त तीन दोहे अधिक दिये हुए हैं। इन्हें या तो इस ग्रन्थ के लिपिकार ने अपनी ओर से दिया है या अन्य प्रतियों में छूट गया है।

२—इन तीनों ग्रन्थों के अन्त में दिये गये दोहों में नवाँ दोहा जब समाप्त होता है तब 'रतिराम' नाम आता है। 'रतीराम के उर वसौं' इससे प्रतीत होता है कि तुलसीदास के बाद अन्त के दोहों की रचना इस नाम के किसी अन्य व्यक्ति ने की है। यह प्रसंग अनुसन्धेय है।

३—यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पुस्तकालय की क्रम-संख्या क-२६ है।

४—लिपिकार ने ग्रन्थ के अन्त में अपना परिचय देते हुए

लिखा है—"शिव प्रसाद कायस्थ, श्रीवास्तव, गया, निवासी बाबू गंगा विस्नु कायस्थ श्रीवास्तव, गया, क्षेत्र निवासी हेतु लिखितवा श्री राम"

२२. तुलसी सतसई (राम सतसइ)—ग्रन्थकार—तुलसीदास। लिपिकार—सिंग्रिफ लाल, सुजान अवस्था—अच्छी; मोटा, हाथ का बना देशी कागज। पृष्ठ-सं०—७३। प्र० पृ० पं० लगभग—३४। आकार—×। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—आषाढ़-शुक्ल ६ (षष्ठी), सं० १९१५ वि० (१८५८), बृहस्पतिवार।

प्रारम्भ०—"श्री गणेशाय नमः ॥ अथ राम सतसइ लिख्यते ॥ दोहा ॥ नमो नमो श्री राम प्रभु ॥ परमातम पर धाम ॥ जेहि सुमिरत सिधि होत है ॥ तुलसी जन मन काम ॥१॥

राम वाम दिशि जानकी लखन दाहिने ओर।
ध्यान सकल कल्यान कर तुलसी सुर तरु तोर ॥२॥
परम पुरुष परधाम पर जापर अपरण आन।
तुलसी सो समुझत सुनत राम सोई निर्वान ॥३॥
सकल सुखद गुण जासु सो राम कामना हीन।
सकल काम प्रद सर्व हित तुलसी कहहिं प्रवीन ॥४॥
जा कंह रोम सुरोम प्रति अमित अमित ब्रह्मण्ड ॥
सो देषत तुलसी प्रगट अमल सु अचल प्रचण्ड ॥५॥

मध्य० (पृ० ३६)—"रामचरण पहिचान विनु मिटी न मन की दौर ॥
जन्म गवाए बाद ही। रटत पराए पौर ॥६१॥
सुने वरण माने वरण। वरण विलग नहि ज्ञान।
तुलसी सुगुरु प्रशाद ते परे वरण पहिचान ॥६२॥
विटप वेलिगन वाग के। माला कारन जान ॥
तुलसी ताविधि विद विना। करता राम भुलान ॥६३॥
कर्त्तव ही सो कर्म्म है। कहत तुलसी परमान ॥
करण हार करता सोई। भोगो भोग निदान ॥६४॥"

अन्त०—"वरमाला वाला सुमति ॥ उर धारे युत नेह ॥
सुष शोभा सरसात नित्त ॥ लहे राम पद गेह ॥१२७॥
भूप कहहि लघु गुणनि कहं ॥ गुणी कहहि लघु भूप ॥
म्हि गिरिजत दोउ लषत यिमि। तुलसी षर्व स्वरूप ॥१२८॥

दोहा चारु विचारु चलु ॥ परिहरि वाद विवाद
सुकृत सीम स्वारथ अवधि परमारथ मरजाद ॥१२९॥
श्रीमद्गोस्वामी तुलसी दाश विरचितायां सप्त सतिकायां
राजनीत प्रस्ताव वर्णनो नाम सप्तमस्सर्गः ॥७॥

विषय—सात विविध विषयों पर फुटकर रचना।

टिप्पणी : १—यह ग्रन्थ सुपठनीय और अनुसन्धेय है। प्रारम्भ के २५ पदों में ग्रन्थ-रचना का अभिप्राय कहा गया है।

२—१. प्रमभक्ति, २. उपासनापराभक्ति, ३. संकेतवक्रोक्ति, ४ आतमबोधनिर्देश ५ कर्मसिद्धान्तयोग, ६. ज्ञानयोग और ७. राजनीति प्रस्ताव नाम के सात सर्गों में ग्रन्थ समाप्त हुआ है।

३—ग्रन्थ की भाषा रामचरित-मानस जैसी है।

४—यद्यपि ग्रन्थ में रचनाकाल नहीं दिया हुआ है, तथापि पूर्व की भूमिका में ग्रन्थकार ने पृ० २ के २१वें पद में "अहिरसनाथ न धेनुरस। गणपति द्विज गुरुवार ॥ माधव सित सिय जन्मतिथि सतसइआ अवतार ॥२१॥" लिखा है, जिससे रचनाकाल के सम्बन्ध में कुछ अस्पष्ट संकेत मिलता है।

५—ग्रन्थ के लेखक ने ग्रन्थ के अन्त में अपने और लिपिकाल के विषय में लिखा है—

दोहा—"वान धरा निधि इन्दुयुत ॥ सम्बत विक्रम राव ॥
आषाढ़ शुक्ल षष्ठी तिथौ ॥ दिन भृगुवार सुहाव ॥१॥
लिष्यो भाव करि चाव सो ॥ सतसैआ गुणमान।
हेतु आपने पठन को। सिंग्रिफ लाल सुजान ॥२॥

कवित्त—वान महि अंक शशि शम्वत वितीत भयो
देव अंस राजा मानो विक्रम समान के ॥
आषाढसित षष्ठी औ वार भृगुवार वर
ऋतु सुखदाई सो सुहाई है जहान के ॥
नाना प्रसंग जामे तुलसी सतसई जानो
पठत ही जाहि शुभ उदय होत ज्ञान के
लिषे हैं स्वकर ताहि सुन्दर सो आंक ताके
हर्ष युत पूर्ण भयो सिंग्रिफ सुजान के ॥३॥"

६—ग्रन्थ की लिपि स्पष्ट, सुन्दर और सुवाच्य है।

७—यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु०-सं० क-३२ है।

२३. **संक्षिप्त दोहावली रामायण**—ग्रन्थकार—×। लिपिकार—श्रीशिवप्रसाद। अवस्था—अच्छी है। पृष्ठ-सं० २। प्र० पृ० पं० लगभग—१२। आकार—×। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—कार्त्तिक-शुक्ल ११ (एकादशी), सं० १९४६ वि०, रविवार। सन् १८८९ ई०।

प्रारम्भ—"श्री गणेशाय नमः॥ श्री महादेवाय नमः॥ श्री रामाय नमः॥

दोहा॥ सीताराम सरोज पद सुखद मञ्जु धरि सीश॥
रामचरित किञ्चित कहौं करि दोहा पच्चीश॥१॥
मायाधीश जगत जनक देखि दुखित संसार॥
अवध राज दशरथ भवन भये प्रगट वपु चार॥२॥
राम भरत रूपुहन लषन राखे नृप गुरुनाम॥
सुर नर मुनि हर्षित सकल जय जय धुनि सब ठाम॥३॥"

मध्य०—"तात वचन मिसुराज तजि देव काज जिय जानि॥
मुनि सुवेष सिय लषन सह वन गवने दिन दानि॥७॥
केवट कुल उद्धार करि मग लोगन्ह सुख देत।
जाइ चित्रकूटहिं टिके कछु दिन कृपा निकेत॥८॥
फेरि मरत दै पादुंका करि जयन्त इक नयन।
आगे राम चले मिलत मुनि गण करुणा अयन॥९॥"

अन्त०—"तेहि छन रावत सिमहिं हरि गृद्धहिं युद्ध गिराइ।
लंका जाई अशोक बन राखे सियतन राइ॥१२॥
पति वियोग सीता दुखित कुटीं पृया नहीं पाइ।
जोहत वन मृग गृद्धकर कृपा कीन्ह रघुराइ॥१३॥"

विषय—रामचन्द्र की जीवनी।

टिप्पणी: १—ग्रन्थ अपूर्ण है। अन्त के पृष्ठ फटे हुए हैं। ग्रन्थ के प्रारम्भ का 'करि दोहा पच्चीश' प्रकट करता है कि २५ दोहों की रचना की गई है, किन्तु १३वें पृष्ठ के बाद के अंश के फट जाने से ग्रन्थ-पुष्पिका नहीं है।

२—इसीसे ग्रन्थ में लिपिकार का नाम नहीं मिलता है। पुस्तकालय के सूचीपत्र और लिपि के आधार पर 'श्रीशिव प्रसाद' ही इसके लिपिकार हैं। ग्रन्थ का अन्तिम भाग खण्डित होने के कारण, रचनाकाल और लिपिकाल पर भी प्रकाश

नहीं पड़ता है। लिपि का समय पुस्तकालय के सूचीपत्र के अनुसार उद्धृत किया गया है।

३—ग्रन्थ की लिपि स्पष्ट, सुन्दर और सुवाच्य है।

४—यह ग्रन्थ ७२ क्रम-संख्यक 'संक्षिप्त दोहावली' का पूर्वार्द्ध-मात्र है।[1]

५—यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पुस्तकालय में ग्रन्थ-सं० क-३५ है।

२४. बृह्म अक्षरावलि शब्द भूलना—ग्रन्थकार–श्रीअजब दास। लिपिकार–×। अवस्था–अच्छी है। पृ०-सं० ३। प्र० पृ० पं० लगभग–६८ आकार—×। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ०—"श्री गणेशायनमः अथ श्री अजब दास कृत ब्रह्म अक्षराबलि शब्द झूलना लिख्यते।

दोहा—अक्षर ब्रह्म सरूप जे बरणेउ मुनि सुरवेद
भक्ति ज्ञाना वैराग्य मय कह्व सकल गत खेद ॥१॥
झूलना—का कर्म के फन्द मे मन्द मन वाँधिले तजि मज्जार मृज्ञ आनि घेरि
मत्त गजराज के जोरत वकार ह्यौ देत जव डारि पग लोह वरी
सन्त के सन्त मे बैठले यार तूं वात यह पूवर्ज्यौं यानि भेरी
अजबदास बर राम के नामकों गाइले फेर नहीं जक्त मे होत फेरी ॥१॥"

अन्त०—"ऐ ऐकही दावकी जिति है यार रसनीरस सव्द को नाहि जाना साँच को छाडि के काँच ध्यै तूं रहा ऊठहिं वात को ठान ठाना पोथी हरि हाथ लिया डारि हीरा दीया हान अरु लाभ नहि तान जाना अजबदास भूल कि रीति यह देखिआं सिंह के वाल को भेरि हाना ॥३२॥

दोहा—ब्रह्म सिंह घर अनल सम अरु रवि उदय समान
अजबदास तेहि हृदय धरु सकल त्यागि मदमान ॥२४॥
इति श्रीअजबादसकृत ब्रह्म अक्षरी ज्ञान चलिसा समाप्तः।'

विषय—दार्शनिक विषय पर फुटकर रचना है।

१. यह मत वेदप्रकाश गर्ग का है। दे०—'व्रजभारती', वर्ष १५, अंक २ (भाद्रपद, सं० २०१४ वि०), पृ० सं० ७३।

टिप्पणी : १—क से प्रारम्भ करके सभी व्यंजन और स्वर वर्णों को पद के प्रारम्भ में रखकर, पदों की रचना की गई है।
२—यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु०-सं० दर्शन—८ है।

२५. श्री सुदामा चरित्र—ग्रन्थकार—श्रीहलधर दास। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी। पृ० सं०—२०। प्र० पृ० पं० लगभग—६८। आकार—×। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ०—"श्री गणेशायनमः श्री विजयर्था अर्थ श्री हलधरदास कृत श्री सुदामा चरित्र लिख्यते।

छप्पै—अवचकही प्रभु स्वप्न में टेरि सुनायो वेणु
जागुजागु रे हलधर चन्द्र चूड पद रेणु १
चन्द्र चूडपद जपन कर जग स्वपना को अयन
औ कछुक तूँ कान धरू सुधासरिसमोवयन २
कलउ के कविगण वहूत वरन्यौ चरित अनन्त
कहां ले सुरस बखानौं सवे सलोने सन्त ३
तूं चरित्र मो मित्र को करू प्रसिद्ध संसार
जासु वाहुरी प्रेम तें हम कीन्ही आहार ४
उठे त्तत क्षण शव्द सुनि लगे करन गुणगान
प्रथमे इन्हे उचार गुरु पूरण व्रह्म समान ॥५॥"

अन्त०—"महां तेज रविकृष्ण यश यदपि न काहू से सहै
तदपि कर्णहू के कहे ज्ञान भवन दीपक बरै ॥९३॥
अस विचारि कै हलधरा कछुक सुयस वरणन किये
मानो महा समुद्रते सुती अग्र जलभर लीयो ॥९४॥
ब्रह्म सहस्र रसवे विशत कुसुमाकर सुदिपञ्चदंश
सम्पूर्ण पोथी भई दीन उद्धरण प्रेमरश ॥९५॥

ग्रन्थ संज्ञा छपै ॥३६४॥ ईति श्री सुदामा चरित्र दीन उद्धरण श्रीकृष्ण दरसनो श्री सुदामा राजमणि भवन प्राप्तो नाम चतुर्थो प्रकाशः ॥४॥ ईति श्री सुदामा चरित श्री हलधर दास विरचितायाँ सम्पूर्ण समाप्तः शुभमस्तु ॥"

विषय—श्री सुदामा के जीवन-सम्बन्धी काव्य।

टिप्पणी : १—यह ग्रन्थ चार प्रकाश अर्थात् चार अध्यायों में समाप्त किया गया है।
२—पुस्तक के प्रारम्भ या अन्त में लिपिकार, रचनाकाल और लिपिकाल का

निर्देश तो नहीं है, किन्तु ग्रन्थ के अन्त में 'ब्रह्म सहस्र' आदि पद से सं० १००९ वि० की फाल्गुन-शुक्ल पूर्णिमा को ग्रन्थ समाप्त होने का संकेत मिला है।

३—पुराण के आधार पर कथा लिखी गई है। सम्पूर्ण ग्रन्थ छप्पै में समाप्त हुआ है।

४—नये अनुसन्धान से सिद्ध हुआ है कि 'शिवस्तोत्र' तथा 'श्रीमद्भागवत भाषा' नामक दो अन्य ग्रन्थ भी इस ग्रन्थकार के मिले हैं। अबतक इस ग्रन्थकार द्वारा लिखित 'सुदामाचरित्र', पेज ३७ हस्तलेख मिल चुके हैं। परिषद् के प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थशोध-विभाग के संग्रहालय में इसके ८ हस्तलेख सुरक्षित हैं। पाँच प्रतियों को आधारभूत मानकर हस्तलेखों का शाखा-निर्धारण हो चुका है और प्रकाशनार्थ पाठ-सम्पादन का कार्य हो रहा है। अब ग्रन्थ का रचनाकाल सं० १६२२ बि० (१५६५ ई०) सिद्ध हो गया है। सबसे प्राचीन प्रति श्रीचैतन्य पुस्तकालय, गायघाट, पटना सिटी के संग्रहालय में सुरक्षित है। इस ग्रन्थ में प्रकाशन और अनुसन्धान से बिहार के साहित्यिक इतिहास की एक लुप्त कड़ी प्रकट होगी, ऐसी सम्भावना है।

५—यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० सं० इ–५ है।

२६. **दृष्टान्त प्रबोधिका**—ग्रन्थकार—×। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी है। पृष्ठ-सं० ४। प्र० पृ० पं० लगभग—६८। आकार—×। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ०—"श्रीगणेशायनमः अथ दृष्टांट प्रवोधिका लिख्यते

दोहा—वाद समैं अरु हास्य में प्राण सकैते होई
वृत्त अर्थ द्विज गाई के मारत देषिये कोई।१॥
ईतने ठौरन अठ जो कहत दोष तेहि नाहि
श्री भागवत पूमाण हैं शुक वखान्यौ ताहि॥२॥"

अन्त०—"स्वान निन्द्रातप्त यह भ्रमतीन गुरु ज्ञान
आगम निगम फणिन्द्र कहः तुलसी वचन प्रमान॥३८॥
अति कृपाल रघुवंश मणि देखहु हृदय विचार
हत्यौ ग्राह हरिवक्र गहि गज गोपाल एकवार॥३९॥"

विषय—विविध कथाओं के आधार पर दृष्टान्त-रचना।

टिप्पणी: १—यह ग्रन्थ अपूर्ण है। ३९ पदों के बाद पूरा एक पृष्ठ (१९८ संख्यक) नहीं है।

२—ग्रन्थ के अन्त का पृष्ठ खण्डित होने के कारण लिपिकाल, रचना-

काल और ग्रन्थकार तथा लिपिकार के नाम और निवास-स्थान आदि का पता नहीं चलता।

३—यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० सं० क-३६ है।

२७. **निषेध बोधिका**—ग्रन्थकार—× । लिपिकार—× । अवस्था—अच्छी है। पृष्ठ-सं०—३ । प्र० पृ० पं० लगभग—६८ । लिपि—नागरी । रचनाकाल—× । लिपिकाल—× ।

प्रारम्भ०—"अथ देशनाम सोरठा जोगदेस एक होय ऊपर एक वैराग है
ज्ञान देश एक जोय एक देश विज्ञान है ॥४०॥
सुख दुख देश कहेत या विध के बहू देश हैं
सब पर भक्ति भनन्त वसहि रामप्रिय दास जंह ॥४१॥

अन्त०—"छपै खर्रत वाण अनेकूवाजि जहाँ तहाँ तरफर्रतः
हर्रतगजरथ घंटकादरनकों हिय थर्रतः
हर्रतमहिपददवनि सेषफणि दविमहि दर्रत मर्रत
अरिगण सीलस की सजंह तंह फर फर्रत ॥ ॥

दोहा—सब अस्थानन दुर्लभी गङ्गातीनि विसेषि
हरिद्वार अरू प्राग पुनि गङ्गा सागर पेषि ॥१०७॥
इति श्री निषेदवोधिका समाप्त नाप प्रथमो सर्गः ॥१॥

विषय—विविध विषयों के लक्षण और नाम।

टिप्पणी : १—इस ग्रन्थ में पंचदेवता, षोडशपूजा, हाव-भाव, चौदह रत्न, यम और यमपुर आदि के नाम और लक्षण लिखे हैं।

२—इस ग्रन्थ का विवरण पुस्तकालय की सूची में नहीं है।

३—ग्रन्थ के प्रारम्भ का प्रथम पृष्ठ नहीं है। ग्रन्थ की रचना और लिपि का समय नहीं दिया हुआ है, किन्तु ग्रन्थ में कलियुग के कुछ काल-निर्देश का जहाँ प्रसंग आया है, लिखा है—

दोहा—'प्रथमधिष्ठिर नृपति की साका कलिजुग युमानि
तीनि सहस चौवालिशौ वर्ख भोग लै जानि। ५१॥
विक्रम एकशत पैतिशै वर्खभोग गनिलेहु
सहस अठारहजो भोगिहैं सालवाहनि येहु ॥५२॥
नागार्जुण शाककलि चारि लाख लखि भोग
कलकि शाका आठ शं एकईश वर्ष संयोग ॥५३॥"

इसमें विक्रम संवत् १३५ प्रतीत होता है। सम्भवतः यह इस ग्रन्थ का रचना-काल है।

४—ऊपर के चारों ग्रन्थ पुस्तकालय में एक ही जिल्द में बँधे हैं।

२८. **दृष्टान्त प्रबोधिका**—ग्रन्थकार—श्रीरामलला सरण वैद्य। लिपिकार—श्री घनश्याम लाल। अवस्था अच्छी हैं। पृष्ठ-सं०—४। प्र० पृ० पं० लगभग—२८। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—ज्येष्ठ-कृष्ण ११ (एकादशी), सं० १८९९ वि० (१८४२ ई०), शनिवार।

प्रारम्भ०—"श्री गणेशाय नमः दोहा रामचरन तिसरासे तक षडगुण दिव्य वषानि पूरण षट श्री राम मे सब दृष्टान्त न आनि १ ईश्वर सबनहि राम सम मै विचारि कहि वात रामचरन वडमाल को सवे चतुर· ललचात २ परब्रह्म अवतार सब निरगुण अवलम्ब डोल रामचरण मनि एक वहु कोई कोई लेत अमोल ३"

अन्त०—"रामचरन सव तजे विनु भजे राम पद मूल
ज्ञानकर्म्म अरु धर्म्म सव ज्यौं सेवर को फूल ९९
रामचरन वैराग बिन सधै साधना झूठ
भसम होय चाउर लिए जिमि कोउ भूसी कूट १००
अस्फुर सम दृष्टांत सतक रामचरन रस हेतु
जिमि वस्तु सुआही करि विंजन भोजन हेतु १०१

इति श्री दृष्टांत बोधिका विवेक लछन वर्ननाम प्रथम सतक समाप्त।"

विषय—दृष्टान्तपरक रामभक्ति-काव्य।

टिप्पणी: ग्रन्थ पाँच शतकों में विभक्त है। पुस्तकालय में दो शतक दो जिल्दों में हैं। पुस्तकालय की क्रम-संख्या दोनों की एक ही है। ग्रन्थ की लिपि प्राचीन और अस्पष्ट है।

लिपिकार ने ग्रन्थ के अन्त में अपने सम्बन्ध में लिखा है—"हस्ताक्षर घनस्याम लाल साकीन चाकंद प्रगने सोनउत।" ग्रन्थकार के सम्बन्ध में—"रामलला सरण वैष्णव श्री अयोध्यावासी, श्री जानकी कुंज।"—लिखा हुआ है। यह ग्रन्थ श्री-मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क-३७ है।

२९. **नन्दमदन हर छन्द रामायण**—ग्रन्थकार—शिवप्रसाद। लिपिकार—शिवप्रसाद। अवस्था—अच्छी है। पृष्ठ-सं०—४। प्र० पृ० पं० लगभग-१२। रचनाकाल—ज्येष्ठ-शुक्ल १३ (त्रयोदशी), सं० १९४३ वि०

(१८८४ ई०), सोमवार। लिपिकाल - कार्त्तिक-शक्ल १० (दशमी), सं० १९४६ बि० (१८८७ ई०), शनिवार।

प्रारम्भ०—"श्री गणेशायनमः ।। श्री शिवायनमः ।। श्री रामचन्द्रायनमः ।।

मदन हर छन्द ।।—जय जय गुणाराशी सव उरवासी
अज अवि नासी जन त्राता सब सुखदाता।
जय विश्व दुखारी देखि अघारी
जग हितकारी पितु माता बुद्धि बल व्राता ।।
धरि चरि सुभगतन राम भरत लषन सुत्रृपुहन
जन्म भले दशरथ घर ले।
करि मष रखवारी मुनि तिय तारी शिव धनु भारी
राम दले त्रिभवन विचले ।।१।।
कहि भृगुपति जय जय फिरे धनुष दै कुटिल नृपन्हगै
गंवहि सदन नभ झरे सुमन।
मिथिलेश अनन्दे कौशिक वन्दे
रघुकुल चन्दं राखे पत हर्षे पुरजन
अचरज वरात छज सहसरात सज
अवलोकत अज भये चकित सारदा सहित ।।
सव साज अमाया निज उपजाया एक न पाया
सब अलषित बहुविधि अगणित ।।२।।"

अन्त०—"दै लंक विभीषण चलेसिय लषन सहित
सुपृयजन चढि रामा रथ अभिरामा।
अपने पुर आये अवध वधाये
घर घर गाये गुण ग्रामा जय सुख धामा ।।
पितु राज विराजे तिहुपुर गाजे अनुपम वाजे
वाज विपुल सब साज अतुल ।।
शिव प्रसाद सुरगणवरषि सुमन घन निरषि मगन
मन छवि मञ्जुल जय जय संकुल ।।९।।
दोहा ।। हर दृग श्रुति ग्रहसोम सित जेठ त्रयोदश चन्द ।।
शिव प्रसाद लस रामयश नन्दमदन हर छन्द ।।
इति श्री नन्दमदन छन्द रामायण शिव प्रसाद कृत
सम्पूणम् ।। शुभमस्तु ।। सिद्धिरस्तुः ।।"

विषय—राम-जीवन-सम्बन्धी फुटकर रचना।

टिप्पणी : १—ग्रन्थकार ने अपने सम्बन्ध में, अन्त में लिखा है—

"शिव प्रसाद कायस्थ श्रीवास्तव गयावासी अघ अवगुणराशी श्री बापू गंगा विष्णु श्रीवास्तव कायस्थ गया महल्ला वहुआर चौरा निवासी हेतु लिखित्वा शुभ सम्वत् १९४६ कार्तिक शुक्ल दशम्यां सनिवार। श्री सीता राम।"

२—यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० सं० क-३८ है।

०. **पद्मावती**—ग्रन्थकार—श्री मलिक मुहम्मद जायसी। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी, प्राचीन कागज। पृष्ठ-सं०—३८२। प्र० पृ० पं० लगभग—१८। आकार—×। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ०—(कुछ पंक्तियाँ नहीं पढ़ी जा सकती हैं; अतः प्रारम्भ की सात पंक्तियाँ छोड़कर—)

"भोर होतू नीसी तम रहित तव हम करव पे आन,
जिमि उदौत रवि किरिन के पंछी तजत असथानं
सुमरो एक आदी कर तारा ॥ जो जीव दीन्ह लीन्ह संसारा
कीन्हे सी प्रथम जोती परगासा ॥ कीन्हे सी तहां ....
(आगे की पक्तियाँ) अस्पष्ट हैं।

।०—"माआ मोह तजा सम हाथा देखिन बुद्धि नीदान न साथा
छाडा लोग कुटंब सब कोइ भए.............. ....।
..............राजा सोउ अकेला जे हिरे पन्थ गहीले होए भला
काकर घर काकर मद माआ ताकर सभ जाकर जीव-काआ"

षय—रानी पद्मावती और रतनसेन की जीवन गाथा।

प्पणी : १—ग्रन्थ प्राचीन काल का लिखा हुआ है। लेखन-शैली पुरानी होने के कारण पढ़ने में असुविधा होती है। पोथी के मुखपृष्ठ पर दो चित्र दिये हुए हैं। उन चित्रों में ग्रन्थ का पूरा भाव भर दिया गया है।

पहला चित्र—राजा रतनसेन योगी के वेष में बैठे हैं। सामने धनुष-वाण हैं। दो व्यक्ति उन्हें कुछ समझा रहे हैं। वहाँ लिखा है—"राजा रतनसेन जोगी होके बैठे।"

दूसरा चित्र—बाईं ओर रानी सरस्वती, राजा की माता, उनके साथ तीन सहेलियाँ भी हैं। दूसरी ओर दायें भाग में अपने सहेलियों के साथ रानी नागमती। सामने पीकदान रखा हुआ है। लिखा

है—"रानी सरसवती राजा की माता।" दूसरी ओर लिखा है—"रानी नागमती"।

२—पोथी के प्रत्येक पृष्ठ में, उस पृष्ठ के भाव दो पंक्तियों में लिखे गये हैं, जो अस्पष्ट हैं।

३—यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पुस्तकालय की क्र० सं० ४३ है।

३१. पञ्चक्रोश सुधा—ग्रन्थकार—विद्यारन्यतीर्थ। लिपिकार—मुकुंदलाल। अवस्था—अच्छी है। पृ० सं०—४३। प्र० पृ० पं० लगभग—२६। रचनाकाल—×। लिपिकाल—सं० १८९८ वि०, ठाकुर रथयात्रा, सोमवार।

प्रारम्भ०—"भैरव॥ श्रीगनेस विघन हरा मंगल सुख कारी॥
आदि मंत्र के सरूप नाद विंदुधारी॥१॥
नाग वदन एक रदन से दुर सिंगारी॥
सिद्धि बुद्धि चँवर करत भँवर गुंज भारी॥२॥
बुद्धिनाथ भाल चन्द्र सोहत भुज चारी॥
विधि हर हरि रूप प्रगट तेरी छवि न्यारी॥३॥
देवदेव आनन धर जीव ढर निढारी॥
दोउनकी मिलन ऊपर त्रिभुवन वलिहारी॥४॥
परम शिव विहार भूमि जैसी पातु काशी॥
गंगा सिगार हार चारि मुक्ति दासी॥१॥
बारानउ सिब मसान गौरि पीठ भासी॥
क्षेत्र मोद विपिन अंग पाचौ सुख रासी॥२॥"

अन्त०—"मलार—निर्भय रहँथु साधु ब्रह्मन सव बाढउ शिव पद नेह।
पर स्वारथ के कारन लागउ धन विद्यावल देह॥३॥
प्रेम कमल मानस मैं फूलौ छुटौ विषय कै तेह॥
देव देव संपूरन करि हँहि मोर मनोरथएह॥४॥ १२७॥
जा दिन ठाकुर को रथ साजत॥ तादिन पञ्च क्रोश सुधा।
यह पूरन छवि से छाँजत॥१॥

संवत आठ अंक अष्टादश वार सोम को राजत।
शिव सरूप एहि पुष्यनषत के वरनत मोरी मति लाजत॥२॥
श्रीमत काशी राज पियारे·································।

संतवटी—जब आछे आठौ अग मिले तब रंग सुधा में आया।
समाधान बापू साहेब का ध्यान सुकविका भाया॥
परम धरम तौ वड बापू का आसन साज विछाया॥१॥"

विषय—काशी नगरी, विश्वनाथ-मन्दिर, अन्नपूर्णा मन्दिर तथा शिव-सम्बन्धी रचना।

टिप्पणी : १—यह ग्रन्थ विशेषतः काशी के माहात्म्य पर लिखा गया है।

२—लिपिकार का नाम यद्यपि स्पष्ट नहीं है, तथापि अन्त में लिखित निम्नलिखित पंक्तियों से लिपिकार का नाम प्रकट होता है—

"आज्ञा पाय मुकंदलाल को मीठे सुर सो गाया॥
दुवे अचारज हरी राम का वाकी लिगन गनाया॥
करम अकाम सकाम वनत सो दुविध समाधि बनाया।
क्षेत्र प्रदक्षिन विमल धारा सो दिल का दोष बहाया।।३॥
सिद्धिन का गिनती कुछ नाही शिव से प्रेम बढ़ाया॥
महादेव जोगेस्वर पाके करत जनन पर दाया॥४॥१२९॥
इति विद्यारन्य तीर्थ कृत पंचक्रोश सुधा॥"

३—ग्रन्थ की लिपि सुन्दर है, किन्तु शैली प्राचीन होने के कारण पढ़ने में स्पष्टता नहीं है। इस ग्रन्थ में उस काल की काशी की ग्रन्थ-रचना की विशेषता प्रकट होती है।

४—यह पोथी श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० सं० क–४१ है।

३२. **पद्मावती**—ग्रन्थकार—मुहम्मद जायसी। लिपिकार—झन्दुराम। अवस्था-अच्छी, प्राचीन, हाथ का बना, मोटा देशी कागज। पृष्ठ-सं०—३७९। प्र० पृ० पं० लगभग—३४। लिपि--नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—भाद्र-कृष्ण ११ (एकादशी), सं० १८७३ वि०, (१८१६ ई०), मंगलवार।

प्रारम्भ की पंक्तियाँ—"श्रीगनाधि पतेन्मह श्री भवानी जी सहाऐ श्री ठाकुर जी सहाऐ श्री सीवसंकर्सहाऐ श्री सॅसती जी सहाऐ श्री पोथी पदुमावती कथाः महमद कवी वीरचीत०
सुमिरौ आदी ऐक करतारा। जेही जीव दीन्ह कीन्ह संसारा :
कीन्हेसी प्रथम जोती प्रगासा : कीन्हेसी तब परवत कवीलासा :
कीन्हेसी अंग्नी पवन जल खेहा : कीन्हेसी बहुतै रंग उरेहा०॥
कीन्हेसीं धरती सर्गपतारा कीन्हेसी वरन वरन औतारा
कीन्हेसी सात समुंद्र मंडाव्रह : कीन्हेसी भुअन चौदहो खंडा :॥"

अन्त०—"महमद महमद सरन गही डीगै न मग से सोइ………।"

विषय—पद्मावती और राजा रतनसेन की जीवनी। प्रेममार्गी सूफी साधना का काव्य।

टिप्पणी : १—लिपि अत्यन्त प्राचीन है। प्रकाशित प्रतियों से पाठभेद भी प्रतीत होता है।

२—लिपिकार ने अपने सम्बन्ध में, अन्त में निम्नलिखित पंक्तियाँ दी हैं—"इती स्री पदुमावतो पोथी कथा संपुरन समापतं सीधीरस्तु सममस्तु जो देखा सो लिखा ममदोषन दीअते लीखा पोथी झन्दुरामसुतफुरकुवरशाहु रौनीआर शहपुरीआ मोकाम दाउदनगर अहमदगंज प्रगने अनछा सुवेवीहार शवत १८७३ साल महाभादोवदी ११ लीखलतेआर भेलवार मंगलवार सन् १२२४ वारसै चौबीस सनः अमल अंगरेज बहादुर साहेब का हुकुम बादशाह का जो कोई पढ़ै हींदु इआ मुसलमान को दंडवत वंदगी बसबस अपना खुशी से लीखा दसतखत खासः झन्दुराम लीखा पोथी देख उतारल ऐतीसुभ ॥" इससे लिखनेवाले का पता चलता है। यह भी ज्ञात होता है कि किसी अँगरेज की सेवा में रहकर अथवा उसकी आज्ञा से लिपिकार ने ग्रन्थ लिखा है।

३—यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० का-४४ है।

३३. पदमावती—ग्रन्थकार—श्रीमलिक मुहम्मद जायसी। लिपिकार—चुनी लाल कर्ण। अवस्था—अच्छी, हाथ का बना, मोटा कागज। पृ० सं०—३३४। प्र० पृ० पं० लगभग—३७। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—भाद्र-शुक्ल, १२ (द्वादशी), सं० १८९१ वि०, (१८३४ ई०), सन् १२४१ साल, रविवार।

प्रारम्भ०—"स्रीगनेसाऐन्मः सारदाससरस्वतीजैन्मः पुस्तक पदुमावती कथा क्रीत महमद कवि वीरचीते—
सुमीरौ आदी ऐक कर तारा० जेही जीव दीन्ह कीन्ह संसारा०
कीन्हेसी प्रथम जोती प्रगासा कीन्हेसी तब परवतकवीलासा०
कीन्हेसी पवन अग्नी जलखेहा कीन्हेसी वहुते रंग उरेहा० ॥
कीन्हेसी धरती सर्ग पताला० कीन्हेसी वर्नवरन औतारा०
कीन्हेसी सात समुद्र ब्रह्मण्डा० कीन्हेसी भुअन चौदहो खंडा
कीन्हेसी दीन वनकर ससीराती कीन्हेसी नखतर तरा ऐनपाती
कीन्हेसी सीत धूप वौ छाहा कीन्हेसी मेघ वीजुलेही माहा"

अन्त०—"महमदमहमद सरन गही डीगैनमन ते सोइ
वीधीकीया कौनहु जुगती कोधनीमहिमालेहु"

विषय—पूर्ववत्।

टिप्पणी : १—ग्रन्थ के लिपिकार ने ग्रन्थ के अन्त में अपने सम्बन्ध में लिखा है—

"इतीस्त्रीपोथीपदुमावतीकथासपुरनदेखोसोलीखाममदोखनहीकरते पंडीतजनसोवीनतीमोरीछुटलअच्छरलेवसवजोरी० पोथीलिखावल मोहनसाहुवासीहैकसोअहमदगंजप्रगनेअनछासरकारसुवेवीहार-कीलेरोहितासवुलहैपहलेजीलेसहाबादअमलैअंगरेजबहादुरदसखत चुनीलालकायस्थकर्नसाकीनमन्दारसंवत१८९१ भादो सुदीदवा-दसी १२ रवीवारके तआरभयासन १२४१ साल ।"

२—लिपिकार—श्रीचुनीलालजी किसी मोहनसाहु के यहाँ रहते थे। वहीं रहकर उन्होंने यह ग्रन्थ लिखा है, ऐसा ऊपर उद्धृत वाक्यांश से प्रकट होता है। लिपि प्राचीन है।

३—ग्रन्थ की समाप्ति के बाद एक सादे कागज पर लिखा है—
"यह पोथी थाने दाउदनगर में नीलाम हुई लीलाधरलाल ने बाबू सिग्रिफ लाल के वास्ते लिया मि० आषाढ़ शुक्ल ३ संवत् १९३२ वि०।"
यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में संगृहीत है। पु०-क्र-सं० का-४५ है।

३४. पाण्डव-चरितार्णव—ग्रन्थकर्त्ता—देवीदास। लिपिकार—देवीदास। अवस्था—अच्छी है। पृ० सं०—१४१। प्र० पृ० पं० लगभग—४८। लिपि—नागरी। रचनाकाल—आश्विन-कृष्ण ११ (एकादशी,) सं० १८४२ (१७८५)। लिपिकाल—आश्विन-कृष्ण ११, सं० १८४२ वि०।

प्रारम्भ०—"श्री श्रीगणेशायनमः। अथपाण्डवचरितार्नवलिख्यते। निबाहा।। बिधिनिविनसिंजावैमंगलसकलछावैसंकरचमूदुरावैपुवैसुषसाजको।। संपदासदनल्यावै।। आपदासदानसावैतापतीनउ भगावै नहै सभसाजको।। जनदेवीदासगावैकरिचितमाहचावै वार एक ध्यानध्यावै देवगनराजको।। संततिसुमतिपावैभगति-भुगति पावैरिधिसिधिवृद्धिआवैसुजससमाजको।।१।।

दोहा—ध्याइचरनपूजनकरयौवन्दिचहयोवरदान।।
अभिमतवर प्रारंभयमपूरौदयानिधान।।"

अन्त०—"दोहा—विकटवेषधरिभक्षिवेकारन आवतसोइ भेदपाइअर्ज्जुन-कुपित तजेबानविसभोइ ३६ सञ्चितसरकोटिन्हतजेलगेताहिके अंग तिलभरिनघावनहोततहिहोतवानसवभंग ३७

छप्पै—गर्ज्जतआयोनिकटसर्प रथलीलनजवही पांडव के दल......।"

विषय—पाण्डव-चरित-सम्बन्धी काव्य।

टिप्पणी: १—ग्रन्थकार और लिपिकार दोनों एक ही व्यक्ति प्रतीत होते हैं। ग्रन्थ

अपूर्ण है। ग्रन्थकार के नाम का पता प्रारम्भ के कुछ पदों को पढ़ने से ही चलता है। ग्रन्थकार रामगढ़ के राजा के आश्रित थे। इनका घर जिला हजारीबाग के इचाक ग्राम में था। इन्होंने ग्रन्थ-रचना का समय निम्नलिखित दोह में दिया है—

दोहा—"पक्ष वेद वसु महि असित, हरितिथि आश्विन मास,
पाण्डवचरितार्णकथा, वरनत देवीदास।"

ये अम्बष्ठ कायस्थ थे। ग्रन्थ में लिखा है—

"छप्पय—छत्रियवरभुविख्यातवेनुवंसीगुनसागर वीरधीरश्रीतेजसिंह भूपाल उजागर॥ तसुसुतपारसनाथसिंहमहिपालमहामति सकलनीति के सदनजाससुरतिमनमवजति॥ तसुसुतप्रसिद्ध उदारनृपश्रीमनिनाथ मृगेसमनि। तिन्ह निकट ललित पाण्डवचरितवरनिकहौ-वहुछन्दगनि॥९॥

दोहा॥ काएथ जाति अंबष्ट कुल श्री धरनीधरदास।
सज्जन पृय अति सान्तमतिवास राम गढ़ खास॥
जुगल पुत्र गुन भवनतसु अनुज संकर दास।
सु अनुज राघवदास जहि साधु सुमति प्रकास॥१॥
राघवदासहि पुत्र द्वै सममति गुनपरकाश।
अनुज देवीदास त्यौं अनुज भवानी दास॥१२॥

ग्रन्थ पूरा नहीं है। ४० तरंग के बाद ४१वें तरंग में ३७ पद ही हैं। बाद का अंश नहीं है। यह ग्रन्थ महाभारत की कथा के आधार पर लिखा गया है। भाषा साफ और सुन्दर है, भाव प्रौढ़ है। इसके दो हस्तलेख बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के प्राचीन हस्त-लिखित ग्रन्थ-शोध-विभाग के संग्रहालय में पूर्व से सुरक्षित हैं। पाँच प्रतियों का पाठाध्ययन करके शुद्ध पाठ-सम्पादन और ग्रन्थकार-सम्बन्धी विशिष्ट परिचय के साथ यह ग्रन्थ परिषद् की प्रकाशन-योजना के अधीन है। ग्रन्थ पर शोध-सम्पादन जारी है। यह ग्रन्थ श्रीमन्नलाल पुस्तकालय, गया में संगृहीत है। पु० क्र० सं० का-४७ है।

३५. **पातीर्वमंगल**—ग्रन्थकार—गोसाईं तुलसीदासजी। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी। पृ०-सं०-८। प्र० पृ० पं० लगभग—३४। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ०—"श्री गनेसायेम:॥ श्री पोथी पारवती मंगल लीषते॥
विनै गुरहि गुनिगनहिगिनिहि गननाथहि॥ ह्रीदैआनिसिआरामधरे धनु माथहि॥
गावौ गौरी गिरिश वीवाह सोहवन। पावन पाप नसावन भुविमन भावन॥

कवित्त रीतिनहिं जानौ कवि न कहावौं ॥ शंकर भरित सुसरित मनहि अन्हवावैं ॥
पर अपवाद विवाद विहिषित वानिहिं पावन करौ सो गाए भवेस भवानिहि ॥
जऐ सवत फागुन सुदि पांचैगुरदिन ॥ अश्चनिविरम्यौमंगल सुनिसुष छिनछिन ॥"

अन्त०—"बहुत भांति समुझाऐ फिरे विलषितमन ॥ संकर गौरि समेत गऐ कैलासहि ।
उमामहेस विवाह उछाहभुअन भरे । सबके सकल मनोरथ विधिपूरन करे ।
प्रेम पाटपपटगेरिगौरिहरगुन मनि । मंगल हार रखेउककविमतिमृगलोचनि ॥

छन्द—मृगनऐनिविधुवदनी रचेउमनि मंजु मंगलहार सो ।
अधरहु जुवती जन विलोकि तिलोक सोभा साल सो ।
कल्यान काज उछाह व्याह सनेह सहित जो गाइ है ॥
तुलसों उमा संकर प्रसाद प्रमोदमनप्रिअ पाइ है ॥१६॥
इति श्री गोसाई इन्द्रसीदास विरचिते शिव पार्वतीमंगलसम्पूर्णम् ॥"

विषय—शिव-विवाह-सम्बन्धी काव्य ।

टिप्पणी : १—पार्वती का जन्म, उनके माता-पिता की विवाह-चिन्ता, नारदजी का आगमन तथा नारदजी के स्वागत आदि को काव्यात्मक रूप से इस रचना में वर्णित किया गया है ।

२—इस ग्रन्थ में ग्रन्थकार के सम्बन्ध में प्राप्त सूचना के आधार पर नाम-परिवर्त्तन इस संस्करण में किया गया है । पूर्व संस्करण तथा पुस्तकालय की ग्रन्थ-सूची के आधार पर ग्रन्थकार का नाम इन्द्रसीदास लिखा गया था, जो गलत था ।

३—यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है । पु० क्र० सं० का-४८ है ।

३६. **बरवा रामायण**—ग्रन्थकार—गो० तुलसीदासजी । लिपिकार—सिन्धुपाल । अवस्था—अच्छी, प्राचीन, हाथ का बना मोटा कागज । पृ० सं०—१६ । प्र० पृ० पं० लगभग—२० । लिपि—नागरी । रचनाकाल—× । लिपिकाल—चैत्र-शुक्ल अमावास्या, सं० १९०५ वि० मंगलवार ।

प्रारम्भ०—"श्री गणेशाय नमः अथवरवारामायण लिषते कृत तुलसीदास ॥
गननायक वरदायक देव मनाय ॥ विघ्नविनासकवरणप्रकासकहोउसहाय ॥१॥
श्रीगुरुपदअंबुजरजहृदयेसभारि ॥ वरनन करौ रामजस कृपासुधारि ॥२॥
श्री रघुवर अंगसोभित अतुलित काम ॥ भक्तचकोरपूर्णविधुकरउप्रणाम ॥३॥
भरतभारतिनायक छंदवंद विधान ॥ वालमीकमहघटीरही पुनिकर गुण गान ॥४॥
लषन मधुर मृदु मूरति सुमीरन कीन्ह ॥ जिन्हकीकृपा रामजसवरनैलीन्ह ॥५॥

अन्त०—"धर्मकलपतरुरघुवर आरतवंधु ॥ तुलसि द्रवतदिनलषिकरुना सिंधु ॥२४॥
रामधामकरषरचि केवल नाम ॥ तुलसी लिषेउनमालाहितेहिविधिवाम ॥२५॥

साधनसकलराम बिनु लागहिसून ॥ तुलसिनाम बिजकहबढ़ दस गुन ॥२६॥
एहिविधि अवधनारिनर प्रभु गुणगान ॥ करहिदिवसनिसीतुलसिसिजानतजान ॥२७॥
भजन प्रभाव भांति बहु वरनेउ वेद ॥
तुलसि गायउ हरि जस मिट भवषेद ॥२८॥
करण पुनीत हेतु निज वचन विवेक ॥
तुलसि ऐसेहु सेंवत राषत टेक ॥२९॥
सिताराम लषन संग मुनि के साज ॥
तुलसि चित चीत्रकुटहिबमरघुराज ॥३०॥

इति श्री उत्रकांड समाप्त मीति चैत्रमासे शुक्लपक्षे अमावशयांग भवमवासरे १९०५ ॥

विषय—राम-जीवन-सम्बन्धी प्रसिद्ध काव्य।

टिप्पणी—१—ग्रन्थ की लिपि स्पष्ट तथा सुन्दर है। लिखावट प्राचीन है।

२ : लिपिकार ने अपना नाम ग्रन्थ के अन्त में नहीं दिया है, किन्तु ग्रन्थ-समाप्ति के बाद आवरण-पृष्ठ पर उसी लिपि और स्याही से लिखा है—'सिंधुपाल'; इससे प्रतीत होता है, यही लिपिकार हैं।

३—ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० का-५० है।

२७ बरवा रामायण—ग्रन्थकार—गो० तुलसीदासजी। लिपिकार—वैष्णव प्रेमदास। अवस्था—अच्छी, मोटा देशी कागज। पृ० सं०—१५। प्र० पृ० पं० लगभग—२४। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—सं० १८८७ वि० (१८३० ई०)।

प्रारम्भ०—"श्री गणेशायनमः ॥ गण नायक वरदायक देवमनाय ॥
विघ्नि विनासन दासन होहू सहाय ॥१॥
श्री गुरुपद अंबज रज हृदय संभारि।
वरनन करौं रामयस कृपा सुधारी ॥२॥
श्री रघुवर छवि सोभित अतुलित काम ॥
भक्त चकोर पूर्ण विधु करो प्रणाम ॥३॥
भरत भारती नायक छन्द विधान ॥
वालमीक मह घटी रही कर गुण गान ॥४॥
लषन मधुर मृदु मूरति सुमिरण कीन्ह ॥
तिन की कृपा राम जस वरणै लीन्ह ॥५॥
लवन अंबु निधि कुंभज संकट हार ॥
भरत चरण अनुगामी सहित विचार ॥६॥"

अन्त०—"एहि विधि अवध नारि नर प्रभु गुण गाण
करहि दिवस निसि सुष सो जानत जान ॥४०२॥

भजन प्रभाव भांति वहु वरणी वेद ॥
तुलसी गाय सहरि जस मिटि भव षेद ॥४०३॥
करण पुनीत हेतु निज वचन वीवेक ॥
तुलसी अैसेहु सेवत राषत टेक ॥४०४॥
सीता राम लषण संग मुनि के साज ॥
तुलसी चित्त चित्रकूट हिं वस रघु राज ॥४०५॥

इती श्री वरवे रामायणे उत्तर कांड समाप्त ॥ लिषितं वैस्नव प्रेमदास ॥ १८८७ ॥"

विषय—राम-जीवन-सम्बन्धी काव्य :

टिप्पणी : १—ग्रन्थ की लिपि स्पष्ट तथा सुन्दर है। ग्रन्थ प्राचीन होने के कारण बीच में, कुछ स्थल फट गये हैं और कहीं-कहीं अक्षर घिस गये हैं।

२—पूर्वोक्त ग्रन्थ से इसमें पाठभेद है। इसमें दन्त्य 'न' के स्थान पर मूर्धन्य 'ण' का प्रयोग है। प्रारम्भ में ही पूर्व के ग्रन्थ में है—"विघ्न विनासक वरण प्रकाशक होहु सहाय।" इस ग्रन्थ में है—"विघ्नि विनासन दासन होहु सहाय ॥" इसी प्रकार इसमें जो अंश दोनों ग्रन्थों के उद्धृत किये गये हैं, उनमें ही स्पष्ट पाठभेद है।

३—उस ग्रन्थ के प्रत्येक काण्ड की पृथक् पद-संख्या दी हुई है; इसमें सम्पूर्ण ग्रन्थ की पद-संख्या एक साथ ही ४०५ दे दी गई।

४—यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं०—का-५१।

३८ **बरवा रामायण**—ग्रन्थकार—गो० तुलसीदास। लिपिकार—जुगलकिशोर लाल। अवस्था—अच्छी। पृ० सं०—१२। प्र० पृ० पं० लगभग—४६। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—श्रावण-कृष्ण ५ (पञ्चमी), सं० १९१९ वि० (१८७२ ई०), बुधवार।

प्रारम्भ०—"उँ श्रीगनेसाय नमः ॥ अथवरवैरामायण लिख्यते भाषाकृते तुलसीदास जी का ॥

दोहा ॥ गननायक वरदायक देव मनाय ॥ विघ्नि विनासन दासन होहु सहाय ॥१॥
श्रीगुरुपद अंबुज रज हृदय संभारि। वरनन करौं रामजस कृपा सुधारी ॥२॥
श्रीरघुवर छवि शोभित अतुलित काम ॥ भक्त चकोर पूर्ण विधु करो प्रनाम ॥३॥
भरत भारती नायक छंद विधान ॥ वालमीक महं घटी रही कर गुनगान ॥४॥
लषन मधुर मृदु मूरति सुमिरन कीन्ह ॥ तिनकी कृपा रामजस वरनै लीन्ह ॥५॥
कवन अंबुनीधि कुंभय संकटहार ॥ भरत चरन अनुगामी सहित विचार ॥६॥
केसरि सुअन वीरवर रघुपति दास ॥ जाजु कृपा निर्मल मति छंद प्रकास ॥७॥
अवध पुरी दसरथ नृप सुकृत सनूप ॥ कोसिल्यादिक रानी अमित अनूप ॥८॥"

अन्त०—"भजन प्रभाव भांतिवहुवरनीवेद ॥ तुलसी गायजुहरिजस मिटिभव षेद ॥४०३॥
करन पुनीत हेतु निज वचन विवेक ॥ तुलसी अैसेहु सेवत राषत टेक ॥४०४॥
सीतारामलषन संग मुनिके शाज ॥ तुलसी चीत चीत्र कूटही वस रघुराज ॥४०५॥
इतिश्री वरवै रामायनेउत्तराकांडसमाप्त: ॥ सिद्धिरस्तुसुभमस्तु ॥ शुभमभूयियात् ॥"

विषय—राम-जीवन-सम्बन्धी काव्य।

टिप्पणी : १—ग्रन्थ की लिपि स्पष्ट, सुन्दर और सुवाच्य है। पूर्वोक्त ग्रन्थों से इसमें पाठ-भेद है। ग्रन्थ के अन्त में, समाप्ति के बाद, एक अस्पष्ट कवित्त है, जो किसी गुरुबखशलाल का लिखा हुआ है। अन्त में एक पद का कमलबन्ध भी लिपिकार ने दिया है। इसमें सभी पदों की संख्या ४०५ है।

२—यह पोथी श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्रम-सं० का-५२ है।

३९. सूरसागर—ग्रन्थकार—सूरदास जी। लिपिकार—श्रीविभीषण। अवस्था—अच्छी। पृ० सं०—३। प्र० पृ० पं० लगभग—७६। लिपि—नागरी। रचनाकाल—× । लिपिकाल—फाल्गुन-शुक्ल ७ (सप्तमी), सं० १९१३ वि० (१८५७ ई०), मंगलवार।

प्रारम्भ०—"भजन—परदेसी की बात कहै कोई परदेसी कि वात ॥१॥
जवसे विछुरै नन्द सांवरौ नही आवत नहि जात ॥१॥
मन्दि अर्द्ध अवधि पतिबदीगय हरिअहारटरिजात
अजेयामख अनुसारथ नहीं तांतेजीय घवरात ॥२॥"

अन्त०—"हरिविन कोई काम न आयौ
जगमंहमया झूठ के कारण नाहक जन्म गंवायौ
कंचन कलस विचित्र चित्र लिखि रचि रचि महल बनायौ
घरतें निकारिवाहीर लै डारोक्षिण एक रहनन पायौ
लोग कुटुम्ब मरघट के साथी करि अपनों अपनायौ
दीनदश कीन्हीं लोक बड़ाई ना तो धोय छड़ायौ
कहती रहति तरे संगहो त्रिया धुति जरौं धूर खायौ
चलतकिवेर चीतचोरमोरिभूयेकौंपगनतनन पठायौ
जाकर नहमतन मन पुलिलाड़ अनेक लड़ायौ
तोरि लीहौकटिहूं से धागा तापर वदन जरायौ
वोलियोलि वरनात मीत्र हित लीन्हिगथ जेहि शभायौ
पांसपरेसो काजकाल के अवसर तिर्नहिन आनिकढ़ायौ
अधम उधारण गणिका तारण औ सो हरि विसरायौ
सपने हरिको नाम न लीन्हो सूर एहि पछितायौ ॥२९॥

दोहा—मलय दारुसम प्रेम करि देह ब्रह्मजुत धार
सूरगवन हरिपवन करि पूछत पुनितियनाम ॥३०॥
इति श्री सुरदासकृत सूरसागर पद समाप्त"

विषय—सूर-साहित्य ।

टिप्पणी : १—लिपि प्राचीन है । शैली और लिखावट ठीक नहीं है । प्रारम्भ में "अथ भाषाभूषण लिख्यते" लिखा है, किन्तु दो-तीन पंक्तियाँ किसी तीसरे स्थल की लिखने के बाद 'सूर' के पद से प्रारम्भ कर दिया है । पहले टेक, फिर गेय पद है ।

२—यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है । पु० सं० का-५५ है ।

भाषाभूषण—ग्रन्थकार—जसवन्त सिंह । लिपिकार—श्रीविभीषण । अवस्था—अच्छी है । पृ० सं० ५ । प्र० पृ० सं० लगभग—७६ । लिपि—नागरी । रचनाकाल—× । लिपिकाल—फाल्गुन शुक्ल ७ (सप्तमी), सं० १९१३ वि० (सन् १८५७ ई०), मंगलवार ।

प्रारम्भ०—"श्री गणेशायनम: अथ भाखाभूषण लिख्यते दोहा ।
विघनहरणतु महौसदागणपति होहुसहाय विनति करजोरे करौं दीजैग्रन्थबनाय ॥१॥
जिनकीनो परपंच अवअपनिइक्ष्यापायताकौंहौं वन्दन करौं हाथ जोरि सिरनाय ॥२॥
करूणाकर पोषत सदा सकल सिष्टिकेशन अैसे ईश्वर को हियें रहौरैनदिनध्यान॥३॥
मेरे मन में तुम बसौ यह कैसेकहिजायतातें यह मन आपसौं "लीजै क्यों न लगाय॥४॥"

अन्त०—"अलंकार सब अर्थ के कहै एक सै आठ करे
प्रगट भाषाविषैंदेखि संस्कृत पाठ ॥१६६॥
शब्द अलंकृत अर्थ बहु अक्षर को संयोग
अनुप्रासखट विधि कहैं तेसे भाखा जोग ॥१६७॥
ताहिसार: के हेत यह कीन्हो ग्रन्थ नवीन
सो पण्डित भाषा निपुन कवितविषे परवीन ॥१६८॥
लक्षणतिय अरुपुरुष के हावभाव रस धाम
अलंकार संजोगते भाषाभूषण नाम ॥१६९॥
भाषाभूषण ग्रन्थ को सो देखैं चित्तलाय
विविधि अर्थ साईत्त के समुझै सबैवनाम ॥१७०॥
ईति श्री भाखाभूषण सम्पूर्ण शुभमरस्तु सिद्धिरस्तु ॥"

विषय—नायक-नायिका-भेद और अलंकारों के लक्षण ।

टिप्पणी : ग्रन्थ की लिपि अस्पष्ट और प्राचीन है । ग्रन्थ में ग्रन्थकार के नाम का पता नहीं चलता है, किन्तु पुस्तकालय की सूची में ग्रन्थकार श्री

पदुमन दास लिखा हुआ है।[1] यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं—५५ है।

४१. पिङ्गलसार—ग्रन्थकार—श्रीहरदेव। लिपिकार—श्रीविभीषण। अवस्था—अच्छी है। पृ० सं०—१। प्र० पृ० पं० लगभग—७६। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—फाल्गुन-शुक्ल ७ (सप्तमी), सं० १९१३ वि० (१८५७ ई०), मंगलवार।

प्रारम्भ०—"दोहा—कुंजमंजुलकंज को नव कोकिलाकलिका करै
उमकै दुर्मडारभूल गय देखिकै मन को हरैं ॥१॥
जान औसर माननीत जमान वोबच मानिकै
नन्दनन्दन को चलीमिले कैलिरंगन सानिकै ॥२॥"

अन्त०—"दोहा—आठ सगन को माधवी भगन किरीटी आठ
गंगाजल पुनिजानिये आठ रगन करि पाठ ॥२॥
ईति श्री पिंगल सार समाप्तः॥"

विषय—केवल १९ पंक्तियों का यह ग्रन्थ है। पिंगल रचना है।

टिप्पणी: ग्रन्थ की लिपि प्राचीन शैली की है। यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्रम-सं० अ०-६ है।

४२. श्री बिहारी सतसई—ग्रन्थकार—श्रीबिहारीलाल। लिपिकार—श्रीविभीषण। अवस्था—अच्छी है। पृ० सं०-३। प्र० पृ० पं० लगभग—७६। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—फाल्गुन-शुक्ल सप्तमी, सं० १९१३ वि० (१८५७ ई०), मंगलवार।

प्रारम्भ०—"श्री गणेशायनमः अथ श्री बीहारी सतसई लिख्यते।

दोहा—मेरी भव बाधा हरो राधा नागरिसोय
जातनकी झांई परें स्याम हरित दुतिहोय ॥१॥
शीसमुकुट कटिकाछनी कर मुरलीउरमाल
एहिवानिक मोमनवसो सदा विहारी लाल ॥२॥
अथमुकुट वर्णन ॥ मोरमुकुट की चन्द्रकनि यों राजत नदनन्द
मनु ससिसेखर की अकस किये सेखर शतचन्द ॥३॥"

अन्त०—"मुदीतालक्षीण ॥ कहिपठईजिय भावति पिय आवन की बात
फूली आंगन मे फिरैं आंगन आंन समात ॥९८॥
अनुशयानालक्षीण॥ फिरिफिरिविलखि ह्वै लखति फिरिफिरिलेत

---

१. पुस्तकालय में ग्रन्थकार का नाम पदुमनदास भ्रमपूर्ण उल्लिखित हुआ है। वस्तुतः यह रचना महाराजा जसवन्त सिंह की है। श्रीवेदप्रकाश गर्ग द्वारा लिखित परामर्श के अनुसार ग्रन्थकार के नाम में परिवर्तन कर दिया जाता है। —सं०

उसांस साईसिर कचसेतलौ वीत्यौ चुनत कपास ॥९९॥
सन सूक्यौवीत्यौवनो ऊखो लई उखारि
हरी हरी अरहरी अजें धरुथरहरिजियनारि ॥॥१००॥
इति श्री बिहारी दाशकृत शतई प्रथम स्वर्ग समाप्तः शूभमस्तु सिद्धिरस्तुः ॥"

विषय—नायिका-वर्णन ।

टिप्पणी : १—ऊपर के चारों ग्रन्थ पुस्तकालय में एक ही जिल्द में हैं । चारों के लिपिकार एक ही व्यक्ति हैं । लिपिकार ने सबके अन्त में अपने विषय में लिखा है—"ता० ५ फेरवरी माह फागुन सुदी ७ रोज भौवार सम्वत् १९१३ साल १८५७ ईशवी में अथ तइआर हुआ शूभ ग्रामं नादापुर श्री गंगाटते छावनी में पोथी को धनी श्री भभीछन पर्वतनायक कंपनी ४ रिजमट ४० का सहसानुज अधिकारी द्वारिका पर्वसिपाहि कंपनी ३ रेजमट सरिस अनूदास्य श्री रामकृस्नाय पद कमलेम्यौः ॥"

२—लिपिकार ने इन पोथियों के अतिरिक्त इसी के साथ और भी पोथियाँ लिखी हैं । 'सूरसागर' के प्रारम्भ में पृष्ठ-सं० २३५ दी हुई है और 'बिहारी सतसई' की समाप्ति पर २४४। इससे सिद्ध होता है कि पूर्व के २३४ पृष्ठ के ग्रन्थ नहीं मिले हैं। लिपिकार ने स्वयं भी अन्त नें स्वीकार किया है—'पोथी को धनी', इससे प्रतीत होता है कि उक्त छावनी में ही, इसके पास अनेक ग्रन्थ थे, जिन्हें वे उतारते थे। पोथी श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है । पु० क्र० सं० क-५५ है ।

४३. **श्री बिहारी सतसई**—ग्रन्थकार—बिहारी लाल । लिपिकार—× । अवस्था—अच्छी । पृष्ठ-सं०—२९ । प्र० पृ० पं० लगभग—२२ । लिपि—नागरी । रचनाकाल—× । लिपिकाल—आषाढ़-शुक्ल ३, सं० १९१२ वि० (शक १७७७), (१८५५ ई०) ।

प्रारम्भ०—"श्री राधिकावल्लभो विजयति

दोहा—मेरी भववाधा हरो राधा नागरि सोय
जातन की झाइ परे स्याम हरित द्युति होय ॥१॥
शीस मुकुट कटि काछनी कर मुरली उर माल
ए वानिक मो मन सदा वसो बिहारी लाल । २॥

मो मुकुट की चन्द्रकनि यों राजत नंद नंद
मनु ससि सेषर की अकस किय सेषर सतचन्द ३
मकरा कृत गोपाल कै कुंडल झलकत कान।
मनौ वस्यौ हिय घर समर मौटीलसत निसान"

अन्त०—"तौ वलिए भलिएवनी नागर नंद किसोर
जो तुम नीकै कैलषो मोकरनी की ओर २
हरिकरियत तुम सोए है विनीवार हजार
जेहि तेहि भाँति गिरोपरो रहो षरोदनवार ३
निज करनहि संकुचहि कत सकुचावत एहि चाल
हम सब सो अति बिमुखते सनमुष रहो गुपाल
कीजैचित सोइ तरौजेहि पतितन के साथ
मेरे गुण औ गुण गन नि गनो न गोपी नाथ ५
प्रगट भए द्विज राज कुल सुवस वसं वृज आइ
मेरो हरो करे स सव कसो कैसो नाथ ६

सोरठा—मोह दीजै मोष ज्यौ अनेक अधमनी दयो
जो बांधे ही तोष तब बाधो अपने गुननि ॥७॥"

विषय—नायक-नायिका एवं अन्य अवस्थाओं के वर्णन।

टिप्पणी : १—लिपिकार ने ग्रन्थ में अपना नाम नहीं दिया है। ग्रन्थ के अन्त में 'मुकाम वकसंडा' लिखा है। प्रतीत होता है कि नाम देना भूल गया है।

२—ग्रन्थकार ने ग्रन्थ-समाप्ति के बाद 'नृपस्तुति' लिखी है—

"चलत पाइनी गुनी गुनां धन मनि मोती लाल
भेंट भये जेहि साह सौ भाग चाहियत भाल ८
रहत न रत जं साह मुष लषिलाषन की फौज
जा जि निराषर ऊँच लै लै लाषन की मौज ९
प्रति बिंबित जै साह द्युति दीपति दरपनधाम
सव जग जीतन को कियौ काम व्यूह मनु काम १०
सामा सैन समाज की सवै साहि कै साथ
बाह बली जै साहजू फतै तिहारै हाथ ११
हुकुम पाइ जै साह की हरि राधिका प्रशाद
करै विहारी सतसई भरी अनेक सवाद १२
यद्यपि है सोभा धनी मुकता हल मै देषि
गुहै ठौर की ठौरते लर मै होति विशेष १३

सकल बिनिक्रम मे कही होंइ अर्थ अति . गौर
राम दत्त कें हुकुमते कियो सरल सब ठौर १५
धरो अनुक्रम ग्रन्थ को नायकादि अनुसार
सहर जवन पुर मे बसत हरजू कवि विच र १६
इति श्री बिहारी लाल बिरचितायांसप्तसतिकायां
नवरस बरननं नाम चतुर्थ प्रकरण १७"

३—लेख स्पष्ट, सुन्दर एवं सुवाच्य है। लिखने की शैली प्राचीन है। यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क-५८ हैं।

४४. **दोहावली**—ग्रन्थकार—गो० तुलसीदास जी। लिपिकार—×। अवस्था—प्राचीन, हाथ का बना देशी कागज। पृष्ठ-सं०—३५। प्र० पृ० पं० लगभग—२०। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—कार्त्तिक-शुक्ल ११ (एकादशी), सं० १८४९ वि०।

प्रारम्भ०—"श्री गणेशाय नमः मनि मै दोहा राम नाम मणि दीप धरु जीह देहरि द्वार
तुलशी बाहर भीतरौजो चाहसि उजियार १
राम नाम को अंक निधि शाधनता सब सुन्न
अंक रहित सब सुन्न है अंक सहित दश गुन्न २
दुगुणो तिगुणो चौगुणो पाय षष्ट अरु शात
आगे ते पुनि नौ गुणे नौ के नौ रहिजात ३
नौके नौरहिजात है तुलशी कियो विचार
रम्यो रमइआजगत मै नहीं द्वैत विस्तार ४
जथा भूमि सब बीज मय नषत निवास अकाश
राम नाम सर्व चर्म मय जानत तुलशीदाश ५
तुलशी रघुवर परमनि ताहि भजो निह संक
आदि अंत निरवाहि है जैसे नव को अंक ६"

अन्त०—"प्रकिति वचन के मिटत नहि मन सात वर्ग विलाइ ॥
तुलसी चित जल थिर भए नय आतम दर साइ ५६५
इति श्री गोसाई तुलसीदास जू कि दोहावलि संपूरन ।।"

विषय—तुलसी-साहित्य। विविध दार्शनिक विषय।

टिप्पणी : इस ग्रन्थ की लिपि अस्पष्ट और अत्यन्त प्राचीन होने तथा पतले और घने अक्षर होने के कारण सुपठ्य है। लिपिकार ने अपना नाम, पता कुछ भी नहीं दिया है, किन्तु पुस्तक के अन्त में कैथी अक्षर में यह स्पष्ट दोहा लिखा है—'चारि अक्षर के नाम है……।
आदि अक्षर को मेटि कै शो मोहि दी जै शंग।"

यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्रम सं० क-५७ है।

४५ रुक्मिणी स्वयंवर—ग्रन्थकार—×। लिपिकार—×। अवस्था—प्राचीन, देशी कागज। पृष्ठ-सं०—१२४। प्र० पृ० पं० लगभग—१८। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

आरम्भ०—'श्री गाणाधिपतये ॥ श्री सरस्वत्यै नमः ॥ श्री गुरुभ्यो नम। श्री कुलदेवताभ्यो नमः ॥ ओं नमो जी श्री कृष्णनाथ। गणेश सरस्वतीनाद्यं रीता। तु चितु कुल देवता। कवना आनामी प्रार्थु ॥१॥ तुचि अखिल आवधेजन ॥ सहज गुरु तुजनार्दन ॥'

अन्त०—"ईति श्री भागवते महापुराणे रुक्मिणी संयवरो नाम प्रसंग चवदरवा ॥१४॥ संपूर्ण ॥"

विषय—भागवत महापुराण की टीका।

टिप्पणी : १—इस ग्रन्थ की लिपि नागरी है, किन्तु ग्रन्थ किसी अन्य भाषा में है। इसकी भाषा असमिया या उड़िया से मिलती-जुलती है। लिपि भी यत्र-तत्र भिन्न है।

२—भागवत महापुराण के कुछ स्कन्धों की टीका है। मूल ग्रन्थ इसमें प्रायः नहीं है। १२वें अध्याय के अन्त में लिखा है—'ईति श्री भागवते महापुराणे हरिबंश समरी ऐकाकार टीकायां रुक्मि संवरो नाम द्वादश प्रसंगः ॥१२॥" इससे प्रतीत होता है कि यह कोई टीका-ग्रन्थ है। किन्तु ऐसा सभी अध्यायों के अन्त में नहीं है। इसमें १४ सर्ग हैं। कहीं-कहीं टीका के बाद पद्य-रचना भी है, जो अस्पष्ट है।

३—पोथी की लिपि अस्पष्ट और प्राचीन है। ऊपर के दोनों ग्रन्थ एक ही साथ बँधे हुए हैं। इनके ऊपर पुस्तकालय की सूची में 'बिहारी सतसई' लिख दिया है, जो भ्रमात्मक है। इनके ऊपर भी ऐसा ही लिखा हुआ है। दोनों ग्रन्थों की लिपि भिन्न है। दोनों के लिपिकार भी दो प्रतीत होते हैं।

४—यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० का-५७ है।

४६. बैताल पचीसी—ग्रन्थकार—फकीर सिंह। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी, हाथ का बना देशी कागज। पृष्ठ-सं०—८६। प्र० पृ० पं० लगभग—३४। लिपि—नागरी। रचनाकाल—माघ-शुक्ल बसन्त-पंचमी, सं० १७८२ वि०, सोमवार। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ०—"फकीर शीघपालैपरजाः शभशत्रुन्हकों जीतः:

उचेकुंज है एकवर शुनोतम कहु शोभ ....।
प्रीथीपालताकेभए : प्रीथजशलाजजहाज :
मोज देश देनको मोजशो: वडेगरीबनेवाज :

कवीत्य—कंजहीत मुदीत कुमुद अनहीत मुष सकुचीतरुदीतअघोमुष अमान है : हंश।

चौपाई—ऐवशमएँ गीरी कानन चारु खेलत रहें शींकार शीकारु
तापश ऐक नींवतरु तरे लगे शमाधीतपेश्या करे
नीपमन माहताही लषि डरैं मनमह कहेउ राजऐहीं हरौ।।
फीरा नगर आवा घर अपने भए वीकल कलपरत न शपने
होत प्रात शींघाशन वैशे हुकुम कीन्ह शेवकशो अंशैं
गनीका नगर मांह की ल्यावो अव रोथलकी हेरीभगावो
जेतनी मीलैं हेरीहेहुमोही हीरा रतन देउ भए तोही
शोकीन लेइ पान करवीरा देहों ताहि हेम अरुहीरा।।"

अन्त०— दोहा—"रानी लैं नीज कन्यका गइ भागीवन भवन।।
चला चदेली को नीपती आवेगवोतेही ठवन०
शींघ पैं रुख भुपके शुत चंडवीक्रम नाम
दोउ मीली शीकार जोभा गऐ कानन गनैशीत न घाम
चंद्रवती कन्या शहीत को रूप देखो जाए
कामशर लोग दोउ के गीरो तब मुरुछाऐ
चंद्रवती को चंडवीक्रम गहोतब नीज पानी
रूपवती को लहेतवतहाशीख पैंरुख जानी।।"

विषय—कविता। एक कथा के आधार पर रचना की गई है।

टिप्पणी : यह ग्रन्थ प्राचीन है। लिपि स्पष्ट है, किन्तु शैली पुरानी हैं। कहीं-कहीं शैली पुरानी होने के कारण भाव अस्पष्ट हो गये हैं। ग्रन्थ अपूर्ण है। प्रारम्भ के तीन पृष्ठ नहीं हैं। बीच-बीच में भी पृष्ठ खण्डित हो गये हैं। इस ग्रन्थ की कथा प्रारम्भ होती है—राजा शिकार के लिए जाता है। साधु को तपस्या करते देख उसे राज्य के अपहरण की चिन्ता होती है। नगर की सभी वीराङ्गनाओं को बुलाने का आदेश देकर उन्हें सर्वथा प्रसन्न रखने के लिए शृङ्गार-प्रसाधन मँगाये जाते हैं। वे तरुणियाँ आती हैं। उद्यान का वर्णन बड़ा ही मनोरम है। वनस्पतियों, वृक्षों, पौधों, फूलों आदि का चित्रण हृद्य है। लिपिकार के नाम का कहीं भी उल्लेख नहीं है। ग्रन्थ अनुसन्धेय है। यह पोथी श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क-५९ है।

४७. रामजन्म-कथा—ग्रन्थकार-श्रीसूरजदास। लिपिकार—बीसी लाल। अवस्था—अच्छी; हाथ का बना, मोटा देशी कागज। पृष्ठ-सं०—५८। प्र० पृ० पं० लगभग—३४। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—पौष-शुक्ल १२ (द्वादशी), सं० १९८८ वि० (सन् १२९५ साल), सोमवार।

प्रारम्भ०—"दोहा—अरखा अरथ नहीं जानो नहीं गुर ग्यान उपाऐ
रामकथा कछुभाखो श्री गुरु होहु सहाऐ

सुमीरना—कीरीपा करो सीवनंदन पगुवंदो करजोरी
तोहरे चरन मनोरथ सीध्य करो प्रभु मोरी
कंठ बसहु सरोसती हीरदै बसहु महेस
भुला अछरप्रगासहु गौरी के पुत्र गनेस

चौपाई—वरनो गनपती विघीनी वीनासा रामरूप तुम पुरवहु आसा
वरनो सुरसती अम्रीतदानी रामरूप तुम भली गतीजानी
वरनो चांद सुरुज के जोती रामरूप जस नीरमल मोती
वरनो वसुधा चरे जो भारा रामरूप तुम जगत पीआरा
वरनो मातुपिता के पाउ जीन्ह मोही नीरमल ग्यान सीखाउ
वरनो देव वीप्र गुन पाउ जीन्ह मोही वीदवा पड़े सीखाउ

दोहा—सुरुजदास कवी वरनो प्राननाथ जीव मोर
रामकथा कछु भाखो कहत न लागे भोर"

अन्त०—"दोहा - सभ रानी अस वोलहीं वेटा कहो तो पाप
सीता सभ की माता राम सभ के वाप

चौपाई—श्री रामजन्म सुनो मनलाइ महापाप ताकर छै जाइ
जानहु गंगा कीन्ह असनाना मानहु जगमंह दीन्हा दाना
जौ फल लेग आपीन्डा दीन्हा तासम रामजन्म सुनी कीन्हा

दोहा ॥ रामजन्म कथा ऐह पढ़े सुने मन लाऐ
महापाप ताकर छुटहीं वीस्नलोक सोजाऐ

इती श्री रामजनम समापत भइल जो पत्र मो देखा सो लीखा मम दोखनदीअते पंडीत जनसो वीनती मोरी टुटल अक्षर लेव सभजोरी"

विषय—राम-काव्य।

टिप्पणी : लिपि प्राचीन है। ग्रन्थकार का नाम ग्रन्थ के आदि या अन्त में नहीं दिया हुआ है, किन्तु यत्र-तत्र चौपाइयों में श्री 'सूरजदास' का नाम आया है। प्रतीत होता है, इसी नाम के कोई कवि थे, जिन्होंने इस काव्य की रचना की है।

यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क-६२ है।

४८. **भरत-विलाप**—ग्रन्थकार—तुलसीदास। लिपिकार—बीसीराम। अवस्था—अच्छी, मोटा, देशी कागज। पृष्ठ-संख्या—२३। प्र० पृ० पं० लगभग--२२। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—कार्त्तिक-शुक्ल ११ (एकादशी), सं० १८८८ वि० (सन् १२९५ साल), बृहस्पतिवार।

प्रारम्भ०—"प्राजासकलके राखहु प्राना हमहीं आऐ मनावन तोही
पलहु अवधपुर कोसलराजा ... ...
तुम बीनू सकल मरत है भाइ सरनलाज राखहु रघुराइ॥"

अन्त०—"दोहा—रामनाम जीन्ह पुरुखन सुनत जो ऐकोवार
ताके जन्म सुफल भऐ तासु जन्म है सार
रामनाम जीन्ह के घट तेही पुरखा तरी जाऐ
तुलसी दास भजुराम पद रामनाम मन लाऐ
इतिश्री पोथी भरथबीलाप समापत जोपत्री मोदेखासोलीखा मम दोखन दीअते पंडीत जन सोमीनतीमोरी टुटल अछर लेवसब जोरी॥"

विषय—राम-जीवन-सम्बन्धी साहित्य।

टिप्पणी : ऊपर के दोनों ग्रन्थ एक ही व्यक्ति के लिखे हुए हैं। पुस्तकलय में दोनों ग्रन्थ एक ही जिल्द में हैं और सूची में दोनों का नाम 'भरत-विलाप' ही है। लिपिकार ने अन्त में, अपने सम्बन्ध में लिखा है—"दसखत बीसीलाल कौम कुरमी का मोकाम महले टील्हा कसबे गआजी लोहासाव के बंगलामो पढ़ाते हैं लड़के लोगको महादेव के सीवाला के बगलमो इसी ठेकाने पर जो कोई को दरकार हाथ लीखावट पोथी का सब तरह का पोथी मीलेगा औ लीखवाआ हेमराज राउत कुरमी रहनेवाला गआ महेला टील्हा परका पेसा...गढ़ने का है॥"

इस ग्रन्थ के प्रारम्भ के १७ पृष्ठ नहीं हैं। उपर्युक्त पंक्तियों से प्रतीत होता है कि इन दोनों ग्रन्थों को किन्हीं 'हेमराज राउत' नाम के व्यक्ति ने लिखवाया है। ग्रन्थ अनुसन्धेय है। इस ग्रन्थ में ग्रन्थकर्त्ता का नाम नहीं आया है। किन्तु स्थान-स्थान पर श्री तुलसीदास का नाम आया है। इससे प्रतीत होता है, ग्रन्थ तुलसीदास या इसी नाम के किसी अन्य व्यक्ति का लिखा है। कहीं-कहीं की शैली गो० तुलसीदास से भिन्न है। भाषा 'रामचरित-मानस' से मिलती-सी है।

यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में संगृहीत है। पु० क्र० सं० क-६२ है।

४९. सप्तसतिका—ग्रन्थकार—गो० तुलसीदास। लिपिकार—×। अवस्था-अच्छी, हाथ का बना, मोटा, देशी कागज। पृष्ठ-सं०—८। प्र० पृ० पं० लगभग-२०। लिपि-नागरी। रचनाकाल-प्रसिद्ध। लि० का०-×।

प्रारम्भ०—"तिनहि पठे तिनहि सुनै० तिनहि सुमति प्रगास ॥
जिन्ह आसा पाछै करै० गहे अलंब निरास ॥१॥
तब लगि योगी जगत गुरु० जब लगि रहत निरास ॥
जब आसा मन मे जगी० जग गुरु योगी दास ॥२॥
हित पुनीत स्वारत सबहि० अहित असुचि बिन चाड ॥
निज मुख माणिक सम दशन० भूमि परत भौ हाड ॥३॥
निज गुण घटत न नाग नग० हरषि परित हर कोल।
गुंजा प्रभु भूषण करे० ताते बड़े न मोल ॥४॥"

अन्त०—"बर माला बाला सुमति० उर धारौ युत नेह
सुख शोभा सर साय नित० लहै राम पति गेह ॥१२७॥
भूप कहहि लघु गुणिन कह० गुणी कहहि लघु भूप ॥
महि गिरि गत दोऊ लपत० जिमि तुलसी पर्व्र रूप ॥१२८॥
तुलसी चारू विचारि बलु० परिहर बाद विवाद ॥
सुक्रित सीम स्वारथ अवधि० परमारथ मर जाद ॥१२९॥

इति श्रीमद्गोस्वामी तुलसीदास विरचितायां सप्त सतिकायां राजनीति प्रस्ताव वर्णनो नाम सप्तमः सर्गः ॥७॥"

विषय—उपदेशात्मक साहित्य।

टिप्पणी : इस नाम की पोथी पहले भी आई है, किन्तु यह पूर्ण नहीं है। इसमें केवल 'राजनीतिक प्रस्ताव वर्णन' नाम का सातवाँ सर्ग-मात्र है। ग्रन्थ में पोथी की लिपि स्पष्ट और सुन्दर है। ग्रन्थ सुपठ्य है। लिपिकार का नाम नहीं दिया हुआ है। अन्त में लिपिकार ने लिखा है —

"रगण (॥ रामजी ॥) चरण कोमल बिसद० (॥ उज्जवल ॥) यगण (॥ कपाली शिव ॥) धरै नित ध्यान ॥ नगन (॥ भजना ॥) करो तुम नगण (॥ करण ॥) षल० कटे भगण (॥ पातक ॥) सब जान ॥१॥"

यह पोथी श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क-६२ है।

५०. **युगल-सुधा**—ग्रन्थकार—विद्यारण्यतीर्थ। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी। पृष्ठ-

सं०—१०० । प्र० पृ० पं० लगभग—२७ । लिपि—नागरी । रचनाकाल—चैत्र-शुक्ल ९ (नवमी), सं० १८९८ वि०, बुधवार । लिपिकाल—× ।

प्रारम्भ०—"अथ श्याम सुधा काफी ॥ स्याम चरित है रंगरंगीलो ॥
जामे करन झलकि रहा है पुरुष पुरातन छैल छबीलो ॥१॥
रामचरित पाही पूरन होत दिनहुँ दिन बनत रसीलो ॥
जैसे भारत से श्रुति को रस घुलत प्रकासतगरु अग भीलो ॥२॥"

अंत०—"बसंत ॥—मंगल नाम रूप जग मंगल मंगल गुनगन मंगल धाम ॥
मंगल चरित साधुजन मंगल जग हितकारक पूरन काम
मंगल श्री वसुदेव देवकी नंद जसोदा गोकुल ग्राम ॥
मंगल जमुना मंगल हुके मंगल सुन्दर स्यामा स्याम ॥३०१॥
होरी ॥ जा दिन वजत वधाई ॥ श्री रामजनम की ॥ तादिन कृष्ण
सुधा पूरन भइ संतन की प्रभुताई ॥१॥
संवत आठ अंक अष्टादश ॥१८९८॥ बार परो बुधआई ॥
राम स्याम मे भेद नही कछु असिमति गुरुन्ह सिषाई ॥२॥
श्रीमत्काशिराज के अति प्यारे मान बुद्धि अति पाई ॥
बाबू राम प्रसन्नसिंह के यह रुचि हेतु बनाई ॥३॥ जो रस कहत
शेष श्रुति सारद बड़ देवहु सकुचाई ॥ सो रस ढीठहोइ कैं
कहनौ यह केवल बतराई ॥४॥३०१॥"

विषय—श्रीकृष्ण और श्रीरामचन्द्र के जीवन पर आधारित ।

टिप्पणी : इस ग्रन्थ में विविध रागों—कहरवा, मालश्री, घनाक्षरी, होरी, सोरठहोरी आदि के गीत हैं। ग्रन्थ अनुसन्धेय है। वर्णन-शैली और भाषा भी अच्छी है। ग्रन्थ सुपठ्य है। ग्रन्थ में लिपिकार का नाम नहीं है, किन्तु प्रतीत होता है, ग्रन्थकार ही लिपिकार है।

यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में संगृहीत है। पु० क्र० सं० क-६४ है।

५१. **रसकल्लोल**—ग्रन्थकार—कर्णकवि । लिपिकार—× । अवस्था—अच्छी, हाथ का बना मोटा देशी कागज । पृष्ठ-सं०—१८ । प्र० पृ० पं० लगभग—२१ । लिपि—नागरी । रचनाकाल—× । लिपिकाल—माघ-शुक्ल ८ (अष्टमी), सं० १९०६ वि० (१८४९ ई०) ।

प्रारम्भ०—"श्री गणेशायनमः श्री महादेवाय नमः अथरस कल्लोल लिख्यते
दोहा सुमनवंत शोभासदनवारन वदन विचारि
वितरत फलनित रत चतुर सुरतरवर कर चारि १

जगरानि बानी चरण दीपति सुरसरिपूर
सुर पुरनरपुरनागपुर पूरतिगरिमगरूर २
अरूणोदय शोभित चरण शंभु तिहारे
मंजु पाइ तिन्है निशि दोसहूँ फूलोहीतल कंजु ३"

मध्य०—"विलास हाव लक्षण—पतिविलोकि मनहरन को तरूणी विरत्रति हाव
सो विलास पहिचानिए कबिकुल सरल सुभाव १६०

यथा—उझकि उझकि सकुचति दवति झझिकति लकि मुसकाइ
भूरि भाय अति के लषे सके न पति कहु जाइ ॥१६१॥"

अन्त०—"प्रसाद यथा—सरदचन्द सारद कमल भारद होत विशेषि
छवि छलकत्त झलकत बहुत ललकत मुनि मन देषि ॥२८३॥
या में पुरुषा कोमला उपनागरिका होइ
उदाहरण कीन्है नमैं क्रमते भानो सोई ॥२९३॥
रीत चारइ देसकी सो समासते होई
भाषा मे या तैन मैं बरणी सुमति बलोइ ॥२९४॥
इति श्रीमद्वंशीधरात्मजे कविकरणे विरचिते रशकल्लोल रस धनिव्यंगादि
निरूपन नाम सपूर्णम् ॥"

विषय—रस, ध्वनि और व्यंग्यादि का निरूपण तथा लक्षण।

टिप्पणी : ग्रन्थ सुपठ्य, विवेच्य और अनुसन्धेय है। इसमें रस और भाव-युक्त उत्कृष्ट लक्षण और उदाहरण तथा बीच-बीच में उदाहरण के अर्थ भी लिख दिये गये हैं। ग्रन्थ में लिपिकार का नाम नहीं है। ग्रन्थ की पुष्पिका में कवि ने अपने को वंशीधर का आत्मज लिखा है। सं० १८५६ वि० (१८०० ई०) में वर्त्तमान; पन्नानरेश महाराज हिन्दूपति के आश्रित करण कवि की यह रचना—'रसकल्लोल'—काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा को भी खोज में मिली है। दे०—खो० वि० १९०४, ग्र० सं० १५। विक्रमाब्द १७९७ के लगभग वर्त्तमान, 'साहित्य-चन्द्रिका' के रचयिता कवि करण भट्ट से ये भिन्न हैं। इनकी रचनाओं की प्रतियाँ राजस्थान के जैन भाण्डागारों में भी सुरक्षित हैं। कवि पर अनुसन्धान तथा विशिष्ट अध्ययन नहीं हुआ है। इनके पिता वंशीधर ने भी काव्य-रचना की थी। यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं०—क-६६ है।

५२. रसचन्द्रिका—ग्रन्थकार—इस्वी खाँ। लिपिकार—हरिवंश त्रिपाठी। अवस्था—अच्छी, हाथ का बना देशी कागज। पृष्ठ-सं०—२१७। प्र० पृ० पं० लगभग—२२। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—संवत् १८८१ वि० (१८२४ ई०)।

सं०—१०० । प्र० पृ० पं० लगभग—२७ । लिपि—नागरी । रचनाकाल—चैत्र-शुक्ल ९ (नवमी), सं० १८९८ वि०, बुधवार । लिपिकाल—× ।

प्रारम्भ०—"अथ श्याम सुधा काफी ॥ स्याम चरित है रंगरंगीलो ॥
जामे करन झलकि रहा है पुरुष पुरातन छैल छबीलो ॥१॥
रामचरित पाही पूरन होत दिनहुँ दिन बनत रसीलो ॥
जैसे भारत से श्रुति को रस षुलत प्रकासतगरु अग भीलो ॥२॥"

अन्त०—"बसंत ॥—मंगल नाम रूप जग मंगल मंगल गुनगन मंगल धाम ॥
मंगल चरित साधुजन मंगल जग हितकारक पूरन काम
मंगल श्री वसुदेव देवकी नंद जसोदा गोकुल ग्राम ॥
मंगल जमुना मंगल हुके मंगल सुन्दर स्यामा स्याम ॥३०१॥

होरी ॥ जा दिन वजत वधाई ॥ श्री रामजनम की ॥ तादिन कृष्ण
सुधा पूरन भइ संतन की प्रभुताई ॥१॥
संवत आठ अंक अष्टादश ॥१८९८॥ बार परो बुधआई ॥
राम स्याम मे भेद नही कछु असिमति गुरुन्ह सिषाई ॥२॥
श्रीमत्काशिराज के अति प्यारे मान बुद्धि अति पाई ॥
बाबू राम प्रसन्नसिंह के यह रुचि हेतु बनाई ॥३॥ जो रस कहत
शेष श्रुति सारद बड़ देवहु सकुचाई ॥ सो रस ढीठहोइ कै
कहनौ यह केवल वतराई ॥४॥३०१॥"

विषय—श्रीकृष्ण और श्रीरामचन्द्र के जीवन पर आधारित ।

टिप्पणी : इस ग्रन्थ में विविध रागों—कहरवा, मालश्री, घनाक्षरी, होरी, सोरठहोरी आदि के गीत हैं। ग्रन्थ अनुसन्धेय है। वर्णन-शैली और भाषा भी अच्छी है । ग्रन्थ सुपठ्य है । ग्रन्थ में लिपिकार का नाम नहीं है, किन्तु प्रतीत होता है, ग्रन्थकार ही लिपिकार है ।

यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में संगृहीत है। पु० क्र० सं० क-६४ है ।

५१. **रसकल्लोल**—ग्रन्थकार—कर्णकवि । लिपिकार—× । अवस्था—अच्छी, हाथ का बना मोटा देशी कागज । पृष्ठ-सं०—१८ । प्र० पृ० पं० लगभग--२१ । लिपि—नागरी । रचनाकाल—× । लिपिकाल—माघ-शुक्ल ८ (अष्टमी), सं० १९०६ वि० (१८४९ ई०) ।

प्रारम्भ०—"श्री गणेशायनमः श्री महादेवाय नमः अथरस कल्लोल लिख्यते
दोहा सुमनवंत शोभासदनवारन वदन विचारि
वितरत फलनित रत चतुर सुरतरवर कर चारि १

जगरानि बानी चरण दीपति सुरसरिपूर
सुर पुरनरपुरनागपुर पूरतिगरिमगरूर २
अरूणोदय शोभित चरण शंभु तिहारे
मंजु पाइ तिन्है निशि दोसहूँ फूलोहीतल कंजु ३"

मध्य०—"विलास हाव लक्षण—पतिविलोकि मनहरन को तरूणी विरत्रति हाव
सो विलास पहिचानिए कबिकुल सरल सुभाव १६०
यथा—उझकि उझकि सकुचति दवति झझिकति लकि मुसकाइ
भूरि भाय अति के लषे सके न पति कहु जाइ ॥१६१॥"

अन्त०—"प्रसाद यथा—सरदचन्द सारद कमल भारद होत विशेषि
छवि छलकत झलकत बहुत ललकत मुनि मन देषि ॥२८३॥
या में पुरुषा कोमला उपनागरिका होइ
उदाहरण कीन्है नमै क्रमते भानो सोई ॥२९३॥
रीत चारइ देसकी सो समासते होई
भाषा मे या तैन मैं बरणी सुमति बलोइ ॥२९४॥
इति श्रीमद्वंशीधरात्मजे कविकरणे विरचिते रशकल्लोल रस धनिव्यंगादि निरूपन नाम सपूर्णम् ॥"

विषय—रस, ध्वनि और व्यंग्यादि का निरूपण तथा लक्षण।

टिप्पणी : ग्रन्थ सुपठ्य, विवेच्य और अनुसन्धेय है। इसमें रस और भावयुक्त उत्कृष्ट लक्षण और उदाहरण तथा बीच-बीच में उदाहरण के अर्थ भी लिख दिये गये हैं। ग्रन्थ में लिपिकार का नाम नहीं है। ग्रन्थ की पुष्पिका में कवि ने अपने को वंशीधर का आत्मज लिखा है। सं० १८५६ वि० (१८०० ई०) में वर्त्तमान; पन्नानरेश महाराज हिन्दूपति के आश्रित करण कवि की यह रचना—'रसकल्लोल'—काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा को भी खोज में मिली है। दे०—खो० वि० १९०४, ग्र० सं० १५। विक्रमाब्द १७९७ के लगभग वर्त्तमान, 'साहित्य-चन्द्रिका' के रचयिता कवि करण भट्ट से ये भिन्न हैं। इनकी रचनाओं की प्रतियाँ राजस्थान के जैन भाण्डागारों में भी सुरक्षित हैं। कवि पर अनुसन्धान तथा विशिष्ट अध्ययन नहीं हुआ है। इनके पिता वंशीधर ने भी काव्य-रचना की थी। यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं०—क-६६ है।

५२. रसचन्द्रिका—ग्रन्थकार—इस्वी खाँ। लिपिकार—हरिवंश त्रिपाठी। अवस्था—अच्छी, हाथ का बना देशी कागज। पृष्ठ-सं०—२१७। प्र० पृ० पं० लगभग—२२। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—संवत् १८८१ वि० (१८२४ ई०)।

प्रारम्भ०—"श्री गणेशाय नमः । अथ पोथी रस चन्द्रिका लिष्यते ॥
मूल ॥ अपने अपने मत लगे ॥ बादि मजावत सोर ॥
ज्यौं त्यौं सबई सेईये ॥ पकै नन्द किशोर ॥
टीका ॥ इस जगह बाद को अर्थ वृथा को है : हेतार्थ दोहे का यह है ॥ की अपने मत का झगरा करना वृथा हैं ॥ क्योंकि जिननैं सेआ तिननैं मानो नन्द किसोर ही को सेया है ॥ क्योंकि ब्रह्मा शिवसनकादि सब बिस्नु ही हैं ॥ तौ जिनने जिसको पूजी तिन मानो विश्नु ही को पूजा ॥ प्रमानालंकार ॥ तिसकालन्क्षण ॥"

अन्त०—"मूल ॥ हा हा बदन उघारी द्रिग ॥ सफल करैं सब कोइ ॥
रोज सरोजनिके परे ॥ हंसी ससी की होइ ॥७११॥

टीका ॥ सबेर का समैं है सारी रात मनावते सवेरा हो गया । सो सषी नाइ का सोकह है ॥ की हा हा वदन उघारी हम सबसषीयां द्रिग सफल करो ॥ और सकारे हुए सों जो ए कमलषले है । सो तेरामुषचन्द देषेसोंमूंदि जाहि ॥ और सकारे हुए सों जो चांद मंद हुआ है ॥ ति से हंसी होइ ॥ क्योंकि तेरा मुषचन्द अैसा है ॥ की सवेरा हुएँ भी उसकी जोति मन्द नहीं होती ॥ और जो सषीसें चन्दमुषी लीजैं ॥ औ सरोज सों कमल नैंनी लीजै ॥ तौ अर्थ तो होते हैं ॥ पै ब्यंग सो छिपै होते हैं ॥

अ(लं)कार प्रतीपः ॥ चौथो ॥ उपमेय की समता लाइक उपमान न होइ ॥ इहाँ मुष आगैं ससि की हंसी कही ॥ और नेत्रनिके कमलनि की कमी कही ॥७११॥

मूल ॥ किय प्रसंग नर वर नृपति ॥ छत्रसिंह भुअमान ॥ पढत बिहारी सतसई ॥ सब जग करत प्रमान ॥ कवि न कीए टीका प्रकट ॥ अर्थ न काहु कीन्ह ॥ अपने कविता के लिए अधिक कठिन करि दीन्ह ॥ कछुक रहै सन्देह नहीं ॥ अैसी टीका होइ ॥ बांचि बचन को पद अरथ ॥ समुझि लेइ सब कोइ ॥ तब सब को हित को सुगम ॥ भाषा वचन विलास ॥ उदित्ते इस बिषां कियो ॥ रस चन्द्रिका प्रकास ॥"

विषय—बिहारी सतसई की टीका ।

टिप्पणी : यह ग्रन्थ श्री इस्वी खाँ का है । इन्होंने श्रीबिहारीलाल-कृत सतसई' की श्री राजा छत्रसिंह की आज्ञा से बड़ी अच्छी टीका की है । इसके पद अच्छे बन पड़े हैं । भाषा प्राचीन, कुछ-कुछ 'रामचरितमानस' जैसी है । उदाहरण अच्छे और अर्थगर्भ हैं । ग्रन्थ सुपठ्य है । लिखने की शैली और अक्षर पुराने हैं । टीका में मूल विषय का समीचीन प्रतिपादन है । अलंकारों का विवेचन भी अच्छा है । ग्रन्थकार इस्वी खाँ की रचना काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा को भी खोज में मिली है । इनके सम्बन्ध में

मगध-विश्वविद्यालय, बोधगया के प्रवाचक डॉ० बटेकृष्ण ने शोध किया है। यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क-६७ है।

५३. तुलसी सतसई—ग्रन्थकार—गो० तुलसीदास। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी, मोटा हाथ का बना, देशी कागज। पृ०-सं०—४४। प्र० पृ० पं० लगभग—१६। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—श्रावण-कृष्ण तृतीया, सं० १९७४ वि०, गुरुवार॥

प्रारम्भ०—"श्री रामो विजयतेराम्
नमो नमो श्री राम प्रभु परमातम पर ध्याम
जेहि सुमिरत सिधि होत है तुलसी जनमन काम १
राम वाम दिशि जानकी लखन दाहिनी ओर
ध्यान सकल कल्याण कर तुलसी सुरतरु तोर २
परम पुरुष पर धाम वर जापर ऊपरन आन
तुलसी सो समुझत शुनत राम सोई निर्वान ३
सकल सुखद गुणजासु सो राम कामना हीन
सकल काम प्रद सर्वहित तुलसी कहहि प्रवीन ४"

अन्त०—"भूप कहहिलहु गुणिन कह गुनि कहहि लहु भूप
महिगिरिगत दोउ लषत जिमि तुलसी पर्वस्वरूप १२८
दोहा—चारु विचारिचलु परिहरिबाद बिबाद
सुकृत सीम स्वारथ अवधि परमारथ मरजाद १२९
इति श्री मद्गोस्वामी तुलसीदास बिरचितायां सप्त सतिकायां राज-नीति प्रस्ताव वर्णनो नाम सप्तम स्वर्गः ॥७॥"

विषय—दर्शन।

टिप्पणी : (यह ग्रन्थ पहले भी विवृत हो चुका है।) इसमें ७ सर्ग हैं, जिनमें १. प्रेम-भक्ति निर्देश, २. (अस्पष्ट), ३. संकेत-बक्रोक्ति, ४. आत्मबोध-निर्देश, ५. कर्मसिद्धान्त योगो नाम, ६. ज्ञानसिद्धान्तयोगो नाम, ७. राजनीति प्रस्ताव वर्णनोनाम विषय हैं। इस ग्रन्थ में कुल ७४७ (१ में ११०, २ में १०३, ३ में १०१, ४ में १०४, ५ में ९९, ६ में १०१ और ७ में १२९) पद हैं। ग्रन्थ में लिपिकार ने अपना नाम नहीं दिया है। यह ग्रन्थ अस्तव्यस्त रूप में है। इनके सभी पृष्ठ पृथक्-पृथक् बिखरे हैं। ग्रन्थ अनुसन्धेय है। लिपि पुरानी है। यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क-७३ है।

५४. रसराज—ग्रन्थकार—श्री मतिराम। लिपिकार—मुंसिग्रिफ लाल। अवस्था—अच्छी

है। पृष्ठ-सं०-- ३८। प्र० पृ० पं० लगभग --४१। रचनाकाल—प्रसिद्ध।
लिपिकाल— भाद्र-शुक्ल एकादशी, सं० १९२१ वि०, सोमवार।

प्रारम्भ०—"श्रीगणेशायनम ॥ अथ रसराज मतिराम कृत लिख्यते ॥ यथा
कवित्व ॥ ध्यावै सुरासुर सिद्ध समाज महेशाहि आदि महामुनि ज्ञानी ॥
जोग में यंत्र मे मंत्र मे तंत्र मे गावैं सदा श्रुति शेष भवानी ॥
संकट भाजन आनन की दुति सुन्दर दंडउ दण्ड सो जानी ॥
ध्यान सदा पद पंकज को मतिराम तबै रसराज बखानी ॥१॥

दोहा ॥ श्रीगुरुचरण मनाइकै गणपति को उर ल्याई ॥
रसिक हेत रसराज किय सुकविन को सुखदाई ॥२॥

प्रार्थना दोहा ॥ कवित्तार्थ जानौं नहीं कछुक भयो संबोध ॥
भूल्यौ भ्रमते जो कछु सुकवि पढ़ेगे सोध ॥३॥
वरनि नायिका नायकनि रच्यो ग्रन्थ मतिराम
लीला राधारमन की सुन्दर जश अभिराम ॥४॥

दोहा ॥ होत नायिका नायकहि आलंबित शृंगार ॥
ताते बरनो नायिका नायकमति अनुसार ॥५॥
उपजत जाहि विलोकि कै चित्तवीच रसभाव ॥
ताहि वखानत नायिका जे प्रवीन कविराव ॥६॥

उदाहरणम् सवैया ॥ कुन्दन को रंग फीको लगे झलकै अति अंगनि चारु गुराई ॥
आंखिनि में अलसानि चितौनि मे मंजु विलासन की सरसाई ॥
को विन मोल विकात नहीं मतिराम लहै मुसुक्यानि मिठाई ॥
ज्यों ज्यों निहारिये नेरे ह्वै नैननि त्यों त्यों खरी निकरै सीनिकाई ॥७॥"

अन्त०—"दोहा ॥ ऊनमिख लोचन बाल के ॥ याते नन्दकुमार
मीच गईजरिवीच ही ॥ विरहानल की झार ॥४२७॥
समुझि समुझि सब रीषि हैं ॥ सज्जन सुकवि समाज ॥
रसिकन को रस को कियो नयो ग्रन्थराज ॥४२८॥
इतिश्री सुकविमतिरामविरचितायांरसराज समाप्तः ॥"

विषय—नायक-नायिका-रसादि लक्षण-ग्रन्थ।

टिप्पणी : ग्रन्थ की लिपि अच्छी है। भाषा परिमार्जित और उदाहरण
भावपूर्ण हैं। ग्रन्थ के लिपिकार ने अन्त में लिखा है—
"महिनर कर निधि इन्दुयुत ॥ सम्बत ब्रिक्रम राय ॥
भादो शुक्ल यकादसी ॥ चन्द्रवार सुखदाय ॥
कवि मतिराम सुजान कृत ॥ यह रसराज रसाल ॥
पढ़त सुनत आनंद लहत ॥ लिख्योसुसिंग्रिफ लाल ॥ इति शुभमस्तु ॥"

प्रसिद्ध कवि मतिराम-रचित यह ग्रन्थ प्रसिद्ध है। तिगवांपुर (कानपुर)-निवासी कान्यकुब्ज ब्राह्मण-परिवार में, सं० १७०७ वि० (१६५० ई०) में वर्त्तमान; मुगल बादशाह औरंगजेब और बूंदी-नरेश भाऊ सिंह के दरबारी कवि; चिन्तामणि, भूषण और नीलकण्ठ के अग्रज कवि मतिराम की यह रचना काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा को भी खोज में मिली है। दे०—खो० वि० १९००, ग्र० सं०—४०; खो० वि० १९०१, ग्र० सं० ६७; खो० वि० १९०६–८, ग्र० सं०—१९६ ए०।

इस रचना 'रसराज' का एक हस्तलेख बि० रा० भा० प०, पटना के प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थ-शोध-विभाग में सुरक्षित है। दे०—प्राचीन हस्तलिखित पोथियों का विवरण, चौथा खण्ड, पृ० सं० ३२, कवि-सं० ४५९। बिहार रिसर्च सोसाइटी, पटना को भी इस ग्रन्थ के दो हस्तलेख खोज में मिले हैं, जो सहरसा जिले के सुखपुर-निवासी बा० चेतमनि सिन्हा के पास सुरक्षित हैं। दे०—प्राचीन हस्तलिखित पोथियों का विव ण, छठा खगड, पृ० सं० ३८–३९; कवि-सं० ३८ और ३८ (क)।

यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं०—क-६८ है।

५५. **रस-रहस्य**—ग्रन्थकार—दिनेश कवि। लिपिकार—जुगल किशोर लाल। अवस्था—अच्छी। पृष्ठ-सं०—९७। प्र० पृ० पं० लगभग—३६। लिपि—नागरी। रचनाकाल—माघ-शुक्ल पंचमी (वसंत पंचमी), सं० १८८३ वि०। लिपिकाल—चैत्र-शुक्ल पंचमी, सं० १९३७ वि० (सन् १२८७ साल)।

प्रारम्भ०—"श्री गणेशाय नम : दोहा—जैं जै जै गज बदन जै॥ जै गिरिनंदिनिनंद॥
जै सिंदुर सोभाधरन जै जग आनंद कंद।

बरवै—जेकर दनद्वैमातुर त्रिभुवन सांई॥ जै भुजचारि पचैकर षटमुष भाइ.

कवित्त—सहै भालबाल इंदु सुन्दर सिंदुर सोभा एक रद करवर चारिपाइयत है॥
नंद जगदंब को उदरलंब चारूतन मूषक प्रसिद्ध जाको जान गाइयत है॥
जाहिर अनाथनि सनाथ के करणहारे अैसे गणनाथ तिन्हें माथ नाइअत है॥
चारि छौ अठारह दिनैस सद ग्रन्थ आदि जाको नाम पीठ पठिया पाइयत है॥३॥"

अन्त०—"दोहा॥ ताकों मन मोहन कियो करी विकल चलि जहि
वह महन महन हरे मोहन मोहन महि
जासु सवारी सोभलषी भई बाबरी बाल
आवै चलिहैं रैन तूं सषी न है नन्दलाल

ऐक छंद में छंद बहुभासत आय अनेक
ताहि सर्वतो भद्र कहि जिनके बड़ी विवेक। इति संपूर्णम् ॥"

विषय—नायक-नायिका-रसादि लक्षण।

टिप्पणी : यह ग्रन्थ टेकारी राज के श्रीदिनेश कवि का है। इसमें नायक-नायिका आदि के लक्षण-उदाहरण के अतिरिक्त टेकारी राज, राजवंश, फल्गु नदी तथा मगध-गौरव को आधार बनाकर बड़ी ही सुन्दर रचना की गई है। कवि ने स्वयं लिखा है—"रस रहस्य वरनत रसिक सुषद-गौरिपद ध्याइ। संवत् अठारह सैत्रिजुत अस माघसित चारु। ऋतुपति पंचमी को भयो रस रहस्य अवतार॥" इसमें टेकारी के राजा, कवि 'खानबहादुर' की भी चर्चा है। ग्रन्थ अनुसन्धेय है। इनके सम्बन्ध में कहा जाता है, बिहार-प्रदेश के नवादा जिले (पूर्ववर्त्ती गया जिला) में अवस्थित दादपुर ग्राम के निवासी श्रीअवधविहारी लाल जी के पिता श्रीसीताराम के ये आश्रित कवि थे। श्रीसीताराम जी के बड़े पुत्र श्रीगुरुबख्श लाल (कवि नाम—गुरुदास) ने कई ग्रन्थ रचे थे, जिनमें 'कुण्डलिया रामायन' उपलब्ध है। इनका रचना-काल उन्नीसवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध माना गया है। श्रीअवधविहारी लाल, पटना-विश्वविद्यालय (बी० एन० कॉलेज) के हिन्दी-विभाग के व्याख्याता प्रो० डॉ० अमरनाथ सिन्हा के नाना थे। श्रीअवध-विहारी लाल की भी साहित्यिक रचनाएँ मिली हैं।

विस्तृत अध्ययन के लिए देखिए—बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी से प्रकाशित ग्रन्थ 'रीति-साहित्य को बिहार की देन' और 'परिषद्-पत्रिका' के सन् १९७२ ई० के अंक ४ में 'कवि गुरुदास लाल और कुण्डलिया रामायन' शीर्षक लेख। फिर भी, ग्रन्थकार पर अभी पर्याप्त अनुसन्धान अपेक्षित है।

यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क-७० है।

५६. **रसिकप्रिया**—ग्रन्थकार—केशवदास (ओरछा)। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी है, प्राचीन, देशी कागज। पृष्ठ-सं०—५५। प्र० पृ० पं० लगभग—४८। आकार—६"×९"। भाषा—हिन्दी। रूप—प्राचीन। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—ज्येष्ठ-शुक्ल नवमी, सं० १८६७ वि० (१८१० ई०)।

प्रारम्भ०—"श्री गणेशायनमः॥ रसिकप्रिया लिष्यते॥

सप्पय ॥ एक रदनगजबदनसदनबुद्धि मदनकदनसुत ॥
गौरिनन्द आनन्दकन्द जगबन्दवन्दजुत ॥
सुखदायक दाएक सुक्तगणनाएकणएक ॥
खलधारकधायक हरि प्रसनलाएकलाएक ॥
गुरुगुणअनन्त भगवन्तभव, भगतिवन्त भवभयहरन ॥
जय केशवदाशनिवाशनिधि लम्बोदरअसरनशरन ॥१॥"

मध्य की पंक्तियाँ (पृ० सं० २८) ॥ विप्रलम्भभेद दोहा ॥
"विप्रलम्भश्रींगार के चारिप्रकार प्रकास ॥
प्रथमपुर्व अनुरागपुनि करुणामानप्रवास ॥३॥
॥ पूर्वानुरागलक्षन दोहा ॥
देषत ही दुतिदंपतिहि उपजिपरत अनुराग ॥
विनुदेषै दुख देखिए सो पुर्वानुराग ॥४॥"

अन्त०—"केशव सोरह भाव, सवरणमयसुकुमार ॥
रसिकप्रिया के जानियहु शोरहइे श्रिंगार ॥१५॥
एहिविधिकेशवदास सरस अनरस कहे विचरि
बरणतभै भूल्यौ कहुँ कविकुललेहु सुधारि ॥१६॥
जैसे रसिकप्रिया बिना होत दिनहुँ दिन-दीन ॥
त्योहीं भाषा कविसबै रसिकप्रिया के हीन ॥१७॥
बाढ़ै रतिमति अतिपठै जानै सब रस रीति ॥
स्वारथ परमारथ लहै रसिकप्रिया के प्रीति ॥१८॥
सुनहु सवैया दुई सै क्ष्यासठि और समान ॥
सोरह क्ष्यासी जुगल पद क्षप्पय तीनि प्रमान ॥१९॥ संख्या ॥५४५॥
इतिश्रीमन्महाराजकुमार श्री इन्द्रजीत बिरचितायां रसिकप्रियायां
अनरसवर्णनं नाम षोडसमः प्रभावः ॥१६॥"

विषय—नायक-नायिका, हाव-भाव, रस-अनरस, श्रृंगार तथा आनन्द का वर्णन। सम्पूर्ण ग्रन्थ में १६ प्रकाश (अध्याय) हैं। सम्पूर्ण पद्य-संख्या ५४५ है। ग्रन्थ में विषय-शीर्षक लाल पेंसिल से रेखांकित हैं।

टिप्पणी : १. यह ग्रन्थ श्रीकेशवदास-कृत है। प्रत्येक अध्याय के अन्त में 'श्री मन्महाराजकुमार इन्द्रजीत' लिखा है। लिपिकार ने ग्रन्थ के अन्त में लिखा है—"रत्नाकर ऋतुसिद्धिभू बरस जेष्ठ तिथि अंक। शुक्लपक्षलिषि परनीबासर शुभगमयंक ॥१॥"

२. ग्रन्थ की लिपि प्राचीन होने के कारण अस्पष्ट है। शैली भी पुरानी है। ग्रन्थ में 'ख' के लिए सर्वत्र प्रायः 'ष' का प्रयोग हुआ है। ग्रन्थ सम्पूर्ण है।

ग्रन्थ की समाप्ति के बाद जिस व्यक्ति ने पुस्तकालय को दिया है, वह लिखता है—"यह पुस्तक मैंने श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय को हार्दिक प्रेम-पहार-स्वरूप प्रदान किया—उमानाथ पाठक, बहेलियाबिगहा, टेकारी, मिति फाल्गुन-सुदी ९, सं० १९७८ वि० ॥

३. यह पोथी श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र०-सं० का०-७१ है।

५७. रसिकप्रिया—ग्रन्थकार—श्रीकेशवदास। लिपिकार—सिंग्रिफलाल। अवस्था—अच्छी, प्राचीन, हाथ का बना, मोटा, देशी कागज। पृष्ठ—५०। प्र० पृ० पं० लगभग—२२। आकार—६"×५३/४"। पूर्ण रूप प्राचीन। लिपि—नागरी। रचनाकाल—कार्त्तिक-शुक्ल सप्तमी, सोमवार, सं०, १६४८ वि०। लिपिकाल—मार्गशीर्ष-शुक्ल सप्तमी, गुरुवार सं० १९१६ वि० (सन् १८५९ ई०)।

प्रारम्भ०—"श्री गणेशायनमः ॥छ०॥

एकरदनगजबदनसदनबुधि मदनकदनसुत।
गौरिनन्द आनन्दकन्द जगबन्दचन्दजुत॥
सुखदायक दायक सुकृतिगणनायक नायक।
षलघायक घायक दारिद्रसबलायक लायक॥
गुरगुणअनन्त भगवन्तभयभक्तिबन भवभयहरन।
जै केशोदास निवासनिधिलम्बोदर असरनसरन॥ १॥
श्रीबृषभानकुमारिहेतु सिंगाररूपमय।
बासहांस रसहरनमातु बन्धनकरुणामय॥
केसीप्रतिअतिरुद्र बीर मार्योवत्सासुर।
भै दावानलपानुपी ये विभत्स कवीवर॥
अतिअद्भुतबंचीविरंचि मतिशांतसन्तत सोचिचित।
कहै केशव सेवहुरसिकजननबरसमै ब्रजराजनित॥ २॥

॥ यथा दोहा ॥

नदी बयत बैंतीरतह तीरथ तुङ्गारन्य।
नगर बौड छोबहु बसय धरती तल में धन्य॥
आश्रमचारि बसै तहा चारिवर्ण सुभकर्म।
जपतप विद्याबेदबिधि सबै बठै धनधर्म॥ ४॥
अपने अपने धर्म तँह सबै सदा सुखकारि।
जासो देश विदेस के रहे सब नृपहारि॥ ५॥
रच्यो विरंचि विचारितँह नृपमनि मधुकरसाहि।
गहरवार कासीसुर रविकुल मण्डनजसुजाहि॥ ६॥

ताकोपुत्र प्रसिद्धमहि मण्डन दुल्लहराम ।
इन्द्रजीत ताको अनुज सकलधर्मको धाम ॥ ७ ॥
दीन्हीं ताहि न्रसिंहजुत तनमनरण जयसिद्धि ।
हित की लक्ष्मण रामज्यों भरेराज सो बृद्धि ॥ ८ ॥
तिनकबिकेसबदास सो कियोधर्म्मसो नेहु ॥
सबसुखदैकरि यह कह्योरसिकप्रियाकरिदेहु ॥ ९ ॥
सम्वत्सोरहसै बरष बीतो अठतालीस ॥
कातिकसुदितिथिसप्तमी बारबरनिरजनीस ॥ १० ॥
अतिरतिमतिगति एक करि बिबिधबिबेकविलास ॥
रसिकनि को रसिकप्रिया कीन्ही केसवदास ॥ ११ ॥
ज्योंबिनुडीठिन सोभियेलोचन लोलविशाल ॥
त्योंही केसवसकल कबि बिनुबानीनरशाल ॥ १२ ॥
ताते रुचि सो सोचि पचिकरि यै सरस कवित्त ॥
जाते स्याम सुजान के सुनत होत बस चित्त ॥ १३ ॥"

मध्य की पंक्तियाँ (पृष्ठ-सं० २५)—"प्रछन्नविप्रलब्धा ॥ सवैया ॥
सूल से फूल सुवास कुवास सी नाकसी से भए भौन स भागे ॥
केसव वाग महावन सो जरुसी चढ़ि जोन्ह सवै अंग दागे ॥
नेह लग्यो उरनाहर सो निसिनाह घटीक कहूँ अनुरागे ॥
गारी सी गीत विरीविसुसी सिगरेई सिंगार अंगार मे लागे ॥२६३॥"

अन्त०—"यहबिधि केसवदाश रस अनरस कहे बिचारि
बर्णभूल परिहो जहाँ कविकुल लेहु सुधारि ॥ ५११ ॥
जैसे रसिकप्रिया बिना देषिय दिन दिनदीन ॥
त्योही भाषाकबि सबै रसिकप्रिया करिहीन ॥५१२॥
बाढ़ै रतिमति अतिपढै जानै सबरसरीति ।
स्वारथ परमारथ लही रसिकप्रिया की प्रीति ॥५१३॥
इती श्री मन्महाराज कुमार श्री इन्द्रजीत विरचितायांरसिकप्रियायांरस अनरस वर्णन नाम षोडसः प्रभावः ॥१६॥"

विषय—काव्यलक्षण ग्रन्थ। नायक-नायिका, हाव-भाव, रस, अनरस, शृंगार आदि का वर्णन। पूर्ण पद्य-संख्या—५१३। विषय-शीर्षक का लाल स्याही से उल्लेख हुआ है।

टिप्पणी : १. यह ग्रन्थ कवि ने राजकुमार इन्द्रजीत के आदेश से बनाया, जैसा कि ऊपर के पद्य में आ चुका है। अतएव सभी सर्गों की समाप्ति पर उक्त राजकुमार का ही नाम कवि ने ग्रन्थकार के रूप में दे दिया है।

२. कवि ने इसकी रचना—"सम्बत्सोरह सै बरष बीती अठतालीस।
कातिक सुदि तिथि सप्तमी बारबरनि रजनीस ॥"

– सं० १६४८ में कार्त्तिक-शुक्ल सप्तमी, सोमवार को की है। 'रसिकप्रिया' के अन्य हस्तलेखों की चर्चा नागरी-प्रचारिणी सभा की खोज-रिपोर्टों में भी है। देखिए–खोज-विवरणिका, सन् १९२३–२५, संख्या २०७ और खोज-विवरणिका—सन् १९२६–२८, संख्या २३३ एफ्० और २३३ जी०। नागरी-प्रचारिणी की खोज-विवरणिका सन् १९२६–२८ में इसका रचना-काल १५९१ ई० देते हुए अबतक के हस्तलेखों में इसे प्राचीन बताय है। उसके अनुसार सन् १५५१ ई० इसका भी रचनाकाल है—अतः यह भी अबतक के प्राप्त हस्तलेखों में प्राचीन है। केशवदास का समय लगभग १६०० ई० है। खो० वि० १९०२, संख्या २५२ में—रचनाकाल १८२५ ई०, और खो० वि० १९०३, संख्या २१ में १६३१ ई० है।

३. लिपि अच्छी और स्पष्ट है। लिपिकार ने ग्रन्थ की समाप्ति के बाद एक दोहा लिखा है—

रसमहिनिधि गजमुख रदन। सम्बत विक्रमराय।
मार्गशीर्ष सित सप्तमी। गुरुबासरसुख दाय॥
केशवदास विचार करि। भाषारच्यों रशाल॥
धरयो नाम रसिकप्रिया। लिख्यो सो सिंग्रिफलाल॥

ग्रन्थ में दिये गये लिपिकाल से उपर्युक्त दोहों में दिये गये काल का अन्तर है।

४. यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र०-सं० का०-७२ है।

५८. रामचन्द्रिका—ग्रन्थकार—श्री केशवदास (ओरछा)। लिपिकार—खुशहलचन्द्र। अवस्था—अच्छी है, पुराना, हाथ का बना देशी कागज। बीच-बीच में पन्ने फटे हैं। पृष्ठ—१६५। प्र० पृ० पं० लगभग—३६। आकार ६⅓″ × १०″। पूर्ण। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—कार्त्तिक-शुक्ल, बुधवार, सं० १६५८ वि० लिपिकाल—श्रावण-शुक्ल पूर्णिमा, शनिवार, संवत् १८३५ (सन् १७७८ ई०)।

प्रारम्भ—"श्री रामायनमः॥ अथ रामचन्द्रिका लिख्यते॥ कबित्त॥

बालक मृनाल निज्यों तोरिडारिसबकाल कठिन कराल ज्यों अकाल दीह दुषकों॥
दूरिकै कलंकरंक भइनुसीस ससिसभ राषत है केसोदास के बपुषकों॥
सांकरें की सांकरनि सनमुष होत ही तो दसमुष जुतो बैग मुख मुषकौं॥१॥"

मध्य की पंक्तियाँ (पृ० सं० ८२) "॥ चंचीला छंद॥
देबकुंभकर्न के समान जानिये न आन।
चंद्रईन्द्र ब्रह्म विस्नु रूद्रकों हरौ गुमान॥
राज काज को कहै। सुजानिये सुप्रेम पाल।
कैंचलीन कौचलैन। कालकी कुचाल चाल।

विस्नु भाजिजात छाड़िदेवता असेष।
जामदग्निदेषिकै कियोजुनारिवेष ॥
ईस रामते वधीत्रचे जुवान रैसवालि।
कैचलीन कौचलैन कहानकी कुचहनुचालि ॥१॥"

अन्त— "॥ दोहा ॥ जान्यौं विस्वामित्र के कोपनु वयौनुर आइ।
राजा दसरथ सों कह्यो बचन बसिष्ट बनाइ ॥
.... भक्त राम को कहाई।
(यह अंश फटा होने के कारण, कागज साट दिया गया है, जिससे पढ़ा नहीं जा सकता है।)
लहैजु मुक्तलोक लोक अंतमुक्त होई ताहि ॥
कहै सुनैपढै गुनै जु रामचन्द्र चन्द्रिकाहि ॥ २२९ ॥
इति श्री इन्द्रजीतबिरचितायां श्रीमत्सकल लोकलोचन चकोर चिंतामनि श्री: रामचंद्र चन्द्रिकायां सीतासमागमो नाम प्रकाश ३९ समो। इति श्री रामचंद्रिका कवि केसोदासकृत संपूर्णम् ॥"

विषय—राम-जीवन-सम्बन्धी काव्य। रामायण का वर्णन पृ० १ से १६५ तक।

टिप्पणी : ग्रन्थ के कुछ पृष्ठ बीच-बीच में फट गये हैं। पुस्तकालय की ओर से उसपर कागज साट दिये गये हैं। वे स्थान पढ़े नहीं जा सकते हैं। ग्रन्थ के प्रारम्भ में ग्रन्थ-रचना के इतिहास पर कुछ कविताएँ लिखी हैं--रचना-काल के संबंध में—

॥ दोहा ॥

"उपज्यौ तिहि कुल मंदमति सुनत कविकेसोदासु।
रामचन्द्र की चंद्रिका भाषाकरी प्रकासु ॥५॥
सोरह सै अठावनि। कातिक सुदिबुधवारु।
राम चंद्रकी चंदूका। कीनौ तब अवतारु ॥६॥"
यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है।
पु० क्र०-संख्या ७५ है।

५९. रामचन्द्रिका (रामभक्ति-प्रकाशिका टीका)— ग्रन्थकार—श्रीकेशवदास। लिपिकार—बेनीमाधव। अवस्था—अच्छी, प्राचीन, हाथ का बना, देशी कागज। पृष्ठ—२२३। प्र० पृ० पं० लगभग—३०। आकार—६"×१३"। पूर्ण। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—कार्तिक-शुक्ल, बुधवार, सं० १६५८ वि०। लिपिकाल—भाद्र-कृष्ण १० (दशमी), भौमवार, सं० १९३७ वि० (सन् १८८० ई०)। टीकाकाल–सं० १८६२।

प्रारम्भ—(मोटे अक्षरों में) "श्री गणेशायनमः
बालक मृनालनिज्यौं तोरिडारै सबकालकठिन करालत्यौं अकालदीहदुषकों

विपत्तिहरत हठिपद्मिनी के पात सम पंकज्यों पतालपेलिपठवैं कलुषकों
दूरिकै कलक अंक भवसीस सम राषत है केशोदास-दास के वपुषकों
सांकरे की सांकरन सनमुख होतहीं तौ दसमुष मुषजो वैगजमुष मुखको १
बानी जगरानी की उदारता बषानी जाय ऐसी मति केसब उदार कौनकी भई
देवता प्रसिद्ध सिद्ध रिषिराज तप वृद्ध कहि कहि हारे सब कहिनकाहूंलई
भावी भूत वर्तमान जगत बषानत है तदपि सुक केहू नवषा निकाहू पैगई
वरनैं पतिचारिमुख पूतबनैं पांचमुख नाती बनैं षटमुख तदपि नई नई २

(पतले अक्षरों में, टीका) श्री गणेशायनमः ॥ कवित्व ॥

कुंदसित सुडगंडगुंजत मलिदझुंडवंदन विराजैं मुंडअदभुतगति कों
बालससि मालतीनिलोचनविसाल राजैं फनिगनमालसुभसदनसुमति को
ध्यावतविनाही श्रमलावत बारनर पावतअपार मोद मार धनपति को
पापगनमंदन को विघननिकंदन को आठौजामवंदन करतगनपति को १

(इस प्रकार कई पदों में, वन्दना और टीका-सम्बन्धी निर्देश के बाद मूल ग्रन्थ की टीका प्रारम्भ की गई है)—

बालकपांचवर्ष कों जैसे मृनाल यौं नारी को सबकाल मै तोरिडारत है
तैसे गनेस कठिन औ कलसभयानक औ अकाल कहै पुत्र मरनादि दासन
को दुषहै ताकोतोरत हैं।"

अन्त—(मोटे अक्षरों में) "रूपक्रांताछंद

अशेष पुन्यपापके कलाप आपने बहाइ
विदेह राजज्यौं सदेह भक्तराम को कहाइ
लहै सो मुक्ति लोक-लोक अंत मुक्ति होइताहि
कहै सुनै पठै गुनै जो रामचंद्रचंद्रिकाहि ४० इति श्री राम

इति श्री मत्सकललोकलोचनचकोर चिंतामणि श्री रामचंद्रचंद्रिकायां इंद्रजी
विरचितायां कुशलवसमागमो नामैकोनचत्वारिंशः प्रकाशः ३९समाप्तोयं ग्रंथः।

(पतले अक्षरों में)—कलाप समूह पुन्यपापके नासशों मुक्ति होती हैं अवश्यमेव
भोक्तव्यंकृतंकर्मसुभासुभंइति प्रमाणात् अथवा जाके धारनसों प्राप्त जो
यज्ञादिको अशेषसंपूर्ण पुन्य है तासों पापके कलाप बहाइ कै ४०

॥ कवित्व ॥

कैधौं सप्तसागर विराजे मान जापै पैठि पाइ पत परमपदारथ की राशिका
कंठमे करत सोमधरत सभा के मध्य कैधौं सोहै माल उर विमल उजाशिका
सेवतहीं जाको लहै सुमनप्रवीनताई जानकी प्रसाद कैधौं भारती हुलाशिका
ज्ञान की प्रकासिका मुकुति प्रदायिका है लेहुएसजन रामभगति प्रकासिका १

॥ दोहा ॥

रामभक्ति उरआनिकैं राम भक्त जनहेतु
रामचंद्रिका सिंधु में रच्यौ तिलक को सेतु
जो सुपंथतजि सेतु को चलिहै और मगजोर
रामचंद्रिका सिंधुको लहहि कौन विधिओर"

विषय—रामचन्द्र के जीवन-सम्बन्धी साहित्यिक रचना। रामायण का वर्णन—पृष्ठ १ से २२३ तक। नागरी-प्रचारिणी सभा की खोज-विवरणिका (सन् १९२६—२८) में भी इस ग्रन्थ की चर्चा है और उसमें रचना-काल सन् १६०१ ई० है। उक्त रिपोर्ट में (पृष्ठ-सं० ५४) लिखा है कि यह अबतक उपलब्ध हस्तलेखों में प्राचीन है। इस ग्रन्थ का भी रचना-काल यही है। तदनुसार यह भी सर्वप्राचीन प्रति है। अन्य खोज-विवरणों में भी—सन् १८२५ ई० (खो० वि० १९०२ ई०, ग्र० सं० २५२); १६३१ ई० (खो० वि० १९०३ ई०, ग्रं० सं० २१), खो० वि० १९२३—२५ ई०, ग्रं० संख्या २०७; खो० वि० १९२६—२७ ई०, ग्रं० संख्या २३३ है।

टिप्पणी : १—पूर्व ग्रन्थों के समान ही इसमें भी पदों में तो श्रीकेशवदासजी का नाम है, किन्तु प्रति 'प्रकाश' के अन्त में 'कुमार इन्द्रजीत' का भी नाम है। ग्रन्थ प्रारम्भ करने के पूर्व ग्रन्थकार ने, मंगलाचरण के बाद, ग्रन्थ के निर्माण का पूर्ण विवरण दे दिया है। रचनाकाल के सम्बन्ध में—

॥ सुग्गीतछंद ॥

"सनाढ्यजाति गुनाढ्य हैं जगसिद्ध शुद्धसुभाव
क्रुस्नदत्त प्रसिद्ध हैं महिमिश्र पंडितराव
गनेस सो सुतपाइयो बुधि कासिनाथ अगाधु
असेषसास्त्र बिचारिकैं जिनजानियो मत साधु ४"

॥ दोहा ॥

"उपज्यौ तेहिकुल मंदमति सठ कबि केशवदास
रामचंद्र की चंद्रिका भाषा करी प्रकास ५
सोरा सै अठावना कातिक सुदि बुधिबार
रामचंद्र की चंद्रिका तब लीन्हो अवतार ६
वाल्मीकिमुनि स्वप्न मै दीन्हो दरसनचारु
केसव तिन सौं यों कह्यौ केयों पाउसुषसारु ७"

पूर्व-विवरित ग्रन्थों में राजा और कुमार श्रीइन्द्रजित के सम्बन्ध में चर्चा है। किन्तु, इस पाण्डुलिपि में नहीं है।

२—ग्रंथ के टीकाकार श्री जानकीप्रसाद जी हैं। इनका नाम टीकाकार के रूप में ग्रन्थ के प्रारम्भ या अन्त में नहीं है, किन्तु निम्नांकित पद से टीकाकार के रूप में इनके नाम का संकेत मिलता है—

"जुगनू से भूषण जवाहिरजगत स्रुति
सबदमयूर साधुमोद मारयत है
जानकीप्रसाद जगहरित करन मीठे
बैनरस वैरी ज्यौं जवां से जरियत है ॥"—(ग्रन्थ के प्रारंभ में)
"सेवतही जाको लहै सुवन प्रवीनताई
जानकीप्रसाद कैधों भारती हुलाशिका'—(ग्रन्थ के अन्त मे)

इन दोनों पदों से टीकाकार का नाम 'श्रीजानकी प्रसाद' स्पष्ट हो जाता है। टीकाकार ने बड़ी विस्तृत टीका की है। प्रारम्भ के, मंगलाचरण के, एक-एक पद के कई अर्थ किये हैं, और उनके आधार पर ही प्रथम मंगलाचरण में ही सातों काण्डों की कथा की ओर संकेत किया है। इस टीका का नाम 'रामचन्द्रिका तिलक' है। टीका के सम्बन्ध में स्वयं टीकाकार ने लिखा है—

"तापरिपाक अछाइमन चंचलता निविहाइ
रामचंद्रिका को तिलक लाग्यौ करन बताइ
कठिनाइतम ग्रन्थ की सथल बिबिध बिहारु
तिलक दीप बिन अबुध क्यौं लषै पदार्थ चारु
तासौ सुमति विचारिचित कीन्हे तिलक अपार
देषि रीति तिनकी करयौ हो निजमति अनुसार"

॥ घनाक्षरी ॥

"मेदिनी अमर अभिधानचिंतामनि गनिहारावलि आदि को समत उर धारिकै
वालमीकि आदि कविता को मतमीनो दीनो ज्योतिष प्रमान कहूं जुगुत निहारिकै
ग्रन्थ गुरुताके मम सकलन लीन्हो कीन्हो अरथ उकुति पद कठिन ठिहारिकै
रामचंद्रजू के चरण निचितराषि रामचंद्रचंद्रिका को कीन्हो तिलक विचारिकै"

॥ चंचलाछंद ॥

"नैन सूरज वाजिसिद्धि निशीस संबतचारु शुक्र संजुत शुक्ल पक्ष सुरेस पूजितचारु
चारु दिक्तिथिहस्ततारवरिष्ठयोग नवीन राम भक्ति प्रकासिका अवतारता दिनलीन ॥"

इन पदों से टीकाकार ने टीकाकाल की ओर भी निर्देश किया है। अन्तिम चरण से टीका का 'रामभक्ति प्रकाशिका' नाम भी व्यक्त होता है। इस टीका ने ग्रन्थ को बृहद्काय कर दिया है।

३—ग्रन्थ की लिपि-शैली प्राचीन है। अस्पष्ट लिखावट है। मूल ग्रन्थ पृष्ठ के बीच में मोटे अक्षरों में है। टीका, मूल के ऊपर और नीचे पतले अक्षरों में है। किसी कोश, या अन्य ग्रन्थ का उद्धरण भी दिया गया है। लिपिकार ने ग्रन्थ के अन्त में—

"समाप्तोयं ग्रन्थः संबत् १९३७ भाद्र पद कृस्न दशम्यां
भौमवासरे लिषितं सत्य शुल्क बेनीमाधवेन श्री रामचंद्रिकायां शुभं"

इस ग्रन्थ में 'ब' और 'व' के लिए अन्य ग्रन्थों के समान क्रमशः 'व' और 'व' का प्रयोग नहीं करके, दोनों के लिए केवल 'व' का ही प्रयोग किया है।

यह पोथी श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० का०-७६ है।

६०. राम-रत्नावली—ग्रन्थकार—शिवदीनकवि। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी है, देशी कागज। पृष्ठ—५। प्र० पृ० पं० लगभग—१६। आकार—५"×१०"। पूर्ण। भाषा–हिन्दी। लिपि—नागरी। रचना-काल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"ॐ श्री गणेशायनमः ॥ अथ रामरत्नावली लिख्यते ॥ दोहा ॥
अजै अगमकहिं गावश्रुति अंबुधि अहिआसीन।
तेहिके सगुन चरित्र मिस सुमिरि सुकवि सिवदीन ॥ १ ॥
राम पंचदस वरस के छ वरस के मिथिलेसि ॥
ब्याहि अयोध्या आइपुनि बारह बरस निवेसि ॥ २ ॥
भए सताइस बरस के जब रघुपति सुषशाज ॥
गुरुजन पितु मिलि मंत्रकरि करन लगे जुवराज ॥ ३ ॥
तव दसरथ सन केकई मागै द्वैबरदान ॥
सानुज राम सुसीयबन चौदह बरस प्रमान ॥ ४ ॥"

अन्त—"नौ सैष्यासठबरस लौ एहिविधि रहिमुनि गेह ॥
वरष जनकतनया रहीं नेतिस की तेहिकाल ॥५०॥
वैदेही प्रवीसे घर निलगिदसबरस हजार ॥
औधराज भोग्यौ प्रभु कौतुकहित संसार ॥५१॥
अग्नि देशकृत बूछि किय रामचरित रमनीय ॥
कैहे गंहे तासु फल दैहै रघुबरसीय ॥५२॥
इति श्री शिवदीनकविकृते रामरत्नावलि समाप्तम् ॥"

विषय— राम-सम्बन्धी काव्य। पृष्ठ १ से ५ तक पूर्ण। कुल पद्य-सं० ५२। पृष्ठ १ में रामचन्द्र का विवाह, राज्याभिषेक का आयोजन, कैकेयी द्वारा वर की याचना, राम का वनवास, चित्रकूट-निवास, सीताहरण, हनुमान् आदि से भेंट, हनुमान् का लंकागमन और अशोक-वाटिका-विध्वंस। पृष्ठ २ में रावण की सभा में अंगद का प्रवेश, राम की सैन्यसज्जा, समुद्र-बन्धन। पृष्ठ ३ में कुम्भकर्ण-वध और लक्ष्मण के साथ मेघनाद का संग्राम। पृष्ठ ४ में लक्ष्मण की मूर्च्छा, हनुमान द्वारा संजीवनी बूटी का लाना और मेघनाद तथा रावण-वध। पृष्ठ ५ में पुष्पक-विमान पर अयोध्या के लिए प्रस्थान।

टिप्पणी: इस ग्रन्थ में राम के विवाह से प्रारम्भ करके राज्याभिषेक और सीता-प्रवास तक की तिथि, मास, पक्ष, दिन आदि दिये गये हैं; जैसे—

"अगहनबेरी, सप्तमी मिलै सहितसुग्रीव ।
रघुवीरहि सौंपी हनुचिंतामनि चितजीव ।। २५ ।।
अष्टमि उत्तरफाल्गुनी विजै मुहूरत माँह
घरस्थापु जुगजामगत कीन्हें रघुकुलनाह ।। २६ ।।
सतऐं दिन सैना सहित उतरे शागरतीर ।।
पुनिप्रद ते तीजलगि टिके रहे रघुवीर ।। २७ ।।"

इसी प्रकार—

"बहुरि चतुर्थी को चले चढिपुष्पक रघुदीप ।।
नभमारग आए तुरत नगरी अवध समीप ।। ४५ ।।
पूरे चौदह बरस के मधुसित पंचमि काँह ।।
भरद्वाज थलगत पिय सानुज सहित उछाह ।। ४६ ।।"

पूरे ग्रन्थ में राम-जीवन से सम्बन्धित तिथि-क्रम दिये गये हैं । ग्रन्थ की लिपि स्पष्ट तथा सुन्दर है । लिपिकार के नाम का निर्देश नहीं है । यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है । पु० क्र० सं० का०-७८ है ।

६१. रामविनोद—ग्रन्थकार—बलदेवकवि । लिपिकार—भवानीदास । अवस्था—अच्छी । पृष्ठ–१६७ । प्र० पृ० पं० लगभग—२० । आकार—६"×६" । खण्डित । भाषा—हिन्दी । लिपि—नागरी । रचनाकाल–× । लिपिकाल–सं० १७९६ वि० ।

।। सवैया ।।

प्रारम्भ—"मधुमास सुहावन पावनकाल सवाल नरेसहि हर्षजनाए ।।
शशि तोषक पक्ष सुखक्ष महानवमी तिथि भानु द्युवाछविछाए ।।
ग्रहवार नक्षत्र सबै अनुकूल हिए जगजंगम मोद बडाए ।।
नृपमंदिर सुन्दर मंगलषानिक स्नायुत श्री अजभूतल आए ।।१४।।
सबलोक निवास-निवास लिए नृपके गृहमैं नर रूप सवारी ।।
युत अंसन पुत्र कहावत मोद सरथ्य को पंकजनभि षरारी ।।
जेहि संकर नारद ध्यान न पावत ध्यावत जाहि सबै तपधारी ।।
निज दासन हेतु लियो अवतार अपार अषंड सरूप सुचारी ।।

।। सोरठा ।।

कौसल्यासुत राम भई केकई सुत भरत ।।
लषन सत्नुहन नाम भए सुमित्रा तनय सुभ ।।"

।। घनाक्षरी छंद ।।

अन्त—"संत बड़े तपी अतिठाकुर सहजसौम्य समता कि सीव माया सदां अनुगति है।।
हरन बिपति छदम सुरकुल लालियत का मद सुसील रिक्ष तुस सहित मति है ।।

याको समरथ्य सुधीक्रतु को हरासपथ बितनोई दया प्रभा गति टेक वति है ।।
राजमणि राम जपि केवल मलिन तत्व जड़ सठजतन वे पारलगे कति है ।।

।। दोहा ।।

या कवित्त बारह बरन लै पदांतयक त्यागि ।।
सम्बत् मासादिक लषब रावचरन अनुरागि ।।

इति श्री रामविनोदे बलदेवकविकृते ग्रंथान्त को मंगलाचरन समाप्तम् ।। सुभं भूयात् ।।"

विषय—राम-जीवन-सम्बन्धी कविता । ग्रन्थ में सोरठा, तोटक, भुजंगप्रयात, मत्तगयंद, उर्मिला, नराच, सवैया, तोमर, उमिला, तारक, दोधक, चामर, चंचला, संजुता, चित्रपद, मधुराचला, सर्गुनी, सिंहगति, मल्लिका, जगत प्रकास आदि छन्दों का प्रयोग हुआ है। सम्पूर्ण ग्रन्थ सात काण्डों में विभक्त है। प्रत्येक काण्ड में कई सर्ग हैं। पूरे ग्रन्थ में ३१ सर्ग हैं। प्रारम्भ के दो पृष्ठ खण्डित हैं।

ग्रन्थकार ने विविध छन्दों, अलंकारों और रचनाविन्यासों से सुभूषित इस ग्रन्थ को मनोहर और सुरुचिपूर्ण बनाने का प्रयास किया है। ग्रन्थ की रचना-शैली प्राचीन है।

प्रथम सर्ग में—रामजन्मोत्साह-वर्णन।
द्वितीय ,, ,,—विश्वामित्र का आगमन।
तृतीय ,, ,,—राम का जनकपुर-प्रवेश।
चतुर्थ ,, ,,—अहल्या-उद्धार।
पंचम ,, ,,—धनुर्भंग।
षष्ठ ,, ,,—सीता-परिणय-वर्णन।
सप्तम ,, ,,—राम-मन्दिर-प्रवेशः।
अष्टम ,, ,,—रामविवाहोत्सव।
नवम ,, ,,—दशरथ-नगर-प्रवेशः।
दशम ,, ,,—अवधविलासवर्ननोनाम।

इसी प्रकार ३१ सर्गों में रामजीवन-सम्बन्धी विषयों का कवित्वपूर्ण प्रतिपादन किया गया है। यत्र-तत्र रामचरितमानस की शैली का भी अनुवर्तन हुआ है। यथा—पृष्ठ-संख्या ५१ में—

"यक दिन नरपालक अरिगन घालक सानंद सभा विराजे ।।
दर्पन कर लीने प्रेमनमीने सीस मुकुट बरसाजे।
उज्जल कच देषे मंत्री लेषे मानहु सीष सिखावै ।।" आदि

टिप्पणी : यह अप्रकाशित ग्रन्थ अनुसन्धेय है। इसके पद गेय तथा विविध छन्दों में बड़े ही अच्छे भावों से युक्त हैं। वर्णन-शैली अति उत्तम और प्रशंसनीय है। ऊपर के पद में रचयिता ने रचनाकाल की ओर संकेत किया है। इसमें

प्रायः उन छन्दों का अधिक प्रयोग है, जिनका प्रयोग प्रायः कम होता रहा है। जैसे—समानिका, दमिला, दोधक—राजाअनुष्टुप, सुमंत दुमिला, सोमराजी, कन्दछन्द आदि। इसी प्रकार के और भी नवीन छन्दों का प्रयोग हुआ है। रचना में, उपमा, अनुप्रास और विरोधाभास आदि अलंकारों का प्रचुर समावेश है। ग्रन्थ सुवाच्य है। ग्रन्थकार का नाम नवीन है तथा रचना भी अप्रकाशित है। ग्रन्थ अठारहवीं सदी का प्रतीत होता है। इस नाम के कवि की सूचना नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) की खोज-विवरणिका (सन् १९२६-२८ ई०) में भी है। देखिए—खोज-विवरणिका, पृष्ठ-सं० १७। कवि-संख्या—३२। 'मिश्रबन्धु-विनोद' में भी संख्या २३४० में इस नाम के एक कवि की चर्चा की गई है। नागरी-प्रचारिणी सभा की खोज-विवरणिका में 'बलदेव' नाम के कवि की 'जानकी-विजय' नामक रचना का उल्लेख है। इसका रचनाकाल है सन् १८७९ ई०। ग्रन्थ और कवि अनुसन्धेय हैं।

२. लिपिकार ने ग्रन्थ के अन्त में लिपिकाल और अपने नाम की ओर निम्नांकित रूप में संकेत किया है—

"सम्वत रविदिन छानवे त्रयोदसी मलिमास
रामविनोद समाप्तयो लिख्यो भवानीदास ॥"

यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० स० का०-८० है।

६२. विनयपत्रिका—ग्रन्थकार—श्रीतुलसीदास। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी, हाथ का बना, देशी कागज। पृ० १००। प्र० पृ० पं० लगभग—२०। आकार—६'×१२"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचना-काल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"श्रीः गणेशायनमः ॥ विनयपत्रिका लिखते ॥

॥ रागवेलावर ॥

"गाइयै गणपति जगबन्दन, शंकर सुवन भबानी के नंदन ॥
सिद्धि सदन गजबदन बिनायक, कृपासिंधु सुंदर सब लायक ॥
मोदपृय मुद मंगलदाता, बिद्या बारिधि बुद्धि विधाता ॥
मागत तुलसि दास करजोरे, बसहि राम सिय मानस मोरे ॥१॥
दिनदयाल दिवाकर जो देवा, कर मुनि मनुज चराचरसेवा ॥
हिम तम करि केहरि कर माली, दहन दो षदु षद रितरु जाली ॥
कोक कोकनद लोक प्रकासी, तेज ताप रूप रस राशी ॥
सारधि पंग दिव्य रथ गामी ॥ हरिशंकरबिधि मुरति स्वामी ॥
वेद पुराण प्रगट यश जगि, तुलसिदास भक्ति बरमागि ॥२॥"

॥ श्लोक ।'

अन्त —"यदि रघुपति भक्तिमुक्तिदा वक्षते सा सकल कलुष हत्रि शेवनीया सहास्तात् ॥
शृणुत सुमति प्रेंयो निर्मिता राम भक्तैर्जगति तुलशी दासै रामगीतावलीयम् ॥१॥
जया २९१ ॥
इति श्री गोसाईं तुलशीदास कृत विनैपत्रिका सम्पूरण ॥ शुभमस्तु सिद्धिरस्तु ॥"

विषय—राम-सम्बन्धी स्तुतिगीत । सीता, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न, हनुमान्, महादेव, गंगा आदि की स्तुति और विनय । १ से १०० पृष्ठ तक सम्पूर्ण ।

टिप्पणी : अत्यन्त प्राचीन लिपि होने के कारण अस्पष्ट है । ग्रन्थ के प्रारम्भ या अन्त में लिपिकार के नाम का कोई भी संकेत नहीं मिलता है । लिपिकाल अथवा रचनाकाल की भी चर्चा ग्रन्थ में नहीं है । यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है । पु० क्र० सं० क०-८३ है ।

६३. विनयपत्रिका—ग्रन्थकार—श्रीसूरदास जी । लिपिकार—× । अवस्था—प्राचीन, प्रायः सभी पृष्ठों को कीड़े चाट गये हैं, अतः ये जर्जर हो गये हैं । पृष्ठ—२५ । प्र० पृ० पं० लगभग—५० । रचनाकाल—× । लिपिकाल—× । आकार—९½"×१२" । भाषा—हिन्दी । लिपि—नागरी ।

प्रारम्भ—"ॐ श्री गणेशायनमः ॥ अथ विनयपत्रीका सूरदास जी का लिख्यते ॥

॥ रागबिलावल ॥

करनी करुणासिंधु की कहत न आवै ।
कपट तरै परसेव की जननी गति पावै ॥
दुषित गजेंद्रहि जानिके आपुन उठि धावै !
कलि मैं नाम प्रगट नीचता की छानि छवावै ॥
उग्रसेन की दीनता प्रभु के जिय भावै ।
कंस मारि राजा कीयो आपुन सिर नावै ।
बरुण पास ते वृजपतिहि छिन में छिटकावै ॥
बहुत दोषमो सूर कहें ताते गहरु लगावै ॥१॥
माधो वे भुज कहा दुराये ।
जिन्ही भुजनि गोवर्द्धन धारयो सुरपति गर्वनसाये ॥
जिन्ही भुजनिकाल को नाथ्यौ कमल नाल लै आये ।
जिन्ही भुजनि प्रह्लाद उबारयौ हिरण्याक्षको धाये ॥
जिन्ही भुजनि गजदंत उपारे मथुरा कंस ढहाये ।
जिन्ही भुजनि दांबरी बंधाये जमला मुकति पठाये ॥
जिन्ह ही भुजनि अघासुर मारयौ गोसुत माय मिलाये ।
तिहि भुजकी बलि जाय सूरजन तिनका तोरि दिखाये ॥ २ ॥"

अन्त— "॥ रागनट ॥

मेरी बेर है क्यों शोचिवो टिके अघकाल पठवहु ज्यों दियो गजमोचि ।
कौन करनी करीं बढिये सो करो फिरि कांधि ।
न्याव की पुनुसोन कीजै चूक पल भर बांधि ॥
मैं कछु करवे न छाड्यौ या संसार हि पाई ।
दीन दयाल कृपासिंधु प्रभु भक्तन के सुषदाई ॥
तउ मेरो मुष मानत नाही करत न लागी बार ।
सूर प्रभु यह जानि पदवी चले बेलहि आर ॥२००॥

इति श्री कृस्नानंद व्यासदेव रागसागरोद्भव सूरसागर राग कल्पद्रुम अपनी दीनता प्रभुजी को महात्म्य विनयपत्रिका सम्पूर्णम् ।"

विषय—विनय के पद । गेय कविता । कृष्ण के जीवन की अनेक घटनाओं पर उनकी स्तुति तथा विनय ।

टिप्पणी : इस ग्रन्थ के साथ ही 'सारावली' के ३ पृष्ठों का दृष्टकूट के पद और 'नित्यकीर्तन' के पद हैं । सम्भवतः यह ग्रन्थ दुष्प्राप्य है । ग्रन्थ की लिपि स्पष्ट तथा सुन्दर है, किन्तु सभी पृष्ठ कीड़ों से खाये जाने के कारण जर्जर हो गये हैं । यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है । पु० क्र० सं० क०-८४ है ।

६४ विनयपत्रिका—ग्रन्थकार—गोस्वामी तुलसीदास । लिपिकार—जसवंतठाकुरवाड़ी, मनेर के साधु । अवस्था—अच्छी, हाथ का बना, मोटा, देशी कागज । पृष्ठ—१२४ । प्र० प० पं० लगभग—२२ । आकार—७" × ९½" । भाषा—हिन्दी । लिपि—नागरी । रचनाकाल—× । लिपिकाल—आषाढ़-कृष्ण अमावास्या, शनिवार, सं० १८९८ ।

प्रारम्भ—"श्री मतेरामानुजायनमः । रागविलावल ।

गाइये गणपती जगबंदन । संकर सुवन भवानी नन्दन ॥
सिद्धि सदन गजबदन बिनायक । कृपासिंधु सुदर सब लायक ॥
मोद कष्टय मुद मंगल दाता । बिद्यावारिधि बुद्धिबिधाता ॥
मागत तुलशीदास कर जोरे । बसहु राम सिय मानस मोरे ॥१॥"

अन्त— "मारुति मनरुचि भरत कि लषी लषन कहिहैं ।
कलिकालहु नाथ नामसों प्रतीति प्रीतियेक किंकरकि निवहि है ॥
सकल सभा सुनिलै उठि जानि रिती सो रहि है ॥
भरत कृपा गरिब नेवाज कि देषत को सहसा बांह गहि है ।
बिहसि राम कहेवो सत्य है सुधियेहूं लहि है ।
मुदित माथ नावत बनि तुलसी की परी रघुनाथ सही है ॥२८०॥
इति श्री गोस्वामी तुलसीदास कृत विनयपत्रिका संपूरणः ॥"

विषय—राम-सम्बन्धी गेय पद। लक्ष्मण, भरत, हनुमान्, सुग्रीव और सीता की स्तुति और विनय। १ से १२४ पृष्ठ तक सम्पूर्ण।
बीच-बीच में लिपिकार ने यत्र-तत्र अपनी ओर से टिप्पणी भी दी है। टिप्पणी की गद्यभाषा पर 'सधुक्कड़ी' प्रभाव है।

टिप्पणी : लिपिकार ने स्थान-स्थान पर मूल ग्रन्थ के हाशिये पर, कठिन और दार्शनिक पदों का सामान्य अर्थ भी लिख दिया है। लिपि की शैली प्राचीन है। लिखावट शुद्ध और समीचीन है।

लिपिकार ने ग्रन्थ की समाप्ति के बाद लिखा है—"सुभ सम्बत ॥१८९८॥ आषाढ़ मासे कृष्णपक्षे अमावश्यां शनिवासरे श्री जानकि बरहमजू के कृपाते लिषा गया पाठार्थ दसषत षास जसबंत ठाकुरवारी मे मनेर।"

(यह 'मनेर' पटना जिले में दानापुर से पूरब गंगा के तट पर है।) इस ग्रन्थ में २८० पद हैं। ग्रन्थ जीर्ण-शीर्ण और इसका कागज अति प्राचीन है। यह ग्रन्थ अन्य स्थानों में भी उपलब्ध हुआ है। देखिए—नागरी-प्रचारिणी सभा की खोज-रिपोर्ट। लिपिकाल—१८२७ ई० (खो० वि० १९०६-८, ग्रं० सं० २४५ जी०); १८२२ ई० (खो० वि० १९०९—११, ग्रं० सं० ३२३ एल्०), (खो० वि० १९१७, ग्रं० सं० १९६ एफ्०), (खो० वि० १९२०-२२, ग्रं० सं० १९८ के०), (खो० वि० १९२३—२५, ग्रं० सं० ३३२), (खो० वि० १९२६—२८, ग्रं० सं० ४८२ ए०, २बी०, २ सी०)। यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में संगृहीत है। पु० क्र० सं० क-८६ है।

६५. विनयपत्रिका—ग्रन्थकार—श्रीगोस्वामी तुलसीदास जी। लिपिकार—बहोरणदास। अवस्था—अच्छी, हाथ का बना, पुराना देशी कागज। पृष्ठ १३४। प्र० पृ० पं० लगभग—३६। आकार—६" × १०"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—आषाढ़-शुक्ल १३ (त्रयोदसी), सं० १८६९ वि० (सन् १८२२ ई०)।

प्रारम्भ—"रागबिलावल। हरत सकल पाप त्रिविधिताप सुमिरत सुरसरित।
विलसत महि कल्पबेलि मुद मनोरथ फरित॥
सोहत शशि धवलधार सुधा सलिल भरित।
बिमल तर तरंग लसत रघुबर कैसे चरित।
तो बिन जगदंब गंग केलि जंगका करित।
घोर भव अपार सिंधु तुलसी कैसे तरित।१९।"

मध्य की पंक्तियाँ (पृ० सं० ४८)
"मन माधौकों नेकु निहारहिं।
सुनु सव सदा रंकके घन ज्यौ छिण-छिण प्रभुहि संभारहिं॥
शोभाशील ग्यान गुण मंदिर सुन्दर परम उदारहिं।
रंजन संत अषिल अघ गंजन भंजन विषय विकारहिं॥

जो विन जोग जज्ञ व्रत संगम गयो वहै नव पारहिं ।
तो जनि तुलसीदास निसिवासर हरिपद कमल विसारहिं ॥८६॥"

अन्त—"मारुति मन रुचि भरत की लषि लषण कही है ।
कलि कालहु नाग नामसों प्रीति प्रतीति एक किंकर की निवही है ॥
सकल सभा सुनिलै उठी जानि रीती सो रही है ।
कृपा गरीब नेवाज की देषत गरीव को सहसा वाह गही है ॥
बिहंसि राम कह्यौ सत्य है सुधि मैं हूलही है ॥
मुदित माथ नाबत बनी तुलसी अनाथ की परी रघुनाथ सही है ॥२७९॥
इति श्री विनयपत्रिका तुलसीदास कृत समाप्तं ।"

विषय—राम-सम्बन्धी गेय पद । लक्ष्मण, भरत, सुग्रीव, हनुमान् और सीता के लिए की गई विनय के पद ।

टिप्पणी : इस पोथी की लिपि पुरानी है । ग्रन्थ कई स्थानों पर फट गया है । बीच में, फटे हुए स्थान पर कागज चिपका दिये गये हैं । लिपि स्पष्ट है । लिपिकार ने ग्रन्थ की समाप्ति के बाद लिखा है—

"नवरस वसुछिति सहित लै सम्वत······रि मान ॥
मास अषाठसु सुक्लपक्ष त्रयोदसी बुध्र जान ॥

श्री श्री श्री बाबुसाहेव श्री बाबू जगदेव सिंह जी पाठनार्थे बहोरणदास लिखा ॥ ग्रन्थ १०वें पृष्ठ से प्रारम्भ हुआ है । नागरी-प्रचारिणी सभा की खोज-विवरणिका में उपलब्ध ५ 'विनयपत्रिका' की खोज-रिपोर्ट है । देखिए पृष्ठ-सं० ७४३ (सन् १९२६—२८ ई०) । यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है । पु० क्र० सं० का-८७ है ।

६६. **वैराग्यसंदीपन**—ग्रन्थकार—गो० तुलसीदास । लिपिकार—जुगलकिशोर लाल । अवस्था—अच्छी । पृ०—३ । प्र० पृ० पं० लगभग—४४ । आकार—९" × १२" । भाषा—हिन्दी । लिपि—नागरी । रचनाकाल—× । लिपिकाल—आषाढ़-कृष्ण सप्तमी, गुरुवार, सं० १९१९ वि० (सन् १८६२ ई०)

प्रारम्भ—"ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥ अथ वैरागसंदीपनी लीख्यते ॥

॥ दोहा ॥

राम बामदिसी जानकी लषन दाहिने वोर ॥
ध्यान सकल कल्यानमय सुरतरु तुलसी तोर ॥ १ ॥
तुलसी मिटै न मोहतम कोटिकरै गुन ग्राम ॥
हृदय कमल फूले नहीं बिन रविकुलरविराम ॥ २ ॥
सुनतलषतश्रुति नैनविन रसना बिन रसलेत ॥
वासनासिका बिनलहे परसत बिना निकेत ॥ ३ ॥"

अन्त— ॥ चौपाई ॥

"राग दोष की अग्नि बुझानी ॥ काम क्रोध बासना बिलानी ॥
तुलसी जबहीं शान्त ग्रह आई ॥ तब उरहि उरफीरी दुहाइ ॥१८॥

॥ दोहा ॥

फीरी दुहाइ राम की गये कामादिक भाज ॥
तुलसी ज्यौं रवि उदै तैं तुरत जात तमशान ॥ १९ ॥
यह वीराग संदीपनी सुजन सुचित सुनिलेव ॥
अनुचित वचन विचारि कै सो सुधारि करिदेव ॥ २० ॥

इति श्री वैरागसंदीपनि महामोहो विध्वंसनी सांतरसवर्णनंनाम तृतीयो प्रकासः सम्पूर्णनम् ॥ सिद्धिरस्तु ॥ शुभमस्तु ॥ शुभम् भूयियात् ॥"

विषय—सन्त-स्वभाव, सन्त-महिमा आदि विषयों पर कविता। प्रथम प्रकाश—रामनाम महिमा, सन्त-सुभाववर्णन। द्वितीय प्रकाश—सन्तों की महिमा का वर्णन। तृतीय प्रकाश—शान्ति, प्रशंसा, काम, क्रोधादि विकारों का दूर भगाना।

टिप्पणी : ग्रन्थ-लिपि अच्छी है। नागरी-प्रचारिणी सभा की खोज विवरणिका (सन् १९२६–२८) में भी इस ग्रन्थ की चर्चा है। उसका रचनाकाल है—सं० १८८६ वि० (सन् १८२९ ई०)। इसके अतिरिक्त अन्य खोज-रिपोर्टों में भी इस ग्रन्थ की प्रतियों के उपलब्ध होने की चर्चा है। देखिए—

खोज-विवरण १९००, ग्रं० सं० ७; खो० वि० १९०३, ग्रं० सं० ८१; लिपिकाल—१८२९ ई०—खो० वि० १९०६—८, ग्रं० सं० २४५; लि० का० १८००—खो० वि० १९०९–११, ग्रं० सं० ३२३; खो० वि० १९१७–१९, ग्रं०-सं० १९६ डी०; खो० वि० १९२०—२२ ग्रं० सं० १९८ जे०; खो० वि० १९२६—२८, ग्रं० सं० ४८२ डी०—इस ग्रन्थ के लिपिकार हैं श्री जुगलकेश्वर लाल, अमाँवा (गया)-निवासी। इन्होंने दूसरे ग्रन्थों की रचना भी की है। यह पोथी श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० का-८८ है।

६७. शंकावली—ग्रन्थकार—×। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी, हाथ का बना, मोटा, देशी कागज। पृष्ठ—३०। प्र० पृ० पं० लगभग—२२। आकार—६″ × ७½″। भाषा–हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल–×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"श्री जानकीवल्लभो विजयते अथ शंकावली लिख्यते ए गोसाईं जी को रामायण विचारतें सर्वसंकारहित है जातें पूर्वा पर प्रकरण लगाये तें इसी ग्रंथमों समाधान बाहुल्यतें मिलत है परंतु इस ग्रंथ का प्रचार बहुत है यातें बहुतलोग संका करत है तातें कछु लिषत हैं संका भाषाबद्धकरविमैसोई प्रतिज्ञा ते विरुद्ध कांडन

के आदि संस्कृत काहे कवि लिखे उत्तर देववानी कों अति मंगलरूप जानिके वा भागाके षट्लछनयों संस्कृत हू चहीये १"

मध्य की पंक्तियाँ (पृ० सं० १५)—

"प्र० तौ कृसानु सवकै गति जाना ५१
सं० राघव एक रूप दोउ भाइन्ह को कहे
निज में भ्रम औ माला में द्वितीए सब में क्या हेतु
उ० नर नागर मों सववनत है ५२
सं० रामजू प्रथम वाली वध कै एक नार्सें प्रतिज्ञा
किन्ह फेरि दूसर वान चढ़ाये सोक्या हेतु
उ० वानर राज वाली तेहि के सहायक निवारणार्थ
वाण की अमोघता राम संकल्प के अधीन ॥ ५३"

अन्त—"बहुत जन्म इत्यादि लिखि आए जीव कै जन्म नाहीं होत औ चारि अवस्था में जन्म रूप भेद पाया जात हैं जैसेबाल वृद्ध इत्यादि कोई सिर्फ लड़िका देखो होइफेरि दूसरी अवस्था में जो देखै सो न पहिचानेगा और जन्म संस्कार का नाम है औ चारो युग का जो भेद करते हैं सो प्रमानतौ समान जानब याही तैं धर्मन में विरुद्ध भासै है जैसे सामान औ विशेष सो सब मतन मे सामान्य बिसिष्ट पायो जात है औ विसिष्ट ये अनेक बिरुद्ध देषो परै है जैसे माँस भक्षन मे विध के दक्षिन वासीनकौ आज्ञा उत्तरवासी पतित होत हैं इनन धातु तौ जीव मे चरितार्थ नाहीं होत जैसे घटमठ आकाश को नास पावत है याही तैं जीव व्यापक जानो जात हैं और जन्म सूक्ष्म स्थूल सरीर कर के बहुत भासत हैं जैसे चौरासी लक्ष योनि जन्न परमित कियो सो संस्कार और काल को धर्मनिकों मुख्य जानिवो साम औ दो०

मानजुत मानस सुषद संस्कार हित उदार
बोध रहित निज मोहबस संका करत अपारि १
मान समान अनेकजुत मानी मन गम नाँहि
मम साहस संकावली छमवसाधु महिंमांहि २

इति सप्तकांड संकावली संक्षेप : शुभम् ॥ ० ॥ अश्लोक २९०"

विषय—रामायण-सम्बन्धी शंकाओं के उत्तर। रामायण के बहुत-से पदों में जो शंकाएँ उत्पन्न हो जाती हैं, उनका समाधान किया गया है।

टिप्पणी : इस ग्रन्थ की गद्यशैली प्राचीन है। इसकी भाषा खड़ी बोली के पूर्वकाल की है। लिपि पुरानी है। यह ग्रन्थ नागरी-प्रचारिणी सभा की खोज-रिपोर्ट में भी है। देखिए—१९२६–२८ ई० की खोज-विवरणिका, ग्रं० सं० ५३६ और ५४५ में सं० ३७० बी० और ३७२ सी०। यद्यपि इस ग्रन्थकार का नामोल्लेख नहीं है, तथापि नागरी-प्रचारिणी सभा की खोज-रिपोर्ट के अनुसार इसके रचयिता हैं श्रीरघुनाथ

दास, अयोध्यावासी। तीनों ही ग्रन्थ का आदि और अन्त भाग समान है। इस ग्रन्थ के पढ़ने से प्रतीत होता है कि इसके ग्रन्थकार 'रामचरितमानस' के मर्मज्ञ थे। इनके द्वारा रचित और भी अनेक ग्रन्थ उपलब्ध हुए हैं, जिनकी चर्चा नागरी-प्रचारिणी सभा की खोज-रिपोर्ट (सन १९२६–२८) में है। इनका रचनाकाल सन् १८५७ के लगभग है। इनके अन्य ग्रन्थ खोज-विवरण, सन् १९२३–२५, ग्रं० सं० ३२७ और ३२८ हैं। इन्होंने 'भक्त मालको माहात्म्य' नामक ग्रन्थ की भी रचना की थी। इनके सभी ग्रन्थों के विषय प्रायः एक हैं—रामायण-सम्बन्धी पठन-पाठन-शंकाओं का समाधान। यह रचना गद्य-पद्य दोनों में है। इसकी भाषा पर कथा-शैली का तो प्रभाव है ही, यत्र-तत्र सधुक्कड़ी भाषा का भी प्रयोग हुआ है। विशेष विवरण के लिए देखिए— नागरी-प्रचारिणी सभा की खोज-रिपोर्ट। यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० का-८९ है।

६८. शृङ्गार-संग्रह—ग्रन्थकार—सर्दारकवि। लिपिकार— जुगलकिशोरलाल। अवस्था—अच्छी है। पृष्ठ—१५१। प्र० पृ० पं० लगभग—४०। आकार—८½" × ११"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल— ×। लिपिकाल—आश्विन-कृष्ण अमावास्या, सोमवार, सं० १९२३ वि० (सन १८६६ ई०)।

प्रारम्भ—"ओं श्री गणेशायनमः ॥ दोहा॥

भूजा की जाकी कृपा पूजा करत हमेस
दूजा हूजा जानवै सेस गनेश महेश॥ १॥
श्रीकाशीपति कामतरु कामधेनु गुन रास॥
जाके सेवक सुरुचिहैं औवड़सिंह खवास॥ २॥
तिन अतिसय करि के कृपा कही सुकवि सरदार॥
ग्रन्थ ऐक किजै रुचिर सब कविता के सार॥ ३॥
कवित्त रहे सब कविन के लक्षन सब अविरोध
जाके देषत सुनतहीं होहीं काव्य को बोध॥ ४॥

॥ स्वकीया लक्षन दोहा॥

पति सुश्रूषा लाजजुत सील छमाछल हीन॥
तासो स्वकीया कहतहैं कबिजन परम प्रवीन॥ ५॥

॥ कवित्व॥

जानि कुरंगन को मदमेल लगाइए अंगन रंग सुचैनी॥
चारदिनान भए अबहीं मति कौन चढ़ी चितपै पिकबैनी॥
माइके कौन मने करिदेहुँ करैं ससुरार की सार सुपैनी॥
राज कुमारि बिथा मरिए करिए किहि कारन भौंह तनैनी॥६॥"

अन्त—"लोलद्रिग लोलक अलक झलकत छवि छलकति स्रुति भानी करनकपोल मैं।
दीपति ललातें छटत विघटन पटनटत भृकुटी तट कलोल मैं।।
आजु वृजराज संग नवल किशोरी होरी षेलति लसति विलसति बर बोलमैं।
रंग झरिझेलत पछेलत ऊलोन चढ़ि मेलति गुलाल मिलि जाति फिरि गोल मैं
।। ५२७ ।।
सज-साज-समाज सुहायो किये रहिराजि मनोहरता मे भली ।।
निकसी निजु मंदिर-मंदिरतैं बिकसी जनु कंचन कंज कली ।।
कल गावैं किशोर बजावैं सुरंग रमावति गोकुलहूँ की गली ।।
व्रज वामैं घनी रचनामैं सनी घनस्यामैं वसंत घामें चली ।।५२८।।
सवत वानष हो ग्रह पुनि गौरी के नन्दन को द्विज धारन ।।
भादव क्रस्न अनूपम अष्टमि रोहिनि रिछमही सुतवारन ।।
उत्तम जो कवि है तिनके अति उत्तम जानि कवित्त विचारन ।।
संग्रह सो सरदार कियो यह औघड़सींह षवास के कारन ।।५२९।।
इति सम्पूर्णम् ।"

विषय—लक्षण-ग्रन्थ। नायिका नायक, रस, अलंकार आदि का विशद विवेचन पृष्ठ १ से १५१ तक। यह मौलिक रचना है। रचना में विभिन्न छन्दों का उपयोग हुआ है। विषय-शीर्षक लाल स्याही से लिखे गये हैं।

टिप्पणी : यह ग्रन्थ अनुसन्धेय है। रस, नायिका, अंगों के लक्षण और उदाहरण के साथ-साथ सभी ऋतुओं के आधार पर बड़ी सुन्दर रचना है। यह ग्रन्थ अप्रकाशित है। शब्दयोजना भावपूर्ण है। जैसे—

"सुरुचि सुबासनते वासन बनाइयाक सासन की सासन को कानन छरैंलगी ।।
पानन में पावन प्रमोद पूरि-पूरि भूरि भावते भरम भारे भूपन धरैं लगी ।।
कवि सरदार रास पास में प्रकासपाल परम प्रवीनपुज भनक भरैं लगी ।।
रूप मंजरी को जान आगम अनूप मालती मनोज मंत्र-तंत्र से पढै लगी ।।"

ग्रन्थ के अन्त का बहुत बड़ा भाग, वसंत, शरद्, वर्षा, हेमन्त, शिशिर आदि ऋतुओं के सम्बन्ध में बड़ी ही हृद्य रचना से समाप्त है। ग्रन्थ में 'ब' और 'व' के लिए अन्य ग्रन्थों के जैसा क्रमशः 'ब' और 'व़' का प्रयोग न करके साधारणतः 'व' का ही प्रयोग है। ऊपर के पद से, रचनाकाल का अस्पष्ट संकेत है। नागरी-प्रचारिणी सभा की खोज-विवरणिका, १९०९–११ में ग्रन्थ-सं० २८३ ए० में भी एक ग्रन्थ मिला है, जिसका रचना-काल १८७५ है। यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० संख्या का-९० है।

६९. **श्रीनाथजी के मन्दिर की भावना**—ग्रन्थकार—श्री हरिरायजी। लिपिकार—मुकुटवाला मोरारजू। अवस्था—अच्छी है।

पृष्ठ—३९। प्र० पृ० पं० लगभग—३८। आकार—६"×१०"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल —×। लिपिकाल—श्रावण-कृष्ण ९ (नवमी), गुरुवार, सं० १९७८ वि०, (सन् १९२१ ई०)।

आरम्भ—"श्री कृस्नायनमः ॥ श्री गोपीजनवल्लभायनमः ॥ अथ श्री नाथजी द्वारा की भावना तथा श्री नाथजी के मन्दिर की भावनालिख्यते ॥
दोहा ॥ श्री नाथजी मेरे नाथजी है मे हूं श्री नाथजी को दास ॥
मैं नाथी हूं नाथ की ॥ श्री नाथ के हाथ ॥१॥

याको अर्थ ॥

श्री नाथजी सो श्री नाथजी मेरे नाथ है ॥
सो मेरे धनी है। सो ये श्री नाथजी की दासी हूं।
सो मोकूं ईन ने नाथी है ॥

॥ संका ॥

बेलब गेरज नावरतौ नथांय कही आदमी नथांय ॥
सो अैसी कछु सुनी नहीं है ॥
तब कहेत है जो जैसें जना वर कें नाथ है ॥
सोतेसें आदमी नकूं ब्रह्म संबंध करावत है ॥ सो नाथ जों ॥

मध्य की पंक्तियाँ (पृष्ठ ८)—
"नवधा भक्ति के नाम ॥ श्रवण भक्ति ॥१॥ कीर्तन भक्ति ॥२॥ स्मरन भक्ति ॥३॥ पाद सेवन भक्ति ॥४॥ अर्चन भक्ति ॥५॥ वंदन भक्ति ॥६॥ दास्य भक्ति ॥७॥ सांक्ष भक्ति ॥८॥ आतम निवेदन भक्ति ॥९॥ सो ये नव भक्ति हों। सोतासूंवेनो सिटी हैं ॥"

अन्त—"सो सब रेसम में ओर सूत में पोवेल हैं।
रेसमी डोरा में फुंदा सुंधा विराजत हें ॥
सो कितन को बरनन करें ॥
श्रीश्रीश्री १०८ श्रीश्री अब श्रीहरिरायजी आपु आज्ञा करत हें ॥ जो कोई वैस्नव श्री नाथजी के मन्दिर की भावना सुने ॥
और सुनावे ओर बांचे ॥
ताके सकल मनोर्थ पूरण होंयगे ॥
इति श्री नाथजी द्वारा की भावना तथा श्री नाथजी के मन्दिर की भावना श्री हरिरायजी कृत सम्पूर्णम् ॥"

विषय—श्री नाथजी के मन्दिर की सभी वस्तुओं की सूची। गद्य-ग्रन्थ।

टिप्पणी : इस ग्रन्थ में श्रीनाथजी के मन्दिर की वस्तुओं का गद्यशैली में रोचक वर्णन है। यह गद्यशैली, बनारस, गाजीपुर के आसपास की है। ग्रन्थ के अन्त में दो

पृष्ठों में, पूरे ग्रन्थ में जिन स्थानों में जिन वस्तुओं के विषय में, जिस पृष्ठ में लिखा है, उसकी सूची दे दी गई है। इस ग्रन्थ से उक्त मन्दिर और मन्दिर के आसपास के स्थान तथा ऐतिहासिक सभी सामान का ज्ञान हो जाता है। ग्रन्थ की लिपि प्राचीन है। इसके लिपिकार कोई मेवाड़ के सज्जन प्रतीत होते हैं, जैसा कि ग्रन्थ के अन्त में दी गई एक मुहर से ज्ञात होता है। इसमें पूर्णविराम, अर्धविराम आदि नहीं हैं। ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० का-९१ है।

७०. **शंतपंच चौपाई**—ग्रन्थकार—×। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी है। पृष्ठ—८। प्र० पृ० पं० लगभग—२४। आकार—४½" × ६⅓"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"भृकुटि मनोज भालछबिहानी तिलक ललाट पटल द्युतिकारी।
कुंडल मकर मुकुट सिरमाला कुटिल केसजनु मयूष समाजा॥
उर श्रीवत्स रुचिर बरमाला फटिक हार भुषन मनि जाला।
केहरि कंच रचारु जनेउ बाहु विभूषन सुन्दर तेउ॥"

मध्य की पंक्तियाँ (पृष्ठ ४)—
"शारद विमल विधु वदन शोहाबन।
नयनन वल राजीव लजावन॥
श्याम शरीर शुभाव शुहावन।
शोभा कोटि मनोज लजावन॥"

अन्त—"नील कंज लोचन भव मोचन, भ्राजत भाल तिलक गौलोचन।
बिकट भ्रिकुटि सम स्रवन शुहाए, कुंचित कचमेचक छविछाऐ।
पीत……………………शोहै किल कनिचित वनि भावति मोहै
रूप राशि त्रिप अजिर विहारी……श्याम गात बिशाल भुजचारी
अश्तुति करती नयन भरिवारी।"

विषय—रामचन्द्रजी के जन्म तथा बाललीला का वर्णन। चौपाइयों में ही समस्त रचना है। राम-सौन्दर्य और भाइयों के बाल-चापल्य का, उनकी वेश-भूषा आदि का वर्णन है। रचना तुलसीदास के रामचरित-मानस जैसी है।

उदाहरणार्थ—"राम वाम दिश सीता शोइ
के कि कंठ दिति श्यामल अंगा
तड़ित विनिन्द्य कवशन शुरंगा
………विभुषन विविध वनाए
मंगल शुभ शव भाँति सुहाए

और भी— शर शिज लोचन बाहु विशाला
जटा मुकुट शीर उर वनमाला
श्याम गौर शुन्दर दोउ भाई
....
श्याम गात शीर जटा वनाए
अरुन नयन शर चाप चढाए"

टिप्पणी : लिपि प्राचीन है। शैली पुरानी होने के कारण अस्पष्ट है। भाषा अवधी से मिलती-जुलती है। ग्रन्थ कई स्थानों पर बीच-बीच में फट गया है। लिपिकार का नाम, तिथि आदि नहीं हैं। लिपिकार ने अन्य ग्रन्थों के समान ही ब' के लिए 'व' और 'व' के लिए 'व' के नीचे बिन्दु का प्रयोग किया है। 'श' और स' में कोई अन्तर नहीं है। यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० का-९२ है।

७१. सप्तसाहिनी छन्द रामायण—ग्रन्थकार—शिव प्रसाद। लिपिकार—शिव प्रसाद। अवस्था—अच्छी है। पृष्ठ—२। प्र० पृ० पं० लगभग—१२। आकार—४½" × ६½"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—अग्रहायण-कृष्ण एकादशी, भौमवार, सं० १९४६ वि० (सन् १८८९ ई०)। लिपिकाल—अग्रहायण-कृष्ण ११ (एकादशी), भौमवार, सं० १९४६ वि० (सन् १८८९ ई०)।

प्रारम्भ—"श्री गणेशायनमः श्रीरामचन्द्रायनमः ॥ साहिनी छन्द ॥
राम अवधनरेश दशरथ घरजनमि सबहिं निर्भर सुख दीन्ह ॥
मारि ताड़िका सुभुज सदल प्रभु कौशिक मुनिमघ रक्षा कीन्ह ॥
तारि अहिल्या तोरिहर धनुष भृगुपति मदमथि सिया विवाहि ॥
ब्याहि भाई सब दुलहिनि लै घर आये सो सुख कहिन सिराहि ॥२॥
तात वचन मुनिवेष सिया लषन सहित जाई वन राम सुजान ॥
देत मुनिन्ह सुख दंड जयंतहि बधेबिराध असुर बलवान ॥३॥"

अन्त— "देव ऋषिहिं उपदेश बालि वधि कीन्ह सखासुकंठ कपिराइ ॥
फिरे पवन सुत पाई पृया सुधि चले भालु कपि कटक बनाइ ॥५॥
बाँधि समुद्र पार उतरे प्रभु सकुल घोर रण रावण मारि ॥
करि लंकापति जन विभीषणहिं चले पुष्प कारूढ खरारि ॥६॥
आइ भवन मिलि सकल शोकहरि गुरु आयसु बैठे पितुराज ॥
शिवप्रसाद तिहुंलोक मोदभर सव जपजयकर सहित समाज ॥७॥
इति श्री सप्तसाहिनी छंद रामायण शिव प्रसाद कृत सम्पूर्णम् ॥
शुभमस्तु सिद्धिरस्तु ॥"

विषय—राम-जीवनी संक्षेप में, सात पदों में।

टिप्पणी : इस ग्रन्थ की लिपि स्पष्ट तथा सुन्दर है। केवल सात पदों में सम्पूर्ण रामकथा को संक्षिप्त करके रख दिया है। यह ग्रन्थ गया नगर के श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय में संगृहीत है। पु० क्र० सं० क-९४ है।

७२. **संक्षिप्त दोहावली**—ग्रन्थकार–श्रीशिव प्रसाद। लिपिकार–श्रीशिव प्रसाद। अवस्था—अच्छी। पृष्ठ-सं०—२। प्र० पृ० पं० लगभग–१२। आकार—$४\frac{1}{3}'' \times ८\frac{1}{3}''$। लिपि—नागरी। रचन काल—श्रावण-कृष्ण २ (द्वितीया), रविवार, सन् १९२८ वि०।[1] लिपिकाल—कार्तिक-शुक्ल एकादशी, रविवार, सं० १९४६ वि० (सन् १८८९ ई०)।

प्रारम्भ०—"अमित ऋच्छकपि कटकलौ पहुचि नीर निधितीर।
सेतु बांधि अस्थापि र पार भये रघुवीर ॥१६॥
उतरे सदल सुवेल पर अंगद गये खारि॥
फिरे हरषि प्रभुपद गहे रावण गर्व निवारि ॥१७॥
घेरे तब कपि भालुभट अरिपुर चारिहुंद्वार॥
ऋपुदल आइ भिरे युगल कीन्ह भयंकरमार ॥१८॥
राम कृपाकपि ऋच्छदल जय जय जय उच्चार॥
लरि सुखेन कीन्हे सकल रावण दल संहार ॥१९॥"

अन्त०—"राम चरित पयनिधि अगम लहेन कवि कोउ पार॥
शिव प्रसाद किमि कहिसके मन्दमलीन गवार ॥२४॥
रस गोथन ग्रह चन्द्रमा श्रावण मास पवित्र॥
कृष्ण दूज रवि दिवस यह पूरयौ राम चरित्र ॥२५॥
इति श्री संक्षिप्त दोहावली रामायण शिव प्रसाद कृत सम्पूर्णम् ॥
शुभमस्तु सिद्धिरस्तु ॥"

विषय—रामकाव्य।

टिप्पणी : इस ग्रन्थ में संक्षेप में, रामचरित्र को, दोहों में कहा गया है। उपर्युक्त ग्रन्थ के साथ ही यह भी एक ही जिल्द में है। दोनों ग्रन्थों में लिपिकार ने लिखा है—"गंगा विष्णु कायस्थ श्रीवास्तव गया-निवासी हेतु लिखित्वा शुभ सम्वत् १९४६ कार्तिक शुक्लैकादशी रविः।" ग्रन्थ के प्रारम्भ में १ पृष्ठ, १४ पद नहीं हैं। लिपि स्पष्ट और सुन्दर है।

यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में संगृहीत है। पु० क्र० सं० क-९४ है।

---

१. श्री वेदप्रकाश गर्ग के मत से यह रचनाकाल सं० १९२८ वि० न होकर १९४६ वि० है। दे०—व्रज भारती, वर्ष १५, अंक २ (भाद्रपद, २०१४ वि०), पृ० सं० ७३।

७३. सप्तहरि गीत छंद रामायण—ग्रन्थकार—श्रीशिव प्रसाद। लिपिकार—श्रीशिव प्रसाद। अवस्था—अच्छी। पृष्ठ-सं०—३। प्र० पृ० पं० लगभग—१२। आकार—४$\frac{1}{3}$" × ८$\frac{1}{3}$"। लिपि—नागरी। रचनाकाल—श्रावण-कृष्ण द्वितीया, रविवार, सं० १९२८ वि०। लिपिकाल—कार्त्तिक-शुक्ल एकादशी, रविवार, सं० १९४६ वि० (सन् १८८९ ई०)।

प्रारम्भ—"श्री गणेशाय नमः॥ श्री शिवाय नमः॥
श्री रामचन्द्राय नमः॥

दोहा

श्री गुरुपद शुभसद सुमिरि राम सुयश यश धाम॥
बरणौं कछु कस प्रेम रटि राम राम जयराम॥

॥ हरिगीत छंद॥

जय राम ब्रह्म अनूप पूरण रूप प्रभु अग जग धनी॥
बपु चार वर अवधेश घर लै जन्म इच्छा आपनी॥
हनि सेन सहताड़िका सुभुजहिं गाधि सुत भवराखेउ॥
उरहरषि सुरमुनि सुमन पुनिपुनि बरषि जयजय भाषेउ॥१॥"

अन्त०—"दै लंक बीभीषणहिं सहसिय लषन पृयगण वहुजने॥
चढि चले राम सुजान पुष्पक यान सब जय जय भने॥
घर आइ लीन्हे राजपुर नभ सुमन झरलायऊ॥
भर भुबन शीवप्रसाद जय जय जयति कहि यशगायउ॥७॥

॥ दोहा॥

ऋतु ब्रह्मानन खण्डबिधु स्रावण शुक्ल पुनीत॥
परिवा रवि वस रामयश सप्तछन्द हरिगीत॥
इति श्री सप्त हरिगीत छन्द रामायण शिव प्रसाद
कृत संपूर्णम्॥"

विषय—राम-काव्य।

टिप्पणी: ग्रन्थ की लिपि स्पष्ट, किन्तु शैली प्राचीन है। ग्रन्थकार ही लिपिकार भी हैं। ग्रन्थ के अन्त में—"श्री बाबू गंगा विष्णु कायस्थ श्रीवास्तव गयावासी हेतु लिखित॥" लिखा है।

यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में संगृहीत है। पु० क्र०-सं० ९४ है।

७४. सप्तसोरठा रामायण—ग्रन्थकार—श्रीशिव प्रसाद। लिपिकार—श्रीशिव प्रसाद। अवस्था—अच्छी। पृष्ठ-सं०—२। प्र० पृ० पं० लगभग—१२। आकार—४$\frac{1}{3}$" × ८$\frac{1}{3}$"। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×।

लिपिकाल-अगहन-कृष्ण एकादशी, भौमवार, सं० १९४६ वि० (सन् १८८९ ई०) ।

प्रारम्भ—"श्री गणेशाय नमः ॥ श्रीमते रामानुजाय नमः ॥ सोरठा ॥
राखि सुमुनि भष रामतारि शिला शिवचाप दलि ॥
सिय विवाहि सुखधाम संगहिं ब्याहे वंधु सब ॥१॥
लै दुलहिन सब संग पंथ भार्गव मान मथि ॥
घर आए श्रीरंग जय-जय धुनि त्रिभुवन भरयो ॥२॥"

अन्त—"सिंधु बाँधि गै पार मारे रण रावण सकुल ॥
सुर मुनि सुखदातार करि लंकेश विभीषणहिं ।६॥
आइऊवध लै राजलोक सकल हर्षित किये ॥
सुरनर सन्त समाज शिव प्रसाद जय यश भजे ॥७॥
इति श्री सप्त सोरठा रामायण शिव प्रसाद कृत संपूर्णम् ॥"

विषय—रामभक्ति-विषयक रचना ।

टिप्पणी : सोरठा के ७ पदों में सम्पूर्ण रामायण-कथा को बड़े ही रोचक और सुन्दर ढंग से व्यक्त किया है। ग्रन्थ के अन्त में—"श्री बाबू गंगाविस्नु हेतुः गयाक्षेत्र मध्य लिखित्वा" लिखा है। ग्रन्थ-लिपि स्पष्ट है। यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क-९५ है।

७५. सवैया—ग्रन्थकार—श्रीसुन्दर दास। लिपिकार—तिलकदास। अवस्था—अच्छी, प्राचीन, हाथ का बना मोटा देशी कागज। पृष्ठ-सं०—१०८। प्र० पृ० पं० लगभग—२२। आकार—६" × ९½"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—× । लिपिकाल—श्रावण-शुक्ल प्रतिपदा, भृगुवार, सं० १९०६ वि० (सन् १८४९ई० , शकाब्द—१७७०)। सम्पूर्ण।

प्रारम्भ—"ॐ श्री गणेशाय नमः ॥ अथ गुरुदेव को अंग लिख्यते। सुन्दरदास कृता।

॥ सवैया ॥

मौजकरी गुरुदेव दयाकरि शब्द सुनाई कहे हरिनरो ॥
ज्यौं रवि के प्रगटे नीसिजात सो दूरि कियो मर्ममानी अंधेरो ॥
कायकबाघ कमान सहूं करिहै गुरुदेवहिं बंदन मेरो ॥
सुन्दरदास कहे करजोरि जु दादु दयालके हौं नितचेरो ॥ १ ॥
पूरण ब्रह्म विचार निरंतर काम न क्रोध न लोभ न मोहै ॥
श्रोतु तुचा रसना अरु घ्रान सुदेपि कछु नैनन सन मोहै ॥
ज्ञान सरूप अनूप निरूपन जासु गिरा सुन मोहन मोहै ॥
सुन्दरदास कहै कर जोरि दादु दयालहिं मो मन मोहै ॥ २ ॥"

मध्य की पंक्तियां (पृष्ठ ४५)—

"कामहीन क्रोध जाकै लोभहीन मोह ताकै
मदहीन मतसर कोऊ न विकारो है ॥
दुप ही न सुष मानै पापी हो न पुन्य जानै
हरप न सोक आनै देह हिते न्यारो है ॥
निंदा न प्रसंसा करै राग ही न दोष धरै
लेन नहीं देन जाकै कछु न पसारो है ॥
सुंदर कहत ताके अगम अगाध गति
अैसो कोऊ साधु सो तो रामजी को प्यारो है ॥ १६ ॥"

अन्त—"येकहि ब्रह्म रह्यो भरपुर तो दूसर कौन बतावनिहारौ ॥
जो कोई जीव करै परबा न तो जीव कहांकछु ब्रह्म से न्यारौ ॥
जो कोइ जीव भये जगदीशते तौ रबिमांह कहा को अधारौ ॥
सुन्दर मौन गही यह जानि कै कौनहूं भांति न न्हो निनुआरौ ॥ ११ ॥
जो हम षोज करै अभि अंतर तौ वह षोज उरै हिवो लावै ॥
जो हम बाहर को उठि दौरत तौ कछु बाहर हाथ न आवै ॥
जो हम काहु को पूंछत हौ पुनि सोउ अगाध अगाधवतावै ॥
ताहि ते कोउ न जानि सकै तेहि सुन्दर कौनसि ठौरवतावै ॥ १२ ॥
नैनन बैनन सैनन आसन वासन स्वासन खासन पातै ॥
सीत न घाम न ठौन उठा मन पुर्स न वाम न बाप न मातै ॥
रूप न रेष न शेष अशेष न सेत न पीत न स्याम न रातै ॥
सुन्दर मौन गहि सिद्ध साधक कौन कहै उसकी मुष बातै ॥ १३ ॥
वेद थके कहि तंत्र थके पुनि ग्रंथ थके निसुवासर गातै ॥
शेश थके शिव इन्द्र थके पुनि षोज कियो बहुभांति बिद्यातै ॥
पीर थके अरु मीर थके पुनि धीर थके बहुबोलि गिरातै ॥
सुन्दर मौन गही सिद्ध साधक कौन कहै उसकी मुष बातै ॥ १४ ॥
जोगि थके कहे जैनि थके कहि तापस थाकि रहे फल षातै ॥
सन्यासी थके बनवासी थके जो उदासी थके बहुफेरि फिरातै ॥
शेषम सायेक औरउ लायेक थाकि रहे मनमे मुसकाते ॥
सुंदर मौन गही सिद्ध साधक कौन कही उसकी मुख बाते ॥ १५ ॥
इति श्री संदरदासेन विरचितेयां ग्रन्थ सवैया सम्पूर्णम् ॥
सिद्धिरस्तु शुभमस्तु ॥ समाप्तः ॥ शुभं भूयात् ॥"

विषय—दर्शन और साहित्य। श्री गुरुदेवजी को अंग; उपदेश चेतावन अंग, काल चेतावन अंग; आत्म विछोह अंग; तृष्णा को अंग; अधीर को उपदेश अंग, विश्वास अंग; देहमलिनता गर्भ प्रकार अंग; नारी निन्दा अंग; दुष्ट को

अंग; मन को अंग; चानक को अंग; ज्ञान को अंग; वचन विवेक को अंग; निरगुन उपासना को अंग; पतिव्रता को अंग; विरहिणी को अंग; सार शब्द को अंग; सूरतन को अंग; साधु को अंग; भक्तज्ञानी को अंग; विपर्यय शब्द को अंग; अपने भाव को अंग; सरूप विस्मरण को अंग; सांख्य ज्ञान को अंग; विचार को अंग; ब्रह्म निष्कलंक अग; आत्म अनुभव को अंग; विज्ञान को अंग; प्रेमज्ञानी को अंग; अद्वैत ज्ञान को अंग; जगत मिथ्या को अंग और आचाय्य को अंग। इन अंगों के वर्णन में १०८ पृष्ठों में ५४४ पद हैं।

टिप्पणी : इस ग्रन्थ में सन्त सुन्दरदासजी ने ईश्वर, आत्मा, प्रकृति आदि के अतिरिक्त मोक्ष आदि जीवन की अनेक उपयोगी समस्याओं पर दार्शनिक दृष्टिकोण से विचार किया है। इस ग्रन्थ में अध्याय को अंग कहा गया है। पूरे ग्रन्थ को ३३ अंगों अर्थात् अध्यायों में बाँटा है। कुल ५४४ पद हैं। इसमें प्रथम अध्याय (अंग) में अपने गुरु के विषय में लिखा गया है। ये श्री गुरु दादूदयाल जी के शिष्य थे। स्थान-स्थान पर, पूरे ग्रन्थ में तो उनकी महिमा गाई गई ही है, किन्तु एक अंग ही पूरा, उनके लिए लिखा गया है, और सभी गुरुओं से उन्हें महान् बताया गया है, जो निम्नलिखित पदों से व्यक्त होता है—

"चिंतामनि पारस कल्पतरु कामधेनु औरउ अनेक निधि वारि-वारि नाषिये ।।
जोई कछु देषिये सो सकल बिनासवंत बुध में विचार करिबहु अभिलाषिये ।।
ताते ऊव मनवच क्रम करि करि जोरी सुंदर कहत सीस पग मेलिभाषिये ।।
बहुत प्रकार तीनो लोक सब सोधे हम अैसी कौन भेंट गुरुदेव आगे राषिये ।।२३।।
महादेव बामदेव ऋषभ कपिलदेव व्यासदेव शुकहुं जै देव नाम देवजु ।।
रामानंद सुषानंद कहिअ अनंतानंद सुर सुरानंदहुं के आनन्द अछवजु ।।
रैंदास कबिरदास सोहादास पीपादास घनादासहुं के दास भांवहिंके टेकजु ।।
सुंदर सकल संत प्रगट जगतमांही तैसे गुरु दादुदास लागे हरिसेवजू ।।२४।।
गुरुदेव सबो पर अधिक विराजमान गुरुदेव सबहीं ते अधिक गरीष्ट हैं ।।
गुरुदेव दत्तात्रय नारद शुकादि मुनि गुरुदेव ज्ञान धन प्रगट वशीष्ट हैं ।।
गुरुदेव परम आनन्दमय देषिअत गुरुदेव वर वरे आनहु वरीष्ट हैं ।।
सुन्दर कहत कछ महिमा न कही जाई अैसे गुरुदेव दादु मेरे शिर इष्ट हैं ।।२५।।

इसी प्रकार पूरे २७ पद गुरुदेव 'दादूदयाल' के लिए इन्होंने रचे हैं। इन्होंने निराकार निर्गुण ब्रह्म की उपासना का समर्थन किया है। ग्रन्थ बड़ा ही उपादेय और अनुसन्धेय है। ग्रन्थ की लिपि की शैली प्राचीन होते हुए भी स्पष्ट है। रचनाकाल के सम्बन्ध में, प्रारम्भ या अन्त में निर्देश नहीं किया है। लिपिकार ने ग्रन्थ के अन्त में—"शुभ संवत् १९०६ ।। शाकाब्दे १७७० श्रावणे मासे सीत पक्षे परिव यां भृगवासरे ।। यालेखि दास तिलकेन सवैयायां शुभ ग्रंथकम् ।।१।।

यस्या द्रिस्यं तस्य पुस्तकं ता दृष्ट्वा लिखिते मया ॥
यदि शुद्धं वामशुद्धं वा मम दोषो न दियते ॥
माला बिंदु विसर्गश्च पदवाक्षर मेव च ॥
यतीतं यदि लेखेन क्षमावंतो पण्डिताततभिः ॥
भग्नेष्टष्टे कटीगृवं तत्वदृष्टोऽधोमुखम् ॥
एतत्कष्टे लेखिते पुस्तकं पुत्रवत्परिपालनम् ॥

॥ दोहा ॥

रस शून्यं नव इंदुमिलिवामे अंक दहाय ॥
संवत कर यह नाम है बुद्धिजन लेव मिलाय ॥"

लिखा है, जिससे लिपिकार का नाम, काल आदि स्पष्ट होता है। अन्य ग्रन्थों के साथ लिपि में 'ब' और 'व' के लिए क्रमशः 'व' और 'व्' का प्रयोग नहीं करके दोनों के लिए केवल 'व' का ही प्रयोग किया गया है। साथ ही 'य' और 'ज' के लिए क्रमशः 'य' और 'य्' का प्रयोग नहीं है, अपितु केवल 'य' का प्रयोग है। सुविधानुसार इसे ठीक कर लिया जाना चाहिए। इस ग्रन्थ की रचना में साहित्य के अंगों की उपेक्षा नहीं की गई है। नागरी-प्रचारिणी सभा की खोज-विवरणिका में भी इनका उल्लेख हुआ है। देखिए—खो० वि० (सन् १९२६–२८ ई०), पृ० ६८०, सं० ४७० बी० और ४७० सी०। नागरी-प्रचारिणी सभा की खोज में जो प्रति उपलब्ध हुई है, उसमें लिपिकाल क्रमशः सं० १८८५ और सं० १९२३ है। इस पुस्तकालय की प्रति का लिपिकाल है सं० १९०६। अन्य खोज-विवरणों में भी यह ग्रन्थ मिला है, जिनमें लिपिकाल सं० १७७३ है। देखिए—खो० वि० १९०२, ग्रं० सं० २५, २६)

दूसरा है—सं० १८७० (खो० वि० १९०६–८, ग्रं० सं० २४२ ए०)
तीसरा है—सं० १८३४ (खो० वि० १९१२–१६, ग्रं० सं० १८४ बी०)
(खो० वि० १९२३–२५, ग्रं० सं० ४१५)

इन खोज-विवरणों के लिपिकाल पर ध्यान देने से इस पुस्तकालय में संगृहीत ग्रन्थ भी प्राचीन प्रतीत होता है। साथ ही यह भी स्पष्ट होता है कि ये कवि १९वीं शताब्दी के पूर्वार्ध के थे। इसके अतिरिक्त श्री सुन्दरदास जी के और भी अनेक ग्रन्थों का नागरी-प्रचारिणी सभा की खोज-रिपोर्ट में उल्लेख हुआ है। अवश्य इस ग्रन्थकार की मौलिक रचना ध्येय है। इनके निम्नलिखित अन्य ग्रन्थ उपलब्ध हुए हैं—

१. ज्ञान समुद्र लिपिकाल—१७७३ वि० (खो० वि० १९०२, ग्रं० सं० १६५)
,, १८०० वि० (खो० वि० १९२०, ग्रं० सं० ३४)
,, १८६३ (खो० वि० १९०६–८, ग्रं० सं० २४२ बी०)

ज्ञान समुद्र लिपिकाल— १८७८ (खो० वि० १९०९–११, ग्रं० सं० ३११ ए०)
(खो० वि० १९२३–२५, ग्रं० सं० ४१५)

२. पंचेन्द्रिय निर्णय, लिपिकाल–१८४३ (खो० वि० १९१२–१६, ग्रं० सं० १८४ ए०)
३. विचारमाला ,, १८७८ (खो० वि० १९०९–११, ग्रं० सं० ३११ सी०)
४. विनयसार ,, १८७० (खो० वि० १९०२, ग्रं० सं० ८८)
५. विवेक चिन्तामणि (खो० वि० १९०९–११, ग्रं० सं० ३११)
६. सुन्दरदास की वानी ,, १७३५ (खो० वि० १९०९–११, ग्रं० सं० ३११ बी०)
७ सुन्दर विलास ,, १८७० (खो० वि० १९०६–८, ग्रं० सं० २४२सी०)
(खो० वि० १९२३–२५, ग्रं० सं० ४१५)

इनकी इन सभी रचनाओं के अध्ययन की आवश्यकता है, साथ ही प्रकाशन की भी। यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क-९७ है।

७६. **सवैया**—ग्रन्थकार—सुन्दरदास। लिपिकार—जुगलकिशोर लाल। अवस्था—अच्छी है। पृष्ठ-सं०—७५। प्र० पृ० पं० लगभग—१८। आकार—६" × १३$\frac{1}{3}$"। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—पौष-शुक्ल १४ (चतुर्दशी), सं० १९२० (सन् १३६३ साल)।

प्रारम्भ—"ऊँ श्री गणेशायनमः ॥ अथगुरुदेव को अंगलिख्यते ॥ सुरदास कृत।

सवैया

मौजकरी गुरुदेव दयाकरि सब्द सुनाइ कहै हरिनेरो ॥
ज्यौं रवि के प्रगटे नीसिजात सो दूरिकियो मर्ममानिअंधेरो ॥
कायक बांचक मानस हूं करि है गुरुदेव हिबंदन मेरो ॥
सुंदर दास कहे करजोरिजु दादुदयाल के हौं नितचेरो ॥१॥
पूरणब्रह्म विचार निरंतर काम न क्रोध न लोभ न मोहो ॥
श्रोततुचा रसनाअरुघ्रान सुदेषिकछुनैनन मन मोहे ॥
ज्ञानसरूप अनूपनिरूपन जासुगिरासुनि मोहन न मोहे ॥
सुरदास कहे करजोरिजु दादुदयाल हि मो मन मोहे ॥२॥"

मध्य की पंक्तियाँ (पृष्ठ ३६)—

"महामंद हांथी मन राख्यौ हेय करि जिन
अतिही प्रपंचजामै वहुत गुनमान है ॥
काम क्रोध लोभ मोहवांध्यौ चारो पांव जिनि
छूटने न पावै नेक प्रान पीलवान है ॥
कवहूं न करै जोर सांवाधान सांझ भोर
महां एक हांथ में अंकुस गुरज्ञान है ॥

सुंदर कहत और काहू के न वस होय
अैसो कौन सूरवीर साधु के समान है॥ १३॥"

अन्त —"इंद्रवज्राछंद॥ कै यहदेहधरो वन पर्वत कै यह देह नदी में बहौजु॥
कै यह देह धरो धरती मंह कै यह देह कृशानु दहोजु॥
कै यह देह निरादर निंदहु कै यह देह सराहि कहौजु॥
सुंदर संसय दूरिभयो सब कै यह देह चलो किर हौजु॥ ३॥
कै यह देह सदासुषसंपति कै यह देह विपति परोजु॥
कै यह देह निरोग रहो नित कै यह देहहि रोग वरोजु॥
कै यह देह हुतासन पैठहु कै यह देह हिंवारे गरौजु॥
सुंदर संसय दूरिभयो सबकै यंह देह जिवो की मरोजु॥ ४॥
इति निरसंसै अंग सम्पूर्णम्॥ इति श्री सुन्दरदास वीरचितेयां ग्रंथ सवैया सम्पूर्णम्॥ सिद्धिरस्तु॥ सुभ मस्तु॥

विषय—दर्शन, साहित्य और अध्यात्म। अन्य प्रायः पूर्ववत्। पृष्ठ १ से ४ तक—गुरुदेव को अंग, पृ० ४ से ८ तक—उपदेश चेतावन को अंग; पृष्ठ ८ से १२ तक—देह आतमा को अंग; पृष्ठ १२ से १४ तक—देहात्मा विरह को अंग; पृष्ठ १४ से १५ तक—तृष्णा को अंग; पृष्ठ १५ से १७ तक—विश्वास को अंग; पृष्ठ १७ से १८ तक—देह मलिन को अंग; पृष्ठ १९ से २० तक—रानी निंदक; पृष्ठ २० से २१ तक—दुष्ट को अंग; पृष्ठ २१ से २४ तक—मन को अंग; पृष्ठ २४ से २७ तक—चानक को अंग; पृष्ठ २७ से २८ तक—विपरीतज्ञान को अंग; पृष्ठ २८ से ३० तक—वचनविवेको अंग; पृष्ठ ३० से ३१ तक—निर्गुण को उपासना अंग; पृष्ठ ३१ से ३२ तक—पातिव्रत को अंग; पृष्ठ ३२ से ३३ तक—विरह ओराहनो अंग; पृष्ठ ३३ में निरसंसै अंग; पृष्ठ ३३ से ३४ तक—सारशब्द को अंग; पृष्ठ ३४ से ३६ तक—सुरातान अंग; पृष्ठ ३६ से ४० तक—साधुको अंग; पृष्ठ ४० से ४१ तक—भक्तिज्ञानमिश्रित अंग; पृष्ठ ४१ से ४४ तक—विपर्य्यय अंग; पृष्ठ ४५ से ४६ तक—आतमभाव अंग; पृष्ठ ४६ से ५० तक—स्वरूप विस्मरन को अंग; पृष्ठ ५० से ५५ तक—सांख्यज्ञान अंग; पृष्ठ ५५ से ५८ तक—आतमानुभव अंग; पृष्ठ ५८ से ५९ तक—निष्कलंक अंग; पृष्ठ ५९ से ६३ तक—अनुभव आतमा अंग; पृष्ठ ६३ से ६७ तक—ज्ञानी को अंग। पृष्ठ ६७ से ६८ तक—प्रेमज्ञानी को अंग; पृष्ठ ६८ से ७१ तक—अद्वैतज्ञान को अंग; पृष्ठ ७१ से ७२ तक—जगत मिथ्या को अंग और पृष्ठ ७२ से ७४ तक—आचार्य्य को अंग एवं पृष्ठ ७४ से ७५ तक—निरसंसै को अंग लिखकर ग्रन्थ सम्पूर्ण किया गया है।

टिप्पणी : यह ग्रन्थ भी पूर्व के ही ग्रन्थकार का है। ग्रन्थ ध्येय और अनुसन्धेय है।

ग्रन्थ में अध्याय को 'अंग' कहा गया है। निराकार ब्रह्म का प्रतिपादन और निर्गुण की उपासना का उपदेश है। सांख्य-ज्ञान-सम्बन्धी अध्याय में बड़ा ही भावपूर्ण प्रश्नोत्तर है—

"घनाक्षरी ।। प्रश्न ।।

कैसे के जगत यह रचो है जगत गुर मो सो कहों प्रथम हि कौनतत्व कीन्हो है।।
प्रकृति पुरुष कींधो महांतत्व अहंकार कीधों उपजाय सत रजतम तीनो है।।
किंधोव्योम वायतेज आपकी अवनिकीन्हों किधों पंच विषय पस रिकरि लीन्हो है।।
किंधो दस इंद्रिकीधों अतह करण कीन्हें सुंदर कहत कियो सकल विहीनो है ।।६।।

।। प्रति उत्तर ।।

ब्रह्म तें पुरुष अरुप्रकृति प्रगट भइ प्रकृति तें महातत्व पुनि अहंकार है ।।
अहंकार हूं ते तीनि गुण सत रजतम तमहूं ते महांभूत विषय पसार है ।।
रजहूं ते इंद्रिय दस पृथक्-पृथक् भइ सतहूं ते मन आदि देवता विचार है।।
अैसे अनुक्रमकरि सिष्य सो कहत गुर सुंदर सकल यह मिथ्या भ्रमजार है।।२७।।"

इस प्रकार के और भी कई प्रश्नोत्तर हैं। आत्मासम्बन्धी रहस्यवादी विचार—

।। सवैया ।।

"हे दिल मे दिलदार सही अंपिया उलटी करिता हिचितैअै ।।
आवमे षाकमे वादमे आत सजानमे सुंदर जान जनै अै ।।
नूरमे नूर है तेजमे तेज है जोतिमे जोति है एके मिलि जैअै ।।
क्या कहिये कहते न बनै कछु जो कहिये कहते हि लजैअै ।।१।।"

इस सवैया में स्पष्ट है।

इस ग्रन्थ की लिपि स्पष्ट एवं सुन्दर है। कहीं-कहीं सामान्य पाठ-भेद भी है। इसमें प्रायः मूर्धन्य 'ण' के स्थान पर दन्त्य 'न' का ही प्रयोग किया है। कई स्थानों पर छन्द आदि के सम्बन्ध में भी उस ग्रन्थ से इसमें पाठ-भेद है। इस ग्रन्थ में अन्त का 'निरसंसै अंग' बीच में छूट गया था, जिसे अन्त में लिखा गया है। ग्रन्थ विवेच्य है। नागरी-प्रचारिणी सभा की खोज-रिपोर्टों में इस ग्रन्थ के सम्बन्ध में भी उल्लेख है। उसकी चर्चा ग्रं० सं० ७५ में देखिए। यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में संगृहीत है। पु० क्र० सं० क-९८ है।

७७. साहिनी छन्द रामायण—ग्रन्थकार श्रीशिव प्रसाद। लिपिकार—श्रीशिव प्रसाद। अवस्था—अच्छी। पृष्ठ-सं०—१३। प्र० पृ० पं० लगभग—२१। आकार—४½" × ६⅓"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—पौष-कृष्ण १० (दशमी), शुक्रवार, सं० १९४५ वि० (सन् १८८८ ई०)। लिपिकाल—कार्त्तिक-शुक्ल ५ (पंचमी), भौमवार, सं० १९४६ वि० (सन् १८८९ ई०)।

प्रारम्भ—"श्री गणेशायनमः ।। श्री शिवायनमः ।। श्री रामायनमः
साहिनी छन्द ।।
श्री गुरुवरगणेश गिरिजाहर गिराविशदपदसद शिरनाई ।।
रामकथा कछु कहौं यथामति मन्दसाहिनी छंद बनाइ ।।१।।
पूरण ब्रह्म अखिलजगकारण युगती जे टारण मूंभार ।।
अवधनगर दशरथ नरेशघर धरिवपुचार लीन्ह अवतार ।।२।।
हर्षवन्त सुरनरमुनि तिहुंपुर पुनि पुनि जय जय धुनि अभिराम ।।
राम लक्ष्मण भरत शत्रुहन मुनिवशिष्ठगुणि राखे नाम ।।३।।"

मध्य की पंक्तियाँ (पृष्ठ ७)—
"देखत सरिसर गिरिकाननघन पञ्चवटी दण्डक वन जाइ ।।
गोदावरी समीप कृपाला रहे पर्णशाला बनवाइ ।।४६।।
सोवन पावन भयउ सुहावन फुलाफला हरा सब काल ।।
मुनिगण सुजन सकल सुख पाये जवतें आये राम कृपाल ।।४७।।
सुर्पनषा रावण की भगिनी आई ठगिनी रूप वनाई ।।
लछमन नाक कान तेहि काटे डांटे रोवति भागि भयाइ ।।४८।।"

अन्त—"संकुल सुरमुनि अस्तुति पुनि पुनि जय जय धुनि मंगल गान ।।
भुवन हर्ष भर गगन कुसुमझर मगन देवगण हने निसान ।।९१।।
रामचरित्र बिशद पवित्र तरबर विचित्र पय निधि अवगाह ।।
महामन्द गति शिवप्रसाद मतिलघु पिपील अति बूंद अथाह ।।९२।।
शिवप्रसाद कायस्थ जाति कुल श्रीवास्तव संकुल अज्ञान ।।
गया निवासी अवगुणराशी दोष न गुण वछवम सवज्ञान ।।९३।।
बाणवेद ग्रह सोम साल तिथि व्योम मयंक काल हिम जान ।।
पूश मास पष कृष्ण तासुलष शुक्र दिवस हरियश परिमान ।।९४।।
बाइश बीश बहुरि बरह औ पांच पुनः नौ सत्रह सात
क्रमस कान्ड प्रति जोरि वानवे तीन सु पञ्चानवे सुहात ।।९५।।
इतिश्री रामचरित्रे संक्षिप्त साहिनी छन्द प्रबन्धे शिवप्रसाद कृत सम्पूर्णम् ।।"

विषय—राम-जीवन से सम्बन्धित कविताएँ । संक्षेप में राम-कथा ।

टिप्पणी : यह ग्रन्थ 'साहिनी' छन्द में लिखा गया है। भाषा सरल और शैली भी प्रसादगुणविशिष्ट है। लिपिकार और ग्रन्थकार दोनों एक ही व्यक्ति हैं। ग्रन्थ की समाप्ति के बाद लिखा है—"बाबू गंगाविसनु कायस्थ श्रीवास्तव गया क्षेत्र निवासी हेतुः लिखित्वा शुभ सम्बत् १९४६ कार्त्तिक शुक्ल पञ्चम्यां भौमवारः शुभमस्तुः सिद्धिरस्तुः" । ग्रन्थ की लिपि स्पष्ट है। शैली पुरानी, पर ग्रन्थ नवीन है। यह पोथी श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में संगृहीत है। पु० क्र० सं० क-९९ है।

७८. सीताराम रसतरंगिणी—ग्रन्थकार—×। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी, पुराना, हाथ का बना, मोटा देशी कागज। पृष्ठ-सं—१७। प्र० पृ० प० लगभग—२४। आकार—५½"×१२"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"श्री सीतारामाभ्यां नमः ॥ नत्वा गुरुं गुणनिधि गुणतः परंच श्री जानकी रघुवरंहि युतः कृपालुं श्री वायुनन्दन मनंतबलप्रतापं सर्वानिनन्यरसिकानति-रामभाजः ॥१॥

अथ प्रातः समयमारम्य सार्द्धकयाम निसापर्य्यंतं श्री रसिकमौलि जानकी रघुनन्दनयोर्नानाविलास शृंगाररसानुभावितं कृत्यं वार्तिकेन कथयामि। प्रथमहि पिछिलीरात्रि घटिका चार रहत तब श्री महाराज कोशलेशजू के द्वार नौवत वजनलगत तिनकौं सुनिकै श्रीकनक भवन के मध्य श्री महाराज किशोरीजू की सपूर्ण दासी अरू सषी जगत हैं फिरि अपनी कुंजन मैं कोई सो समय की रंग सहित रागरागिनी मधुरस्वर सो गावत भई सारंगी मृदंग तमूरा यंत्र इत्यादि बाजे वजाइकै फिरि अपर अपने दंतधावन अंग उबटन फुलेलमर्दन करि फिरि स्नानकरि अंगराग सुगंध अंगअंग लगाइ सोरहो शृंगार अभूषन तिनकौं सजिकै अपने-अपने महलनसों अपने परिकर सहित श्री चारु-शीलाजू के महल आवत भई श्री चारुशीलाजूकों प्रणामकरिकै दिव्यमणिमंय बिशालसभा मंडपमध्य अति नर्म अतिविशाल रेशमी गलीचा बिछे तहाँ बैठाभई मध्यमे श्रीसर्वेस्वरीजू सोभितहैं अरु दिब्यवसनभूषन अति प्रकासवत तिनकों सजिकै नृत्यकारीनृत्य करि रही है"

मध्य की पंक्तियाँ (पृष्ठ-सं०-८)—

"यह प्रकार एक दिन प्रहर दिन आउतभयो फिरि श्री लड़ैतो लालजू श्री सृंगारकुंज को पधारे तहां प्रथम चौक मे अवाईके नगारे वजतभए तिनकों सुनिकों भीतर सो जुगलजुथ्थेश्वरी करकंज पर मंगला दरसथारवरि के सन्मुख आवतभई अर्धया बड़े देत भीतर कों लिवाई जात भई........"

अन्त—"श्री महाराज किशोरी जू सब समाज कों बिदा करि भीतर पधारे तहाँ सषी श्री प्यारी लालजूं को..............मधुर बाजे बजाइके करत भई फिरि सब सषिन कों बिदा दे के श्री बड़ेतीलालजू सबन भवन द्वारे प्रति सकरतभए जहाँ चौसठचौसठि सषिन करिकै जुथ्थए सो लेबतिस जुथ्य सो प्रतिघटिका एक-एक जुथ्थ चौसठ सो सबो सो सोषशतरसंग लिए ततपर हैं। अरुभीतर प्रतीक जाएजाष्ट प्रतिसिद्धसेवा ततपर हैं बाहेरकच्छ प्रतिसब्दर्ण आवरन आवरन प्रतिमहल महलप्रति अपने-अपने समय सेवा तत्पर हैं॥ इतिश्री सीता रसतरंगिन्यां प्रातः कालारभ्य सार्द्धकयानिसापर्य्यंतं श्री सीतारामरहस्यवर्णनो नाम द्वादशस्तरंगः १२ समाप्तः ०० श्री सीताराम ००"

विषय—सीताराम की गद्य में दिनचर्या।

टिप्पणी : यह ग्रन्थ गद्य में लिखा गया है। इसकी गद्यशैली खड़ी बोली के पूर्व के कथावाचकों-जैसी है। इसमें प्रातःकाल से रात्रि में सोने समय तक की सारी दिनचर्य्या बड़े ही रोचक ढंग से १२ तरंगों में लिखी गई है। इसमें पूर्णविराम या अर्धविराम कहीं भी नहीं है। ग्रन्थकार या लिपिकार का नाम, प्रारम्भ या अन्त में नहीं है। किन्तु, 'श्री वड़ेती-लाल' का नाम कई बार आया है। इससे प्रतीत होता है, इस नाम का ग्रन्थ के साथ अधिक सम्बन्ध है। यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं०–१०० है।

७९. सुधारमतरंगिणी—ग्रन्थकार—श्री कान्हूलाल गुरदा। लिपिकार—श्री कान्हूलाल गुरदा। अवस्था—अच्छी। पृष्ठ-सं०—१०६। प्र० पृ० पं० लग-भग—४०। आकार–६" × ८"। भाषा–हिन्दी। लिपि–नागरी। रचनाकाल—माघ-शुक्ल ३ (तृतीया), सं० १९५४ वि० (सन् १८९७ ई०)। लिपिकाल—माघ-कृष्ण २ (द्वितीया), सं० १९७९ वि०।

प्रारम्भ—"॥ दोहा ॥ दरनिदुरित दूषणदलनि, दायिनिबुद्धिवरवाणि ॥
वनजवदनि वनजासता बन्दौ वीणा पाणि ॥१॥

॥ छप्पै ॥

कल्प स्वेतवाराहमाँहि युगप्रथम भयोजब
त्रिपुरतनय गयै नाम असुर महिमाहि भयोतब
तिन्ह कीन्ही तप प्रबल तप्योतेहितेज अमरगण
त्राहित्राहि कहि गयो शरणहरिदुःखित मन
विविधिभांति अस्तव किये भक्ति हिये सम्पुट
करन कान्ह जानिजन रक्षिये दीनवन्धु अशरन शरन ॥२॥

॥ दोहा ॥

तप्यो गयासुर प्रखरतप तेज तासु सुरधाम
तपत देव गण राखिये कृपावारिधर श्याम ॥३॥

॥ शोरठा ॥

सुनिसुर आरत बैन असुरनिकट प्रभुजात मे
बोले करुणऐन मांगुभाव जो तेहि मन ॥४॥
तीर्थन्हि सों सुपवित्र दैत्य कह्यो मैं होंउ प्रभु
सुरगण सुख सुविचित्र दै वर असुरहि देत मे ॥५॥
ह्वै पवित्रजनजूह दर्श करत छन दैत्य तन
चर अरुअचर समूह लहत भए सब परंपद ॥६॥"

अन्त—"रसिकपान्थ रस पान गुण होहिं हिये आनन्द
प्लव सिंवार हिंसक जलज द्वेष अन्वेष हि मन्द ॥६०२॥
कवि कोविदगण सो विनय प्रणय सहित यह मोर
जो कछु चूक सुधारिहैं करिकै कृपा अथोर ॥६०३॥
जो अनादरैं मूरखन्हि तौनाही कछुहान
कृत किरात अवमानते घटैन मणि सन्मान ॥६०४॥
वेद वान ग्रह कलानिधि सम्बत माघसुमास
प्रगटी सुधातरङ्गिणी शिवमुख तिथिसुखरास ॥६०५॥

ग्रन्थसम्बत १९५४ विक्रमीय। श्रीमत्परमपूजनीय ब्रह्म प्रकल्पितद्विज गयापालकुलावतन्सगुरुदोपनामक श्री युक्त कान्हूलाल विरचित सुधातरङ्गिण्यां नवमस्तरङ्गः समाप्तः शुभम् ।"

विषय—रस, नायक, नायिका, रीति, संचारी भाव, प्रहेलिका और मुरज-बन्ध आदि।

टिप्पणी: इस ग्रन्थ के प्रारंभ की दो तरंगों (अध्यायों) में क्रमशः गया-माहात्म्य और कविवंश-वर्णन है। अन्य १० तरंगों में रस, नायक, नायिका, रीति आदि का बड़ा ही भावपूर्ण और कवित्वपूर्ण वर्णन है। इसकी रचना पाण्डित्यपूर्ण, मनोहर शैली में है। ग्रन्थ के अन्त में दिये गये आकारचित्रों में १. कामधेनुचित्र, २. अश्वचित्र, ३. गजचित्र, ४. खड्ग, ५. सबाणधनुषबंध, ६. छत्रबंध, ७. सूर्यचक्रबन्ध, ८. अष्टकोण सर्वतोभद्र, ९. अग्निकुंड बन्ध, १०. चौपड़बन्ध आदि बड़े ही महत्त्व के हैं। ग्रन्थ के अन्त में इन बन्धों में श्लोकों का पुनः परिशिष्ट दे दिया गया है। परिशिष्ट और मूल ग्रन्थ में ६५३ पद हैं।

अन्त में लिखा है—"दोहा छौ सततिर्पन सरसवर छन्दग्रन्थ यह माहि
है बिरचितकविकान्हकोउ करब न घटबढ़ माहि ॥"

इस ग्रन्थ में अग्निपुराण के आधार पर गया-माहात्म्य बड़े ही चमत्कृत रूप में लिखा गया है। शब्द-योजना अच्छी है। ३६वें पृष्ठ पर लिखा है—

"॥ वासक सज्जा ॥

मंजुल महल मणिमंडित बिछाई मेज
मणिन प्रकाश की उजास जहाँ छाई है ॥
चंचल चलांक चारु पुरइन पुष्पनैनी
करन करेजे रेजे कज्जल बसाइ है ॥

उरज उचो ही आछी अँगिया अनोखी कसी
गजरे गुलाब गुल गूथी गर नाई है ॥
कान साजि सुन्दरी शिंगार आज सामहींते
शामहीते मिलिबे को आनन्द समाई है ॥२५०॥
गेहते निकरिचली नीर के बहाने जहाँ
बकुल रसालन की शौरभित शाखी है ॥
धीरे-धीरे बहत समीर शुभ शीरे-शीरे
कूजत कंपोल केकी कलरव पाखी है ॥
फूले-फूले फिरत फबीले भौर फूलन पै
धूसरे परागन मरन्द अभिलाखी है ॥
मालती के मंजुल निकुंज मैं सरोजमुखी
पांखुरी सरोजन की सेजरचि राखी है ॥२५१॥"

कवि ने रचना में, अनुप्रास, उपमा, अर्थान्तरन्यास आदि सभी अलंकारों का समुचित उपयोग किया है। यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में संगृहीत है। पु० क्र० सं०–१०१ है।

८०. **सूर-सागर**—ग्रन्थकार—श्रीसूरदासजी। लिपिकार—श्यामलाल। अवस्था—अच्छी। मोटा, हाथ का बना देशी कागज। पृष्ठ-सं०–८१। प्र० पृ० पं० लगभग–२६। आकार—७"×१२"। भाषा–प्राचीन हिन्दी (व्रज)। लिपि—नागरी। रचनाकाल–×। लिपिकाल—आषाढ़-शुक्ल १० (दशमी), बृहस्पतिवार, सं० १९२४ वि०।

प्रारम्भ०—"श्री गणेशाय नमः॥ श्री भागवत प्रथमस्कंधः सूरकृत हरिपदावली सूरसागरवर्णनं। ॥ रागवेलावल ॥
चरण कमल बन्दो हरिराय ॥
जाकी कृपा पंगुगिरिलंघे अंधे को सवकुछ दरशाय ॥
बहिरा सुनै गूंगा पुनि बोलै रंक चलै शिर छत्र धराय ॥
सूरदास स्वामी करुनामय वार वार वंदो तेहि पाय ॥१॥

॥ केदारो ॥

वंदो चरन शरोज तुम्हारे ॥
स्याम सरूप कमल दल लोचन ललित त्रिभंगी प्राण पियारे ॥
जे पद कमल सदा शिव को धन सिंधु सुधा उरतो नहि टारे ॥
जे पद कमल तातरिस त्रासत मन वच कर्म प्रह्लाद संभारे ॥
जे पदकमल रमन वृन्दावन अहि शिर धरि अगिनित रिपुमारे ॥
जे पद परशि ऋषि पतनी बलि अरुवालि पतित बहुतारे ॥
जे पदकमल परशि जगपावन सुरशरी दरश कटत अघभारे ॥

जे पदकमल पांडव गृह चलिके भए दूत जन काज सवारे ।।
तेई सूरदास जाचत पदपंकज त्रिविधि तापतन हारे ।।२।।"

अन्त—"नारद वचन कथा वर्णनं ।। रागविलावल ।।
हरि हरि हरि हरि सुमिरण करौ ।। हरि चरनारबिंद उर धरौ ।।
हरि भजि जेसें नारद भरयौ ।। नारद वासुदेव सों कह्यौ ।।
सो कथा सुनों चित धार ।। नीच ऊंच हरि के इकसार ।।
गण गंधर्व ब्रह्मा सभा यकारी ।।
कह्यो ब्रह्मा दासी सुत होहि ।। सकुच न करी देखि तैं मोहि ।।
तुरत छाड़िकै गंधर्व देह ।। भयो दासी सुत ब्राह्मण ग्रेह ।।
ब्राह्मण ग्रह हरिजन जहां आइ ।। दासी दासनि सो हित लाइ ।।
दासी सुत सुनि हृदय सो धरै ।। हरिजस हरि चरचा जो करै ।।
सुनत-सुनत उपजै बैराग्य ।। कह्यौ जाइ क्यों माता त्याज्य ।।
ताकी माता खायो कारे ।। सो सरि गई सांप के मारे ।।
दासी सुत वन भीतर जाय ।। करि भक्ति हरि पद चितलाय ।।
ब्रह्मापुत्र तन तजि सो भक्ष्यो ।। नारद मुनि अपने मुख कह्यो ।।
हरि भक्ति करै जो कोई ।। सूर नीचते ऊंच न होई ।।११।।
इति भागवत सूर कृत सप्तमास्कंध सूर सागर सम्पूर्णनं ।।"

विषय—सूर साहित्य । कृष्ण-जन्म से लेकर ब्रजवास-लीला तक का वर्णन । श्रीकृष्ण की महिमा, उनका गोपियों के प्रति प्रेम, गोपियों का विरह और ऊधो के हाथ संदेसा भेजना आदि ।

टिप्पणी : इस ग्रन्थ में सूरसागर के प्रथम, द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ स्कन्ध हैं । बीच के ५ और ६ स्कन्ध नहीं हैं । सातवें स्कन्ध का भी केवल अन्तिम पृष्ठ है । लिपि प्राचीन है । लिखने की शैली भी पुरानी ही है । ग्रन्थ बृहदाकार है । 'सूरसागर' की अन्य हस्तलिखित प्रतियाँ भी उपलब्ध हुई हैं । नागरी-प्रचारिणी की खोज-विवरणिका में दो प्रतियों की चर्चा है । देखिए—खो० वि० (सन् १९२६-२८), पृष्ठ—६९४, ग्रं० सं० ४७१ एम्० और ४७१ एन्० । बिहार-राष्ट्र-भाषा-परिषद् के संग्रहालय में संगृहीत 'सूरसागर' की हस्तलिखित प्रति अबतक की प्राप्त प्रतियों में सबसे प्राचीन है । परिषद् की प्रति का लिपिकाल है-सं० १८२५ वि० । देखिए-'साहित्य', 'वर्ष—४ अंक—१, परिषद् खो० वि०, ग्र० सं०—८१ में । यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है । पु० क्र० सं० क-१०२ है ।

८१. **हितोपदेश**—ग्रन्थकार—श्रीपदुमनदास । लिपिकार—देवचंद । अवस्था—अच्छी, हाथ का बना, प्राचीन, देशी कागज । पृष्ठ-सं०—१३१ । प्र० पृ० पं०

लगभग—३४। आकार—६" × ९½"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—माघ-शुक्ल पंचमी, बुधवार, सं० १७३८ वि०, (सन् १६८१ ई०)। [ग्रन्थ-समाप्तिकाल—पौष-शुक्ल पंचमी, सं० १७६६ वि० (सन् १७०९ ई०)] लिपिकाल—माघ-शुक्ल, दशमी, सोमवार सं० १८७४ वि०।

प्रारम्भ—"श्री गणेशाय नमः ॥ ॥ दोहा ॥

गुरु गिरीस गिरजा गिरा ग्रहनायक गनईश ॥
पदुमन बिस्नु प्रनाम करि जाच्योइहै असीश ॥ १ ॥
होउ सुफल प्रारंभ मम कोउ करै जनि हास ॥
स्रोता भनिता कों सदा मुद मंगल परगास ॥ २ ॥
विप्र बिस्नुशर्म्मा भनित हितेउपदेस विचित्र ॥
सुनत चाव प्रस्तावमय भूपति निति पवित्र ॥ ३ ॥
सुर भाषा पदु हीन तें कही चहै प्रस्ताव ॥
सिंघ दलेल महीप तहि हेतु कियो हिय चाव ॥ ४ ॥
काएथ पदुमनदास कों प्रेम सहित सनुमानि ॥
रचन कहौ सभ दोहरा वचन सुधामय जानि ॥ ५ ॥
तब गुरु द्विज पग बन्दि तिन्ह कविजन कों सिरनाय ॥
कविता पथ दुर्गम तदपि नृप अग्या जनि जाए ॥ ६ ॥
सेवक संकट हू चलै प्रभु अनुसासन पाई ॥
कवि जन सिष आसिष सुअन इन्हहीं पाए सहाइ ॥ ७ ॥"

अन्त—"चक्रवाक कों करि बिदा। विनय गीध तब कीन्ह।
सुभ कीजै अब देसकों सुजस विद्यातैं दीन्ह ॥ ५४५ ॥
वंवदे आयो कूंच को ततिपन चले बहेरि०
राम राम नृप हंस सौं कहिये जों तहिबेरि० ॥ ५४६॥

सोरठा ॥

चित्रवर्न नरनाह० सदल सचिवजुत मुदित चित ॥
गए बिंध गंठमाह० संधि कथा पूरन भई ॥५४७॥
विप्र विस्नु सर्मादयो आसिष राजकुमार ॥
चारि कथा पूरन भई सुभद होउ सभवार ॥५४८॥

वत्थूआ छंद ॥

इति श्री पदुमन दास वरनि परिपूरन कीन्हो ॥
रुद्र सिंघ जुवराज जिओ जिन्ह हित करि लीन्हो ॥
जदपि आपु गुन सिंधु थाह गुनि अन्हत नहि पावा ॥
तदपि दान सनमान दास पदुमनहि बढ़ावा ॥५४९॥

दोहा ॥

भूपति सिंह दलेल के रुद्र सिंघ जुवराज० ॥
जिऔ जलजु जल गंगअउ संभुसिस ससि छाज ॥५५०॥
इति श्री पदुमन दास विरचिते महराज दलेल सिंघ कारिते हितोप-देस संधिनाम चतुर्थो कथा समाप्तः ॥ शुभस्तु ॥ सिधिरस्तु ॥"

विषय—कथा-काव्य। हितोपदेश का पद्यानुवाद। राजा दलेल सिंह का वंश-परिचय और कविवंश का विस्तृत वर्णन।

टिप्पणी : १. संस्कृत भाषा का प्रसिद्ध कथा-ग्रन्थ 'हितोपदेश' का पद्यानुवाद है। संस्कृत के गद्य का भी पद्य में ही अनुवाद है। रचना बड़ी ही सरस, सुन्दर और रोचक है। यद्यपि रचना मौलिक नहीं है, तथापि 'मूल हितोपदेश' को भाषा-निबद्ध करके श्री पदुमन दास ने अपनी प्रतिभा से उसमें और भी जान डाल दी है।

२. कवि ने ग्रन्थ को प्रारम्भ करते हुए—पहले अपने राजा की कीर्त्ति और वंशावलि कही है—

"प्रथम भूप कुल नाम कहि कहौं कथा इतिहास ॥
सुरवन वलित सोहावनी भाषत पदुमन दास ॥८॥
पैरात्र पूर्व निवासतें पैरवार भइष्याति ॥
वेनु वंश विख्यात जग जानै छत्री जाति ॥९॥

छप्पै ॥

बाघदेव भूपाल भूमि भुअवल जिन्ह लीन्हो ॥
किर्ति सिंघ तसु तनय सिंघ विक्रम जिन्ह किन्हो ॥
राम सिंघ तप निष्ठ-कुष्ठ-उछिष्ठ गए दिज ॥
माधव सिंघ महिप भयो तसु नद महाभुज ॥
तसु नन्दन जगत जहाज नृप हेमत सिंघ तसु धर्म धुर ॥
श्री राम सिंघ सुअ तासु पुनि नीति निपुन जसु वचनफुर ॥१०॥

दोहा ॥

कुंअर करे रोव खुव पितु क्रस्न सिंघ मतिमान ॥
प्रेमी सिंघ दलेलकों जिन्ह के सरिसर आन ॥११॥
सरस पितामहतें पिता राम सिंघ रन धीर ॥
तिन्ह के पुत्र पवित्र भुवि सिंघ दलेल गंभीर ॥१२॥
करनी सिंघ दलेल की वरनी जाति न काहु ॥
धरनी तल मे धन्यतम गुन गन सिंधु अगाधु ॥१३॥
तिन्ह श्री पदुमन दासकों दीन्हो बहु बिध दान ॥
साखन और सिहात है निरषि जासु सनु मान ॥१४॥"

३. मूल ग्रन्थ 'हितोपदेश' का पद्यानुवाद निम्नलिखित रूप से किया गया है—

"अथकथारम्भः ॥ सिद्धिदेउसोदेव० सदा साधुके काम में।
गंगफेन लेखेव जासु सीस ससि की कला ॥१८॥
सोरठा ॥
अमरजानि है काय० बिद्या धन चिंतत चतुर०
केस गहें जमराय० धर्म्म करत अनुमानि है ॥२०॥
दोहा ॥
सर्व दर्वतें दर्व अति बिद्या दर्व अनूप।
धनदेनी षरचत अछै अरजत जाते भूप ॥२१॥
बिद्या मिलवै भूपतिहि सरिता सिंधु समान०।
तापर अपनो भागफल भोग करै मतिमान ॥२२॥
बिद्या विनय हि देति है विनय ख्याति अनुकूल।
ख्याति भये घन-धर्म्म सुष तांते विद्यामूल ॥"

४. 'हितोपदेश' के गद्य का पद्यानुवाद—

"भागरथी समीप बसत पट्टन पाटलिपुर।
नृपति सुदर्सन नाम सर्वगुन सरल धर्मधुर।
पुत्र तासु गुनहीन ग्यान बिद्या ग्रन्थ विमुष।
पर पीड़ करत कुपथ सुषित अपने सुष।"

× × ×

"अति उत्तंग तट गंगहु त्यों सिंवारि विशालतन।
दिसि दिसि के निसि आए तहां निवसनिविहंगन॥
काक एक तहां हुत्यो नाम लघुपतनक ताको॥
अंति प्रवीन बुधिवंत कथा है बिस्तर जाको॥"

५. यह ग्रन्थ अमुद्रित है। कवि ने अपना परिचय निम्नलिखित पदों में, संक्षेपतः दिया है—

"दामोदर काएथ करन जिन्ह के धर्म प्रकाश॥
चारि पुत्र तिन्हतें भए जेठे संकर दास ॥१५॥
मध्यम पदुमन गुनगुरू अतथा लाल मनिजान॥
अनुज क्रस्न मनिगुननितें अग्रजइ अभिमान ॥१६॥
सत्नह सै अठतिस जब संवत विक्रम राई॥
सित पांचै मधुबुध दिवस रच्यो गनेश मनाई ॥१७॥"

ग्रंथ की समाप्ति करते हुए कवि ने लिखा है—

"सत्रहसै छियासठिजवै० पूष पंचमी सेत०
पदुमन लिषि पूरन कीओ रुद्रसिंघ के हेत० ॥५५१॥"

इस ग्रन्थ में कुल १३८५ पद हैं। कई अप्रचलित छन्दों का प्रयोग किया गया है।

६. ग्रन्थ की लिपि प्राचीन है। शैली पुरानी होने से लिपि अस्पष्ट है। ग्रन्थ की समाप्ति के बाद लिपिकार ने—

"संवत स्तुतिसागर सहित बसुवसुवासुन जानि०
सुल्कदसमि मधुमास के ससिवासर अनुमानि ॥१॥
तहि दिन लिखि पूरन कियों उकील देवचंदहेत,
चारि कथा उपदेसहित० पढहु समुहि चित चेत ॥२॥"

लिखा है।

यह बृहत्काय पोथी श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क-१०६ है।

८२ हितोपदेश—ग्रन्थकार—पदुमनदास। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी ; पुराना देशी कागज। पृष्ठ-सं०-१५६। प्र० पृ० पं० लगभग-३६। आकार—४½" × ८"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—माघ-शुक्ल पंचमी, बुधवार, सं० १७३८ वि०(सन् १६८१ ई०)। [समाप्ति-काल—पौष-शुक्ल ५ (पंचमी), (सन् १७६६–१७०९ ई०)]। लिपिकाल—पौष-शुक्ल ३ (तृतीया), रविवार, सं० १८८६ वि० (सन् १८२९ ई०)।

प्रारम्भ—"श्री गणेशाय नमः ॥ दोहा ॥

गुरुगिरीस गिरजा गिरा ग्रहनायक गण ईश ॥
पदुमण विस्नु प्रनाम करि जायौ इहै अशीश ॥१॥
होउ सुफल प्रारम्भमम ॥ कोउ करौ जनिहास ॥
श्रोता भनिताको सदा मुद मंगल परगास ॥२॥
विप्र वीस्नु सभभिनित ॥ हित उपदेस विचित्र ॥
सुनत चाव प्रस्तावमय ॥ भूपति नितिपवित्र ॥३॥"

अन्त—"भूपति सिंघ दलेल के रुद्रसिंघ जुवराज ॥
जियो जलजु जल गंग अरु संभुसीस ससि छाज ॥२५१॥
सत्रह सै दयासठिकै पौष पंचमी सेत ॥
पदुमण लिषिपूरण कियो रुद्रसिंह के हेत ॥२५२॥"

विषय—संस्कृत 'हितोपदेश' का पद्यानुवाद। राजा दलेल सिंह का वंश-परिचय और कविवंशवृत्त-कथन।

टिप्पणी: यह ग्रन्थ भी ग्र० सं० ८१ के जैसा है। ग्रन्थकार ने पूर्व ग्रन्थ के समान ही इसमें भी अपना और राजा दलेल सिंह का तथा दोनों के वंश का विस्तृत परिचय दिया है। इसकी लिपि प्राचीन होकर भी कुछ स्पष्ट है। इसमें दन्त्य 'न' के स्थान पर मूर्धन्य

'ण' का प्रयोग किया गया है। लिपिकार ने अपना नाम नहीं दिया है। यह पोथी श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क-१०७ है।

८३. **हरिहरात्मक हरिवंशपुराण**—ग्रन्थकार—श्रीशिवप्रसाद। लिपिकार—श्रीशिवप्रसाद। अवस्था—अच्छी। पृष्ठ-सं०—३। प्र० पृ० पं० लगभग—१२। आकार—४$\frac{1}{3}$" × ८"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—भाद्र-कृष्ण अष्टमी, बुधवार, सं० १९४८ वि० (सन् १८९१ ई०)।

प्रारम्भ—"श्री गणेशायनमः ॥ नमो रुद्राय कृष्णायनमः संहृत-
चारिणेनमः षडर्द्धनेत्रायसद्धिनेत्राय वै नमः ॥१॥
नमः पिंगल नेत्राय पद्म नेत्राय वैनमः ॥
नमः कुमार गुरवे प्रद्युम्न गुरवेनमः ॥२॥
नमो धरणीधराय गंगाधराय वैनमः ॥
नमो मयूरपिच्छाय। नमः केयूरधारिणे ॥३॥
नमः कपालभालाय वनमालाय वैनमः ॥
नमस्त्रिशूलहस्ताय चक्रहस्ताय वैनमः ॥४॥
नमः कनकदंडाय नमस्ते ब्रह्मदंडिने ॥
नमश्चर्मनिरासाय नमस्ते पीतवाससे ॥५॥"

अन्त—"दामोदराय देवाय मुंजमेखलिने नमः ॥
नमस्ते भगवन् विष्णो नमस्ते भगवन् शिव ॥
नमस्ते भवते देव नमस्ते देवपूजित ॥१४॥
नमस्ते कर्मणां कर्म नमोमितपराक्रम ॥
हृषीकेश नमस्तेस्तु स्वर्णकेश नमोस्तुते ॥१५॥
इति श्री महाभारते हरिवंश पर्वान्तर्गत विस्नुपर्वहरिहरा-
त्मक स्तोत्रम् सम्पूर्णम् ॥"

विषय—महाभारत के हरिवंश-पर्व का हरिहरात्मक स्तोत्र।

टिप्पणी : इस ग्रन्थ में महाभारत का हरिहरस्तोत्र है। लिपि स्पष्ट है। ग्रन्थ के अन्त में लिखा है : "श्री बाबू गंगा विस्नुहेतु लिखित्वा शुभमस्तु सिद्धिरस्तु।" यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क-१०९ है।

८४. **विनयपत्रिका (रामतत्त्वबोधिनी-टीका)**—ग्रन्थकार—गो० तुलसीदासजी। टीकाकार—रामदास। लिपिकार—गोपालदास वैष्णव। **अवस्था**—

अच्छी; पुराना, देशी कागज। पृष्ठ-सं०—१८९। प्र० पृ० पं० लगभग—२६। आकार—७½"×१४½"। भाषा—हिन्दी (अवधी)। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। टीकाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"श्री गणाधिपतये नमः ॥ कवित्व ॥

तुलसी प्रसाद हिय हुलसी श्री राम कृपा
सोई भवसागर के पुलसी उर लसी है॥
जाकी कविताई सर्वानर्थ तु उटंगा सभ
गंगा की प्रवाह भक्त जन मन धसी है
परम धरम मारतंड उर व्योम उग्यौ
काम क्रोध लोभ मोहत मनिसि नसी है
वाही के प्रकास जमगण मुह मसिलाई
अति सुखपाइ जिय मेरे उर बसी है॥
है तुलसी को गहि रहौं जौं चाहत विश्राम
बाहर भीतर सहजहीं होत अधिक अभिराम
तुलसी माल धारण कियें बाहर होत सुवेष
तुलसी कृत के गहतहीं अचल भक्ति की रेष
कलि जीवन कल्याण हित भाषा ललित ललाम॥
विये प्रबंध बनाय जेहिं तेहि कों करों प्रणाम

प्रथम श्री मद्रामायन ग्रंथ को संदर्भ सत्संग विलाश नाम किये तहाँ श्री गोस्वामी तुलसीदास जू के अनुग्रहतें उनके किये ग्रंथनि को अर्थ यथामति यथाभाग्य यत् किंचित् बूझि परौ श्री विनयपत्रिका श्री गोस्वामी को अंत ग्रंथ है सर्वसिद्धान्त को निरूपण यह ग्रंथ के विचारेतें प्रतीति होत है तहा यद्यपि ग्रन्थ अत्यन्त कठिन है तथापि श्री गोस्वामी के कृपाकों अवलंब करि यथामति कछु अर्थ लिषे हैं॥

मूल॥ गाइये गणपति जगवंदन॥

टीका॥ गणपति शब्द तें ऐश्वर्य सूचित किए जगबंदन पदकरि जगत्पूज्यत्व जनाये॥

मूल॥ शंकर सुअन भवानी नंदन॥

टीका॥ सुअन औ नन्दन दोनों पद पुत्रवाचक है तहा पुनरुक्ति पद देवे को आसय अैसो है की कोउ को माता श्रेष्ठ होय है कोउ को पिता इहां माता पिता दोउ की श्रेष्ठता जनायवे निमित्त पुनरुक्ति पद

दिये यद्वा शिवजी के पुत्र भवानी के नन्दन नाम आनन्दकर्त्ता यह हेतु तें की श्री गणेश जू को गर्भ तें अविर्भाव नहीं है ॥"

मध्य की पंक्तियाँ (पृष्ठ ६४)—

"पूर्व सिद्धांत के पुष्ट करने कों तीसरो दृष्टांत दोत हैं चेत अैसो संदेह होय कीं एक मनतें अनेक पदार्थ कैसे भये तेह पर कहत हैं कीं जैसें वृक्ष के मध्यमो अनेक फूल ली तथा सूत मो कंचुक नाम वस्त्र विनहीं वनायें नाम वनाये के पहलें भी हैं काहैं वीना मोन होयतो आपौ कहां तैं तैसें नानाप्रकार के शरीर मन के विषैलीन रहत है औसर पाय प्रगट होत है अर्थात् जव जैसो काल तव जौने गुण को उदय तव तैसो इ देव तिर्जगादि शरीर जीवकौं यह मनव नाम देत है ॥"

अन्त—मूल ॥ "बिहंसि राम कह्यौ सत्य है सूधि मैं हूं लही है
मुदित माथ नावत बनीतुल अनाथ की परी रघुनाथ सही है ॥
सभ की सूनि तब स्वामी हंसि करि कह्यौ की यह सत्य है मेह ने सुधि पाई है तहां के हतें सुधि पाई है यह नहीं कह्यौ अरु हंसी बोले याको यह अभिप्राय है की पहीले ते श्री जनकनंदिनी महारानी कों विनय करि गोसाईं प्रशन्न किए हैं समैपाय कबहिं महारानी तेसई कियों है ते हेतु ते नाम नही कहे यह सभ समाचार सभा की अरुस्वामी की प्रसन्नता श्री महाबीर कहि करि गोसाईं तें कहत है की हे तुलसी अनाथ जोतर के रघुनाथ के दरबारमो सही परीनाम गुलामन्ह मो लिख्यौ गयो अब आनद हो करि माथ नावत नाम प्रनाम करत रहु विनय करवे को कछु प्रयोजन नही नाम सब प्रकार तें तेरी बनी यह नीति तें गोसाईं कृतार्थ भए ॥ २७९ ॥ इति विनय पत्रिका ।"

विषय—तुलसीदास के दार्शनिक पद। रामचन्द्रजी और शंकरजी की स्तुति—भजनों में।

टिप्पणी—यह ग्रन्थ श्रीरामदासजी कृत 'रामतत्त्वबोधिनी' टीका के साथ है। इसीलिए ग्रन्थ का आकार-प्रकार बढ़ गया है। टीका की शैली पुरानी है। टीकाकार ने ग्रन्थ के प्रारम्भ में (उपरिलिखित) मंगलाचरण के बाद श्रीरामचरितमानस की भी टीका की सूचना दी है। ग्रन्थ के अन्त में टीकाकार ने—

"चौपाइ ॥

प्रथम कियो सतसंग विलास श्री रामायण करत प्रकास।
दूसर भजन रसार्णाव अमृत भजन तरंगन्ह करि सो आवृत

भंगवत वतरस संपुटती सर है जामे रस को उठत लहर है
अद्भुतरस तरङ्ग है नाम चौथ सो सब सिद्धांत ललाम
इतिहास लहरि पञ्चम सोभयो कहत सुनत जेहि निति सुख नयो
भागवत तत्व भासकर षट जो अज्ञान तिमिर नासत उ पुट जो
सप्तम विनय पत्रिका टीका राम तत्व बोधिनी सुनीका ।।"

इन पद्यों में ग्रन्थकार ने अपने ग्रन्थों के सम्बन्ध में संकेत किया है। इस टीका के अतिरिक्त इन्होंने और सात ग्रन्थ बनाये हैं। यह ग्रन्थ नागरी-प्रचारिणी सभा के खोज-विवरण में भी है। देखिए—ग्रन्थ-संख्या—६२, ६३, ६४ और ६५ की टिप्पणी।

लिपि प्राचीन और अस्पष्ट है। ग्रन्थ के प्रारम्भ या अन्त में टीकाकार या लिपिकार ने समय, तिथि आदि का निर्देश नहीं किया है। लिपिकार ने अन्त में "दषखत गोपालदास वैस्नव मोकाम साडासी रनेतन को।" लिखा है, जिसमें स्थान का नाम अस्पष्ट है। यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क-११९ है।

८५. **वैराग्यप्रकरण**—ग्रन्थकार—×। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी। पृष्ठ-सं०—१९६। प्र० पृ० पं० लगभग—४१। आकार—४" × ८"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—पौष-कृष्ण २ (द्वितीया), बुधवार, सं० १९१९ (सन् १८६२ ई०)।

प्रारम्भ—"श्री गणेशायनमः ।। श्री गुरुभ्योनमः ।। अथ वैराग्य प्रकर्ण प्रारम्भ
सतचित आनन्दरूप जो आतमा हे ।। तिसको नमस्कार हे ।।
केस हि सत चित आनन्द रूप सो आत्मा कहत हे ।।
जिसले इस सर्व भासत हे ।। अरुजीस विषे इह सर्वलीन होता है ।।
अरु जिस विषे सर्व इस्थित होते है ।।
तिस सत्य आतमा को निमस्कार है ।। ज्ञाताज्ञानज्ञेय ।।
द्रिष्टा दर्शन द्रिष्ट ।। कर्ताकरण क्रिया ।।
जिस करी सिधी होते है ।। एसा जो ग्यान रूप आतमा है ।।
तिसको नमस्कार है ।। जिस आनन्द के कर ।।
करि सम्पूर्ण विश्व आनन्दवान हे ।। अरु जिस आनन्द करि सर्व ।।
जीवते हे ।। तिस आनन्द आतमा को नीमस्कार हे ।।"

मध्य की पंक्तियाँ (पृष्ठ ८३)—

"जैसे पंषी चोग को सुखरूप जाणी करी चुगणे आवत हे ।।
जब चुगणे लागरते हे ।। तब जाल विषे बाधे जाते हे ।।
तिस बन्धन करी दिन जेसे हो जाते हे ।।
तेसे यह पुरुष विषय भुके भोगणे की इच्छा करते हे ।।

अरु तस्ना रूपी जाल साथ बंधे जाते हे ।।
तिसकरी महादीनता को प्रप्ति भअ होते हे ।।
ताते हे मुनीस्वर मुझको साई उपाय कहो ।।
जिस करि अहंकार को नास होवे ।। जब अहंकार का नास होवेगा ।।
तब मे परम सुषी होवोगा ।। जेसे विध्याचल परवत केहे ।।"

अन्त—"अरु दीपकवत प्रकावान हे ।। अरुबोध का परम पात्र हे ।।
कहणे मात्र सीध्र इसकों ग्यान होवेगा ।।
अरु हम जो सभही बैठे हे ।। जो हमारे बिदमान इसकों ग्यान होवे
तउ जाणी जउ हंम सभही मूरष बैठे हे ।।२८।।
इति श्री बैराग प्रकृसपूर्ण ।। श्री रामचंद्राय नमो नमः ।।"

विषय—दर्शन । २८ सर्गों में, विश्वामित्र, वसिष्ठ, भारद्वाज, वाल्मीकि आदि ऋषियों और रामचन्द्र के बीच वार्त्तालाप । साथ ही, विलास, मान, अभिमान, मोक्ष, आत्मा आदि पर गद्य में दार्शनिक विवेचन ।

टिप्पणी : १–इस ग्रन्थ में राजा शार्दूल आदि के नाम का भी उल्लेख हुआ है । सम्भवतः इस पुस्तक की रचना किसी पौराणिक कथा के आधार पर हुई है । ग्रन्थ विवेच्य है । भाषा खड़ी बोली के विकास के पूर्व की है । 'बोलते भये' आदि वाक्यों का प्रयोग हुआ है । भाषा पर कथा-शैली का प्रभाव है ।

२—ग्रन्थ की लिपि पुरानी है और लिखने की शैली भी प्राचीन होने के कारण अस्पष्ट है । ग्रन्थ के प्रारम्भ या अन्त में लिपिकार ने अपना या ग्रन्थकार का नाम नहीं दिया है । इस ग्रन्थ का मूल नाम भी सन्दिग्ध प्रतीत होता है । ज्ञात होता है, किसी बृहत्काय ग्रन्थ का यह 'वैराग्य-प्रकरण' नाम का एक प्रकरण है । ग्रन्थ के प्रारम्भ के पृष्ठ के हाशिये में लिखा है—'वैराग्य मुमोक्ष', इससे प्रकट होता है, ग्रन्थ का कोई और नाम सम्भव है । ग्रन्थ अनुसन्धेय है । अन्त में लिपिकार ने लिखा है—

"संब्रत् १९१९ पोसवदी २ बुधवासरे लिखितं दवे परसोतं मत्मज मुरारेवासी श्री राजकोट मध्ये ।। समाप्त । संपूर्ण ।।"
ज्ञात होता है, लिपिकार का शुद्ध नाम 'पुरुषोत्तमदेव' है, जो 'मुरारि' के पुत्र हैं । किसी स्थान का नाम 'मुरार' है, जहाँ के वे निवासी हैं । राजकोट में या तो ग्रन्थ लिखा गया है, या किसी राजदुर्ग में ।

यह पोथी श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में संगृहीत है। पु० क्र० सं०—१२० है।

८६. मणिमय दोहा (दोहावली)—ग्रन्थकार—तुलसीदास। लिपिकार—भगवान मिश्र। अवस्था—अच्छी; पुराना, हाथ का बना मोटा कागज। पृष्ठ-सं०—३४। प्र० पृ० पं० लगभग—२१। आकार—५½" × ११"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—आश्विन-कृष्ण ७ (सप्तमी), गुरुवार, सं० १८१९, वि० (१७६२ ई०)।

प्रारम्भ—"श्री गणेशायनमः मनिमे दोहा लिष्यते ॥

दोहा ॥

रामनाम मनि दिप चरु ॥ जिह देहऋ छाइ ॥
तूलसी बाहर भितर ॥ जो चाहसि उजियार ॥
रामनाम के अंक निधि ॥ साधणता सब सुण ॥
अंक रहित सब सुण है अंक सहित दस गुण ॥
रहुं गुनो तिगुनो चौगुनो ॥ पांच षष्ठ अरु सात ॥
आगे ते पुनि नोगूनो ॥ नव के नव रहि जात ॥३॥
णव के नव रहि जात हे तुलसि किवो विचार ॥
रमो रमइआ जगत्र में ॥ नहि अद्यैत विस्तार ॥४॥
जथा भुमि सब बिज यह ॥ राषत निवास अकास ॥
राम नाम सब धर्ममय जानत तुलसिदास ॥५॥"

मध्य की पंक्तियाँ (पृष्ठ १७)—

"जब लगी अंकुस सीस पर ॥
तब लगी निर्मल देह ॥
तुलसी अंकूस वाहरे ॥
सिर पर डारत षेर ॥२६५॥
तुलसी स्वारथ सामुरे ॥
परमारथ विन नेह ॥
अंध कहे दुष पाइहे......।"

अन्त—"तुलसी सम्पत्ति के सषा ॥ परत विपत्ति मे चीन्ह ॥
सज्जण कंचण कसको ॥ विपत्तिक सौधे कीन्ह ॥५६३॥
रोगणसौ तण जडीत जण ॥ तुलसी संग कू लोग ॥
राम कृपा निधि पाली है ॥ सब बिधि पालन जोग ॥५६४॥
जीवण अपने मनतेत जी ॥ यह मन बड़ी बलाऐ ॥
तुलसी रघुवर जण सुषद ॥ भ्रमते निकट ण जाऐ ॥५६५॥

प्राकृत पनके भिणही ॥ मन सात रंग वीलाऐ ॥
तुलसी चीत जल थीर भऐ ॥ राम आतम दरसाऐ ॥५६६॥
इति श्री मनिमै दोहा समापतः संपूर्नः"

विषय—दर्शन। ५६६ पदों में हरि-भक्ति, माया, मोक्ष, सज्जन-दुर्जन आत्मा और परलोक का संक्षिप्त विवेचन।

टिप्पणी : ग्रन्थ की लिपि प्राचीन और अस्पष्ट है। इसमें दन्त्य 'न' के स्थान पर सर्वत्र मूर्धन्य 'ण' का ही प्रयोग है। यह पोथी श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में संगृहीत है। पु० क्र० सं० १२१ है।

८७. **गीतावली (लंकाकाण्ड)**—ग्रन्थकार—गो० तुलसीदास। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी; मोटा कागज, खण्डित। पृष्ठ-सं०—१२। प्र० पृ० पं० लगभग—१६। आकार—४½"×१०"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"जीवत जैसे प्रेत भजन बिनु ॥
घर घर डोलत मंद लिन मति वोद्र भरनक हेतु
मुप कटुवचन वो परनिदा व संतन दुष देत
कवहु के पाये पाप कै पैसा गाडी धुरमे देत
श्री भागवत सुने नही सरवन धाव देव
नेक प्रीत न किवो वोह गीरधर लाल सो भवन लिलको षेत
गौ ब्राह्मन को सुक्रतनहि जान्यो किवो न हरिसो हेतु
सुरदास भगवंत भजन विनु कुडे कुटुम्ब समेत ॥

रागमारू ॥

मानु अजहु सीष परि हरि क्रोधु ॥
पीय पुरो पायो कहु काहु करि रघुवीर वीरोधु ॥
जेई ताडका सुबाहु मोरि मष राषि जनायो आपु ॥
कौतुकहीं मारिच नीच मिश प्रगटे लवि सिष प्रतापु ॥"

अन्त—"रागहोडी ॥

आजु अवध आनंदबधावन रिपुरन जीति राम आए ॥
सजि सुविमानिनि सान बजावत मुदीत देव देषन धाए ॥
घर वर चारु चौक चंदन मनि मंगल कलस सब भी साजे ॥
ध्वज पताक तोरन वितान विविध भांति बाजन बाजै ॥
राम तिलक सुनी दीप दीप के नृप आए उपहार लिए ॥
सीय सहित आसिन सींघासन निरषि जोहारत हरषि हिए ॥
मंगल गान वेद धुनि मुनि असीस धुनिभुअन भरे ॥
बरषि सुमन सुर सीध्रप्रसंसत सब के सब संताप हरे ॥

रामराज भई काम धेनु मही सुष संप्रदा लोक छाए ॥
जन्म जन्म जानकी नाथ के गुन गन तुलसीदास गाए ॥२३॥

इति श्री राम गीतावलि लंका कांड समप्तं ॥ राम ॥ राम ॥ राम ॥ राम ॥"

विषय—राम-जीवन-सम्वन्धी काव्य। विविध रागों में राम-कथा-वर्णन।

टिप्पणी : यह ग्रन्थ अपूर्ण है। केवल लंका कांड ही है। अतएव, लिपिकार के नाम का पता नहीं चलता है। नागरी-प्रचारिणी सभा के खोज-विवरण में अन्य स्थानों पर भी इस ग्रन्थ के उपलब्ध होने की चर्चा है—

१. सं० १८०२ (खो० वि० १९०४, सं० ६०),
२. सं० १८९७ (खो० वि० १९०९–११, सं० ३२३ जी०),
३. (खो० वि० १९१७–१९, सं० १९६ सी०),
४. सं० १८२४ (खो० वि० १९२०–२२, सं० १९८ एच्०),
५. (खो० वि० १९२३–२५, सं० ४३२),
६. (खो० वि० १९२६–२८, सं० ४८२ आर० एस्०)।

यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क-१२२ है।

८८. **नाममाला**—ग्रन्थकार—श्री नन्ददासजी। लिपिकार—✕। अवस्था—अच्छी; मोटा, हाथ का बना कागज। पृष्ठ-सं०—१७। प्र० पृ० पं० लगभग—२८। आकार—५" × ६½"। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लेख-समय—×।

प्रारम्भ—"श्री गणेशायनमः ॥ अथनाममाला लिख्यते ॥
जो प्रभु जोति मये जगत भये ॥ कारण कना अभव ॥
अशुभ हरन शम शुभ करन ॥ नमो नमो तेहि देव ॥
येक वस्तु अनेक है ॥ जगमगात जगधाम ॥
जिमि कंचनते कींकिनि ॥ कंकन कुंडल नाम ॥
तं नमामिपदपरमगुरु। दरसन कमल दल नयण ॥
जग कारण करुनार्नव ॥ गोकुल जाको अपन ॥
उचरिशकतिनहिं शंसकृत ॥ जानोति चाहत नाम ॥
ताहिनन्द शुमति ॥ जथारचत नाम को धाम ॥
नाम रूप गुण भेद करि ॥ प्रगटि तश बहि ठौर ॥
तब बिनुतंतुण और किछु ॥ कहत सो अति वडवौर ॥
गूंथहि नानानामको ॥ अमर कोष के भाय ॥
माणवति के माण पर ॥ मिलै अर्थ शव आय ॥
मान नाम ॥ अहंकार मददर्प्पपुनि ॥ गर्वशभयु अभिमाण ॥
मान राधिका कुमारि कौ ॥ शवकों कर कल्याण ॥"

मध्य (पृष्ठ ८)—

"सूर्य्य नाम ॥ सूर्य्य दीवाकर भानुकण ॥
दीनकर भाशकर अंश ॥ भीहीर प्रभाकर तीमीरहर ॥
वीवश्वान तीगमांशु ॥ व्रधन वीरोचन वीभावशु ॥
मारतंडत्नय अंग ॥ पुषन हरी दीन मनी तरनी ॥
शवीता शुर पतंग ॥ रवीमंडल मंडन जनका वरनत मुनिजन जाहि ॥
शो यह नंदन नंद को क्यों वलीक परि आही ॥१४६॥

अन्त—"कोकिल नाम ॥ परभ्रीत कलरव रक्तद्रिंग ॥
पिकधुनी जहं रशपुंज ॥ जनूपिय आरतिनिरषितव ॥
तुरित चलि चली कुंज ॥ इंद्री नाम ॥ अपूर्ण ।"

विषय—शव्दकोश । २७१ शब्दों के पर्य्याय हैं । ग्रन्थ खण्डित है ।

टिप्पणी : इसमें दोहे के एक चरण में शब्द के नाम कहे गये हैं और दूसरे चरण में ग्रन्थकार ने कुछ साहित्यिक रचना की है; जैसे—
"मीथ्या नास ॥ मीथ्या मोध म्रीषा अन्नीत ॥ व्यार्थ अलीक नीरर्थ ॥
अैशे पीयशो झूठ अती ॥ चली का वोली अव्यर्थ ॥"

८९. **दृष्टान्ततरंग**—ग्रन्थकार—श्रीदीनदयाल गिरि। लिपिकार—× । **अवस्था**—अच्छी। पृष्ठ-सं०—१०। प्र० पृ० पं० लगभग—४४। **आकार**—८"×१२½"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। **रचनाकाल**—आश्विन-शुक्ल १ (प्रतिपदा), मंगलवार, सं० १८३९, वि०[1] (सन् १७८२ ई०), लिपिकाल—× ।

प्रारम्भ—"श्री गणेशायनमः ॥ दोहा ॥
बैया नैया जहंतहां बिरत अति आनंद ॥
मुष पुनीत नवनीत जुत नौमि सुबदनंदनंद ॥१॥
हरि के सुमिरे दुषसवै लघुदीरघ अघजाहिं ॥
जैसे के हरि भूरिभय करिमगदूरिन साहिं ॥२॥
नीच बडन के संगते पदवी लहत अतोल ॥
परे सीप में जलद जल मुकुता होत अतोल ॥३॥
अमल मलीन प्रसंगते अधम मैहीं फल होत ॥
स्वाति अमृत अहि मुष परे बनि बिस होत उदोत ॥४॥
साधुन को षल संग में आदर अंग नसाय ॥
तपित लोह संदोह मैं जिमि जल हूँ जलि जाय ॥५॥"

---

१. श्रीवेदप्रकाश गर्ग के मतानुसार इस ग्रन्थ का रचनाकाल सं० १८७९ वि० है। दे०—'व्रजभारती'—सं० २०१४ के भाद्रपद का अंक, पृ० सं० ७२ ।

मध्य—"क्रोध हुं मैं अप्रिय वचन कहैं नवुध गुन अैन।।
व्है प्रसन्न मन नीच जन भाषत हैं कटुवैन ।।९५।।
नहीं रूपक कुछ रूप है विद्यारूप निधान ।।
अधिक पूजियत रूपते विनारूप विद्वान् ।।९६।।
करैं सुजन सतकार पर परे गथा के वंध ।।
दहत देत सवको अगर अपनो सहज सुगंध ।।९७।।
छीर होत छिन पायकै पयते विषव्है जाय ।।
यह विधि धेनु भुजंग रद पात्र कुपात्र लषाय ।।९८।।"

अन्त—'हिएसमिरि गोविन्द को नासहोंहि सब सोग ।।
जथा रसायनतें नसै सनै सनेही रोग ।।२००।।
सवै काम सुधरैं जवै करैं कृपा श्री राम ।।
जैसे कृषी किसान की उपजावै घनस्याम ।।१।।
जैसे जल लै वागकों सींचत मालाकार ।।
तैसेनिज जनकों सदा पालत नंदकुमार ।।२।।
यह दृष्टांत तरंगिनी गिनी गुनी सुषदानि ।।
बिरची दीन दयाल गिरि सुमिरि सुपंकज पानी ।।३।।
उठेउ मंगतरंग सों दोहा दो सत दोय ।।
या मैं जे सज्जन करैं बिमल होय मतिधोय ।।४।।
पान किए जल अरथ के मेटै जडता ताप ।।
ज्यों जदनंदन जापतें होय पलायन पाप ।।५।।
निधिमुनि बसुससिसाल मैं आसुन भास प्रकास ।।
प्रतिपद मंगल दिवसकों कीन्यो ग्रंथ विकास ।।६।।

इति श्री दृष्टान्ततरंगिनी समाप्ता ।।"

विषय—दृष्टान्त-सम्बन्धी काव्य। २०२ दोहों की रचना।

टिप्पणी : इस ग्रन्थ में, दोहों में बड़े ही अच्छे दृष्टान्त और सुभाषित कहे गये हैं। लिपिकार का नाम नहीं है। यह पोथी श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क-१२७ है'।

९०. **प्रिया प्रीतम रहस्य पद**—ग्रन्थकार श्रीस्वामी रामवल्लभ शरण। लिपिकार—×।
अवस्था—अच्छी; मोटा, देशी कागज। पृष्ठ-सं०—१९।
प्र० पृ० पं० लगभग—३२। आकार—७" × १०½"।
भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×।
लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"॥ श्री ॥
श्री प्रीतम प्राण प्रियायै नमः ॥ श्री प्रिया प्राण प्रियायै नमः ॥
श्री सीतारामाभ्यां नमः ॥ श्री चन्द्र कलायै नमः ॥
श्री युगल प्रियायै नमः ॥ श्री हेम लतायै नमः ॥
श्री प्रीति लतायै नमः ॥ श्री युगल बिहारिणयैन नमः ॥
अथ प्रिया प्रीतम रहस्य सुख पदावली श्री ॥
१०८ स्वामी रामबल्लभ शरण कृत ॥०॥

पद ॥१॥

किसोरी जूके अनुपम रस मम वैन।
मुधा सुधा कर सुक पिक हूं नहिं कोकिल हूं समहैन ॥१॥
मन्द हंस निरदल सन अधर छवि फंसानि पिया प्रदचैन।
अंग २ छवि फवि कवि दवि मति शारद वरनि सकैन ॥२॥
करत बिहार अपार प्रिया संग कनक भवन सुख दैन।
युगल विहारिनि भरि उमंग सखि सेवती हैं दिन रैन ॥३॥"

मध्य की पंक्तियाँ (पृष्ठ १०)—

"सत्य सत्य यह सत्य कहत हौं जेहि प्रिया दृष्टि परी।
सोइ भव तरिहि सुयुगल विहारि निमि गुरु सुफल फरी ॥४॥
चुटकी वजावें विहंसि प्रिय बोलो।
नेह नजर भरि हेरि लाड़िली चित जड़ ग्रंथी खोले ॥१॥
हौ चेरी तेरी तू मेरी प्रति पालिनि हिय तौले।
हेरी तजि भजि युगल विहारिनि निद्रवहु विरह ऋषि कौले ॥२॥"

अन्त—"सुनयना भाई भाग बाग फूला।
अनुपम फूल लाड़िली सिय जू छवि फवि कवि सुख मूला।
जाहि लखि श्याम भँवर मूला।
जाको अन्त वेद नहिं पावत सोई वना दूला।
सुखद सब बिधि हर त्रय सूला।
रमा रमन आदिक कवि गति सुमति तुला तूला॥
युगल विहारिनि युगल परमहित नायक अंनुकूला।
पाप जड़ कर्म्म जाल खूला॥
० श्री सीतारामाभ्यां नमः ०"

विषय—राम-सम्बन्धी शृंगार-काव्य। राम और सीता के मिलन और परस्पर वार्त्तालाप के वर्णन द्वारा भजन और गेय पद।

टिप्पणी : लिपिकार ने अपना नाम पोथी के प्रारम्भ या अन्त में नहीं दिया

है। लिपि स्पष्ट और सुन्दर है। यह पोथी श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क-१२८ है।

९१. अन्योक्तिमाला--ग्रन्थकार—श्रीदयाल गिरि। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी। पृष्ठ-सं०—१४। प्र० पृ० पं० लगभग—१४४। आकार—७″×१०″। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"श्री गणेशाय नमः॥ अथ अन्योक्ति माला॥

छंद कुंडलिया॥

वंदो मंगल मय विमल ब्रज सेवक सुष दैंन
जो करि व मुष मूकहीं गिरा नचाव सुषैंन॥
गिरा नचाव सुषैंन सिद्धि दायक सब लायक॥
पसुपति प्रियहिय बोध करन निरजन गन नायक॥
वरनै दीन दयाल दरसि पद द्वंद अनंदौ॥
लंबोदर मुदकंद देव दामोदर बंदौं॥१॥
तारे तुम बहु पथिनकों यह मंदधार अपार॥
पार करौ यहि दीन कौं पावन षेवनिहार॥
पावन षेवनि हार तजो जनि कूर कुवरनैं॥
वरनैं नहीं सुजान प्रेम लषि लेहु सुवरनैं॥
वरनैं दीनदयाल नाव गुननाथ तिहारे॥
हारे कों सब भाँति सुवनि है पार उतारे॥३॥"

अन्त—"अथ चित्रको

बग है मूलत लषि इन्हें अहे चितेरे चेत
एतो अपने अैंन में रचे आपने हेत॥
रचे आपने हेत चराचर चित हितूनैं॥
डरै भ्रमै मति मीत तोहि बिनए सब सूनैं॥
बरनैं दीनदयाल चरित अति अचरज या है॥
रंग्यो आपने रंग तिन्हैं लषि मूल तक्यो है॥११०॥
यह कल्पद्रुम सुमन मय माला सुषद सुवेस॥
विलसै दीनदयाल गिरि सुमन सहिये हमेस॥१११॥
इति श्री अन्योक्ति माला समाप्ता॥ शुभमस्तु॥"

विषय—अन्योक्तियाँ। चित्र, फूल, वृक्ष, सूर्य, चन्द्र, वायु, पर्वत, नदी तथा अन्य प्राकृतिक वस्तुओं और विशेष पुरुषों के माध्यम से अनेकविध दार्शनिक तथा लौकिक विचारों का प्रतिपादन।

टिप्पणी : यह ग्रन्थ श्री दीनदयाल गिरि का है। यद्यपि प्रारम्भ या अन्त में नाम नहीं है, तथापि प्रत्येक पद्य में अन्त में नाम है। लिपि-

कार ने अपना नाम, प्रारम्भ या अन्त में नहीं लिखा है। लिपि प्राचीन और अस्पष्ट है। यह पोथी श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में संगृहीत है। पु० क्र० सं० १२९ है।

९२. **रामसगुनमाला (टीका-सहित)**—ग्रन्थकार—गो० तुलसीदास। लिपिकार—बिहारी-लाल। अवस्था—अच्छी; हाथ का बना देशी कागज। पृष्ठ-सं०—१७१। प्र० पृ० पं० लगभग—४४। आकार—७″×११″। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—कार्त्तिक-कृष्ण २ (द्वितीया), सं० १९११, (सन् १८५४ ई०, १२३२ साल)।

प्रारम्भ—"ओं अथ श्री राम अज्ञासगुन माला लीष्यते ॥
अथ नेवता देने की विधि लिष्यत ॥
प्रथम एक सुपारी लेके साझ को ॥
जीनका दीन होऐ तिनको नेवता देना ॥
सो दीन रात मुनी का भेद सो ॥
सात मुनी सात दिन सात रात ॥ **मुनीराम** ॥
सीता भरत लक्षमन सत्तुहन ॥
सीव हनुमान ॥ दीन ॥ रवीससी भौमबुधगुरु ॥
भृगु सनीवार ॥..............................।"
(नेवताविधि लिखने के बाद पृष्ठ ४ से)

"मूल ॥ दोहा ॥
वानि बिनायक अंब हर रवीगुर रखा रमेश—।
शूमीरी करहु सब काज सुन मंगल देस वीदेस ॥

टीका—वानी जो शोश्वती जी विनायक श्री गणेश जी अब जो पारवती जी हर जो महादेव जी रवी श्रि स्वुज गुर अपने रमा रमेशर जी सीता राम जी इनके शुमीरन किऐ देस परदेश सवत्र मंगल है ॥ यह अरथ सगुन विद्या पढ़ने को तथा व्यापार करने तथा चाकरी करने को तथा परदेशी० ॥"

अन्त—"सगुन जो है वीस्वास करके सब सगुन का दोहा सो वीचीत्र सुन्दर मनी ताको परोय के मनोहर हार बनाय के राम जी के दासते है सो हृदय मे पहीर के उज्जल वीचार सो देषे है सो तुलसीदास जी कहत है की सब दोहा है मनी का हार है सो जो राम दास पहीर ते है पहीरना कहै की धारन करना राम जी की आज्ञा को......मन ही करते है सो नेवतादे हे हमेसा पूजाकर के सगुन देष के राम आज्ञा होय तो करे न राम आज्ञा पावे तो न

करै यैसो जो रामदास है तीन के हृदय यो तीन सौ तेतालीस दोहा है मनी फीरत रहत है से सब सगुन प्रसीध रहती है सो सगुन बस सोभा देत है कहै सत्य होत है प्रकासीत होत है ॥ इती श्री राम आज्ञा कृत गोसाइ तुलसीदास की राम अज्ञा का टीका का सत्ताएस सर्ग के सत्तायस सतक का सात ससतत्तर दोहा है सोमापत ॥७७७॥ सूभमस्तु सीद्धरस्तु ॥"

विषय—राम-सम्बन्धी काव्य। सगुण-असगुण का विचार ॥

टिप्पणी : १. इस ग्रन्थ की लिपि अत्यन्त प्राचीन और अस्पष्ट है। सभी शब्द संश्लिष्ट हैं।

२. इस ग्रन्थ में सर्वत्र राम को आधार मानकर लोक-प्रचलित, रामाज्ञा, और तंत्र-सम्बन्धी बातें हैं। दोहे की माला बनाकर किस प्रकार जपनी चाहिए, विदेश के लिए कौन-सा दोहा उपयुक्त है? आदि विषय इसमें ग्रथित हैं। ग्रन्थ में मनोरंजक बातें भी हैं। इसके टीकाकार की गद्यशैली भी काशी के आसपास की भोजपुरी-मिश्रित भाषा है। नागरी-प्रचारिणी सभा के खोज-विवरण में भी यह ग्रन्थ उपलब्ध हुआ है। देखिए—खोज-विवरणिका (सन् १९२६–२८), पाठ ७३६, ग्रन्थ-सं० ४८४ क्यू। यह ग्रन्थ लिपि की दृष्टि से उससे प्राचीन है। खोज-विवरण की प्रति का लिपि-काल है—सं० १९१६ वि० = १८५९ ई० और इसका है—सं० १९११ वि० = १८५४ ई०। किन्तु, नागरी-प्रचारिणी सभा के अन्य खोज-विवरणों में उपलब्ध प्रति का लिपिकाल देखिए—लि० का० सं० १७६५ वि० (खो० वि० १९०३, सं० ८७९८; खो० वि० १९०६—८, सं० २४५ डी०), लि० का० १८२४ (खो० वि० १९०९—११, सं० २३२ एच्०) (खो० वि० १९२३—२५, सं० ४३२)। सबसे प्राचीन प्रति सं० १७६५ की है।

३. ग्रन्थ में टीकाकार का नाम स्पष्ट नहीं है। कई स्थानों पर 'रामदास' नाम कई प्रकारों से आया है। यह नाम टीका में ही है। मूल ग्रन्थ में नहीं, इससे प्रतीत होता है, टीकाकार का ही यह नाम है।

४. लिपिकार श्रीबिहारीलाल जी ने अपना परिचय देते हुए ग्रन्थ के अन्त में लिखा है—

"शींध कृस्न पुस्क लीषा बीहारीलाल सा० झौआ प्रगने बिहिया जिले शाहाबाद कसबे आरे सूवे बिहार हाल मोकाम दहिआवा

प्रगने माझी जिला सारन ।।" यह पोथी श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क-१३० है।

९३. अनुरागबाग—ग्रन्थकार—श्रीदीनदयाल गिरि। लिपिकार—श्रीसंजीवन लाल। अवस्था—अच्छी; हाथ का बना कागज। पृष्ठ-सं०—४८। प्र० पृ० पं० लगभग—४६। आकार—७½"×१२"। भाषा–हिन्दी। लिपि—नागरी। रचना-काल—फाल्गुन-शुक्ल ९ (नवमी), भौमवार, सं० १८८८ वि० (सन् १८३१ ई०)। लिपिकाल—पौष-शुक्ल ४ (चतुर्थी), सं० १९०९ वि० (सन् १८५२ ई०)।

प्रारम्भ—"श्री गणेशाय नमः ।। अथ अनुराग वाग लिख्यते ।। दोहा ।।
श्री पसुपति प्रिय पद पदुम प्रन औं परम पुनीत ।।
मंगल रूप अनूप छबि कविवर दानि सुगीत ।।१।।

कवित ।। विनसैं विघन वृंद द्वंद पदवंद तही मानि अरबिंद जे मिलिंद परसत हैं ।।
ध्यावत जोगींद गुन गावत कवींद जासु पावत पराग अनुराग सरसत हैं ।।
भागैं दुरभाग अंगराग देषि दीनद्याल पूरन प्रताप पापपुंज धरसत हैं ।।
ज्यों-ज्यों ही पिनाकी तनै वक्रतुंड टांकी परै त्यों-त्यों कवि तके झुंड
वाके दरसत हैं ।।२।।"

मध्य की पंक्तियाँ (पृष्ठ २४)—

"एक समै लिए गोहन ग्वालन मोहन चोरिकै पात दही ।।
ऊधवजू छल सों हरये हरि की जसुदा दो उवांह गही ।।
ऊषल बांधि दयो उर काछिन आंषिन ते जल धार वही ।।
सोतक सीर भई हमतें सुन जों उत यादि करै तो सही ।।२७।।
अवधेस नरेस की प्रीति सही प्रिय के विनुप्रान पयान कियो है ।।
संग फूटत फूट से फूटो नहीं मम पाहन कूंते कठोर हियो है ।।
हमतें वरु मीन प्रवीन वडो जलतें पल एक नहीं न जियो है ।।
अव ऊधो हहा वलवीर विछोहत क्यौं विधि नामोहि धीर दियो है ।।२८।।"

अन्त—"पालिये गुपाल प्रभु मेरे प्रतिपाल।
कहो तिहूं लोक तिहूं काल दास प्रीति पाली जू ।।
होयगी बड़ाई सरनागत के पालन मैं।
नातो हंसैंगे नर दै दै कर ताली जू ।।
मोहनी मनोज की सरोज मंजु ओज।
भई कव धौं लषै हो वह मूरति विसाली जू ।।
कृपा कुंभ लैकै कृस हृदैवाग दीनद्याल।
पालिये दसन दीस ये होवन माली जू ।।३४।।

विनय षट पदावलि सुषद यह निति होय प्रकास ॥
करो सुदीन दयाल गिरि वदन वरज मैं वास ॥३५॥
यह अनुराग सुवाग मैं सुचि पंचम केदार ॥
विरच्यो दीन दयाल गिरिवन माली सुविहार ॥३६॥
सुषद देहळी पै जहां वसत विनायक देव ॥
पश्चिम द्वार उदार है काशी को सुरसेव ॥३७॥
तहं निवास गनपति कृपा चूकि रहयो कवि पंथ ॥
दीन दयाल गिरीस पदवंदि करयो यह ग्रंथ ॥३८॥
मनि करनी सुरसरि सरन परि करि कियो प्रकासु ॥
गति सरनी वरनी कविन महिमा धरनी जासु ॥३९॥
वसुवसुवसुससिसाल मैं रितु वसंत मधुमास ॥
राम जनम तिथि भौम दिन भयो सुवाग विकास ॥४०॥
सुमन सहित यह वाग है यामैं संत वसंत ॥
सुषदायक सब काल मैं द्विज नायक विलसंत ॥४१॥"

पुष्पिका में लिखा है—"इति श्री गुसाई दीन दयाल गिरि कृत अनुराग बाग सम्पूर्ण ॥ संवत १९०९ ॥ मिति पूस सुदी ४। लि० सजीवन लाल कायथ बनारस षास महलै पियरी बड़ी ॥"

विषय—लक्षणग्रन्थ। एकस्वर चित्रम्, लघुमात्रिक चित्रम्, वात्सलय रस-वर्णन, ध्यानद्रुमावली, मंदस्मित सुमनावली, श्रवणदर्शनम्, स्वप्न-दर्शनम्, चित्रदर्शनम्, प्रत्यक्षदर्शनम्, दोलावली, मधुपुरीगमनसमये वात्सल्यरसपूरित जसोदावाक्यसरणी, षडऋतु वर्णन, गोपिकानाम् परस्परोक्ति, गोपिकानाम् तन्मयतावर्णन; राधातन्मयता अ दि शीर्षकों में विविध छन्दों और अलंकारों से युक्त रचना।

टिप्पणी : लिपि प्राचीन, किन्तु स्पष्ट है। लेखन-शैली भी पुरानी है।

यह पोथी श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में है। पु० क्र० सं० क-१३१ है।

९४. **गीतावली**—ग्रन्थकार—गो० तुलसीदास। लिपिकार—मोतीराम दूबे। अवस्था—प्राचीन; मोटा, देशी कागज। पृष्ठ-सं०—१०९। प्र० पृ० पं० लगभग—१८। आकार—६" × १२½"। भाषा—हिन्दी (अवधी)। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—अगहन-शुक्ल ३, सं० १८८३ वि०।

प्रारम्भ—"श्री गणेशायनमः॥ श्री जानकीवल्लभो विजयते ॥
निलांवुजस्यामलकोमलांग सीतासमारोपितवामभागं ॥

पाणौ महासायकचारुचापं नमामि रामं रघुवंस नाथं ॥१॥
राग असावरी ॥

आजु सुदिन सुभ्रधरी सुहाई रूप सील गुन धाम रामनृप भवन प्रगट भे आई ॥
अति पुनीत मधु मास लगन ग्रहवार जोग समुदाई ॥
हरषवंत चर अचर भूमि सुरत नरुह पुलकि जनाइ ॥२॥
वरषहि विबुध निकर कसुमावलि नभ दुंदुभी बजाई ॥
सुनि दशरथ सुत जन्म लिये सब गुरजन बिप्र बुलाई ॥
वेद विहित करि क्रिया परम सुचि आनंद डर न समाई ॥३॥
सदन वेद धुनि करत मधुर मुनि बहु विधि वाजु बजाई ॥
पुरवासिन्ह प्रियनाथ हेतु निज निज संपदा लुटाई ॥४॥
मनि तोरन बहु केतु पताकनि पुरीरचितकरि छाई ॥
मागध सूत द्वार वंदिजन जहं तहं करत बड़ाई ॥५॥"

मध्य की पंक्तियाँ (पृ० ५४)— "॥ रागगौरी ॥

देखत चित्रकूटवन मन अति होत हुलास ॥
सीताराम लषन प्रिय तापस वृंद निवास ॥
सरित सुहावनि पावनि पाप हरनि पय नामा ॥
सिद्ध साधु सुर सेवित देति सकल मन काम ॥
मिटप वेलि नव किशलय कुशमित सघन सुजाति
कंद मूल जल थल रुह अगनित अनवन भांति ॥
वंजुल मुंजल कुल संकुल तरु बल तामाल ॥
कदली कदंव सुवंधक पाटल पनस रसाल ॥
भूरुह भूरि भरे जनु छवि अनुराग सुभाग
वन विलोकि लघु लागहि विपुल विबुध वनवाग ॥
जाइन वरनि रामवन चितवत वितहरि लेत ॥
ललित लताद्रुम संकुल मनहु मनोज निकेत ॥"

अन्त—"हति कवंध सुग्रीव सषा करि भेदे ताल वाली मारयौ ॥
बानर रीछ सहाय अनुज संग सिंधु वांधि जस विस्तारयौ ॥
सकुल पुत्र दल सहित दसानन भारि अखिल सुर दुष टारयौ ॥
परम साधु जिअ जानि विभीषण लंकापुरी तिलक सान्यौ ॥
सीता अरु लछमन संग लीन्हे औ जिते सपाते संग आये ॥
नगर निकट वेवान आयो सवु नरनारी देषन धाए ॥
सिव विरंचि शुक नारदादि मुनि अस्तुति करत विमलवानी ॥
चौदह भुअन चराचर हरषित आये राम राजधानी ॥
मिले भरत जननी गुरपरिजन चाहत परम अनंद भरे ॥

विनय षट पदावलि सुषद यह निति होय प्रकास ॥
करो सुदीन दयाल गिरि वदन वरज मैं वास ॥३५॥
यह अनुराग सुवाग मैं सुचि पंचम केदार ॥
विरच्यो दीन दयाल गिरिवन माली सुविहार ॥३६॥
सुषद देहली पै जहां वसत विनायक देव ॥
पश्चिम द्वार उदार है काशी को सुरसेव ॥३७॥
तहं निवास गनपति कृपा चूकि रह्यो कवि पंथ ॥
दीन दयाल गिरीस पदवंदि करयो यह ग्रंथ ॥३८॥
मनि करनी सुरसरि सरन परि करि कियो प्रकासु ॥
गति सरनी वरनी कविन महिमा धरनी जासु ॥३९॥
वसुवसुवसुससिसाल मैं रितु वसंत मधुमास ॥
राम जनम तिथि भौम दिन भयो सुवाग विकास ॥४०॥
सुमन सहित यह वाग है यामै संत वसंत ॥
सुषदायक सब काल मैं द्विज नायक विलसंत ॥४१॥"

पुष्पिका में लिखा है—"इति श्री गुसाई दीन दयाल गिरि कृत अनुराग बाग सम्पूर्णं ॥ संवत १९०९ ॥ मिति पूस सुदी ४। लि० सजीवन लाल कायथ बनारस षास महलै पियरी बड़ी ॥"

विषय—लक्षणग्रन्थ। एकस्वर चित्रम्, लघुमात्रिक चित्रम्, वात्सलय रस-वर्णन, ध्यानद्रुमावली, मंदस्मित सुमनावली, श्रवणदर्शनम्, स्वप्न-दर्शनम्, चित्रदर्शनम्, प्रत्यक्षदर्शनम्, दोलावली, मधुपुरीगमनसमये वात्सलयरसपूरित जसोदावाक्यसरणी, षडऋतु वर्णन, गोपिकानाम् परस्परोक्ति, गोपिकानाम् तन्मयतावर्णन; राधातन्मयता आदि शीर्षकों में विविध छन्दों और अलंकारों से युक्त रचना।

टिप्पणी : लिपि प्राचीन, किन्तु स्पष्ट है। लेखन-शैली भी पुरानी है।

यह पोथी श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में है। पु० क्र० सं० क-१३१ है।

९४. गीतावली—ग्रन्थकार—गो० तुलसीदास। लिपिकार—मोतीराम दूबे। अवस्था—प्राचीन; मोटा, देशी कागज। पृष्ठ-सं०—१०९। प्र० पृ० पं० लगभग—१८। आकार—६"×१२½"। भाषा—हिन्दी (अवधी)। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—अगहन-शुक्ल ३, सं० १८८३ वि०।

प्रारम्भ—"श्री गणेशायनमः॥ श्री जानकीवल्लभो विजयते ॥
निलांवुजस्यामलकोमलांगं सीतासमारोपितवामभागं ॥

पाणौ महासायकचारुचापं नमामि रामं रघुवंस नाथं ॥१॥
राग असावरी ॥

आजु सुदिन सुभ्रधरी सुहाई रूप सील गुन धाम रामनृप भवन प्रगट भे आई ॥
अति पुनीत मधु मास लगन ग्रहवार जोग समुदाई ॥
हरषवंत चर अचर भूमि सुरत नरुह पुलकि जनाइ ॥२॥
वरषहि विबुध निकर कसुमावलि नभ दुंदुभी बजाई ॥
सुनि दशरथ सुत जन्म लिये सब गुरजन बिप्र बुलाई ॥
वेद विहित करि क्रिया परम सुचि आनंद डर न समाई ॥३॥
सदन वेद धुनि करत मधुर मुनि बहु विधि वाजु बजाई ॥
पुरवासिन्ह प्रियनाथ हेतु निज निज संपदा लुटाई ॥४॥
मनि तोरन बहु केतु पताकनि पुरीरचितकरि छाई ॥
मागध सूत द्वार वंदिजन जहं तहं करत वड़ाई ॥५॥"

मध्य की पंक्तियाँ (पृ० ५४)— "॥ रागगौरी ॥

देखत चित्रकूटवन मन अति होत हुलास ॥
सीताराम लषन प्रिय तापस वृंद निवास ॥
सरित सुहावनि पावनि पाप हरनि पय नामा ॥
सिद्ध साधु सुर सेवित देति सकल मन काम ॥
मिटप वेलि नव किशलय कुशमित सघन सुजाति
कंद मूल जल थल रुह अगनित अनवन भांति ॥
वंजुल मुंजल कुल संकुल तरु बल तामाल ॥
कदली कदंव सुवंधक पाटल पनस रसाल ॥
भूरुह भूरि भरे जनु छवि अनुराग सुभाग
वन विलोकि लघु लागहि विपुल विबुध वनवाग ॥
जाइन वरनि रामवन चितवत वितहरि लेत ॥
ललित लताद्रुम संकुल मनहु मनोज निकेत ॥"

अन्त—"हति कवंध सुग्रीव सषा करि भेदे ताल वाली मारयौ ॥
बानर रीछ सहाय अनुज संग सिंधु वांधि जस विस्तारयौ ॥
सकुल पुत्र दल सहित दसानन भारि अखिल सुर दुष टारयौ ॥
परम साधु जिअ जानि विभीषण लंकापुरी तिलक सान्यौ ॥
सीता अरु लछमन संग लीन्हे औ जिते सपाते संग आये ॥
नगर निकट वेवान आयो सवु नरनारी देषन धाए ॥
सिव विरंचि शुक नारदादि मुनि अस्तुति करत विमलवानी ॥
चौदह भुअन चराचर हरषित आये राम राजधानी ॥
मिले भरत जननी गुरपरिजन चाहत परम अनंद भरे ॥

दुसह वियोग जनित दारुन दुष रामचरण देषत विते ॥
वेद पुरान विचारि लगन सुभ महाराज अविषेक कियो ॥
तुलसीदास जिय जानि सुऔसर भगति दान तव मागि लियो ॥३३०॥

इति श्री रामायणे विष्णुपद गीतावल्यां तुलसीकृत उत्तरकांड समाप्तं ॥ शुभमस्तु ॥"

विषय—रामजीवन-सम्बन्धी रचना। विविध रागों में राम-कथा। ३३० पद, सात काण्ड।

टिप्पणी : १—ग्रन्थ की लिपि-शैली प्राचीन, किन्तु स्पष्ट है। सर्वत्र 'ख' के लिए 'ष' और 'स' के लिए 'श' का प्रयोग लिपिकार ने किया है। ग्रन्थ की पुष्पिका में—"इति श्री रामायणे विष्णुपद गीतावल्यां तुलसीकृत उत्तरकांड समाप्तं ॥ शुभमस्तु ॥

जो देषा सो लिषा ॥ लिषा मोतीराम दुवे ॥ शम्वत् १८८३ ॥ पोथी देवान साहेब सीताराम ॥ अगहन-शुक्ल ५६३"

२—यह ग्रन्थ नागरी-प्रचारिणी सभा के खोज-विवरण में भी है। देखिए—ग्रन्थ-सं० ८७ की टिप्पणी। ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, मुरारपुर, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं०—क-१३३ है।

९५. रामचरणचिह्नप्रकाश— ग्रन्थकार—श्रीकिंकर गोविन्द। लिपिकार—×। अवस्था—हाथ का बना देशी कागज, प्राचीन। पृष्ठ-सं०—११। प्र० पृ० पं० लगभग—१६। आकार—६½"×११"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—ज्येष्ठ-शुक्ल, सं० १८९७ वि०। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"श्री गणेशाय नमः अथ श्री रामचरण चिह्न प्रकाश लिख्यते
श्री गणपति चरण सरण आए जे कविजन
अभिमत फलते हि दिएदेत है हे अजहपन
सुमिरि चरण सोइ चरण चिन्ह वरनत रघुवरके
सेइ जासु वहु संत रसिक पाए वहिघरके
पुनि मारती पदारविन्द एकाम धेनुवर
वंदितई किंकर गोविन्द की वुद्धि विमल पर
जासो श्री कोशल नरेंद्र पद कंजु मंजुतर
चिन्ह चारु उर धरि विचारु वरनत उदारपर
श्री गुरु के पद कमल अति युगल मनोहर
तिमिर हरन दुष दरन सरन असरन करुनाकर
कोटि कोटि दंडवत शिर धरि धरनीतल
रामचन्द्र के चरण चिन्ह चित वहि वरनी भल"

मध्य की पंक्तियाँ (पृष्ठ ४)—"अवध नगर के निकट धार उज्जल हुलसति है
जनु हरिपुर के जानहेतु नृपडगर लसति है
चलत कुपथ भरि जन्म एकबारहु पथ चाही
चढि पहुंचे हरिधाम काम पुरो नहि काही"

अन्त—"अथ हरि गीत छन्द ॥ वरने जु प्रथमहि अंक षोडश वामपद श्री रामके
तेइ सुदक्षिन जनक जाके लसत करुना धामके
पुनि अष्टदश शुभ अंक दक्षिन चरन श्री रघुनाथके
सिय रामपद पंकज लसत अति माथ नाथ अनाथके
यह चरन चिन्ह प्रकाश रघुपति अमल मति करि है सही
श्री राम चरन सरोज सुन्दरमधुपमन करि है वही
यह अति कठिन कलिकाल अति विकराल चाल हुते कही
जो सुन सुमिरत धरत उखर जनन पै व्यापत नही"

विषय—इस पुस्तक में रचयिता ने श्रीराम के लिए विविध छन्दों (चचरीक, सुखद सवैया, दोहा, हरिगीतिका आदि) में भक्ति भावपूर्वक अपने मनःसंकल्पों को साधु-भाषा में प्रकट किया है। कहीं-कहीं भक्ति-भावना में अतिशयोक्ति से भी काम लिया है। ग्रन्थ में किसी दूसरे ग्रन्थ के भी कुछ पृष्ठ और पद दिये हैं, जिनका सम्बन्ध रस-वर्णन से है।

"शैल सुता जगत गुरु पशुपति सुत निर्वान
विघन हरण शुभ सुख करण पदपूरन कल्यान ॥१॥
देवी पूजि सरस्वती पूज हरि के पाय
नमस्कार कर जोरि के कहै महा कविराय ॥२॥
जगदम्बे जननी जगत हो सुमिरों कर जोरि
आनन्द रस पूरण करो अक्षर परै न खोरि ॥३॥
प्रथम सिंगारसुहास रस करुनारुद्र सवीर
भय विभत्स वषानिए अद्भुत धीर"

आदि से प्रारम्भ करके—"भयो शान्त कछु नीरतैं सत संग मिले सव भागि
चंदन सम जिनको वचन जगत दाघ उर जासु
सो सत संगत कीजियै हिय सुनित होत हुलास ॥७०८॥
सब रचना करता रचि करता रचना यहि
सास सांस भूल्यौ नही तू क्यों भूल्यौ ताहि ॥७०९॥"

आदि पदों से समाप्त किया है। प्रतीत होता है, यह ग्रन्थ किसी बृहद् ग्रन्थ का खण्डित पृष्ठ है। इसकी अन्तिम

पद-संख्या ७०९ है। किन्तु इस ग्रन्थ में इसके केवल दो पृष्ठ-मात्र हैं।

टिप्पणी : ग्रन्थ की लिपि प्राचीन और अस्पष्ट है। ग्रन्थ की पुष्पिका में—"इति श्री किंकर गोविन्द विरचिते श्री रामचरन चिन्ह प्रकाश संपूर्णम् ॥० श्री सम्बत १८९७ जेठ सुदी" लिखा हुआ है। लिपिकार का नाम ग्रन्थ में नहीं है। ग्रन्थ की भाषा पर 'अवधी' का तो प्रभाव है ही, यत्र-तत्र सधुक्कड़ी की भी झलक स्पष्ट है। यह ग्रन्थ अबतक अप्रकाशित है। नागरी-प्रचारिणी सभा के खोज-विवरणों में भी इसकी प्राप्ति-सूचना नहीं है। यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, मुरारपुर, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क-१३४ है।

९६. सुदामाचरित्र—ग्रन्थकार—तुलसीदास। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी; पुराना देशी कागज। पृष्ठ-सं० ९। प्र० पृ० पं० लगभग—१६। आकार—४"×८"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"श्रीमते रामानुजाय नमः ॥ कका कलजुग नाम अधारा ॥
प्रभु सुमीरौ भउतरौ पारा।
साध सगत करि हरि रस पीजै ॥
जीवन जन्म सुफल करि लीजै ॥१॥
खखा खोजो सकल जहाना ॥
जाको गावै वेद पुराना ॥
निरभै नाम हरि कौ लीजौ ॥
चरन कमल को ध्यान धरीजै ॥२॥
गगा गुन गोविंद कौ गावौ ॥
माया जाल भुलि जनि जावै ॥..................... ॥"

अन्त—"वारषठीज्ञा गुन गाऊं ॥
सब संतन को सिस नवाऊं ॥
दीन पती हि सदा सुषदेवा ॥
नमस्कार करो गुरु देवा ॥ इति श्री सुदामा........
तिनक पुत्र होय कल्याना
तीन लोक मै भयो अनंदा ॥
जय जय करत सकल सुरवंदा ॥
राम रतन जीन कीरत गाई ॥

हीरदे सीयाराम सदा सुष दाई ॥
संत जनन मिल कीरति गाई ॥
तुलसीदास चरन चित लाई ॥"

विषय—वर्णमाला के प्रथम अक्षर को प्रारम्भ में रखकर पद्य-रचना और सुदामा को माध्यम बनाकर भगवान् की स्तुति।

टिप्पणी : ग्रन्थ के प्रारम्भ या अन्त अथवा पुष्पिका में ग्रन्थकार और लिपिकार के नाम का संकेत नहीं है। ग्रन्थ की लिपि और कागज यद्यपि प्राचीन है, किन्तु ग्रन्थ में कोई काव्य-चमत्कार नहीं है। ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, मुरारपुर, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क-१३५ है।

९७. रसिकविनोद—ग्रन्थकार—प्रेमसंखी। लिपिकार—×। अवस्था—प्राचीन, देशी कागज। पृष्ठ-सं०—४२। प्र० पृ० पं० लगभग—८। आकार—६½" × ९½"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—चैत्र-शुक्ल ८, रविवार,—सं० १९०९ वि० (सन् १८५२ ई०)।

प्रारम्भ—"श्री रामानुजाय नमः श्री गणेशाये नमः श्री जानकी भल्लभाय नमः ॥

सोरठा ॥

पिंगल मे नहि हो सको काव्य रीति जानी
नाहि मोहि तुम्हार भरोस श्री विदेह नृप नदिनी ॥१॥
औगुन विस्वावीस जद्यपि गुन एको नही।
सीय पद धरि सीस प्रेम सषी कहै यथा मति ॥२॥

कवित्त ॥

चंचला सिगरी तजिकै थिर थैर हुते यह बात भली है ॥
सेउ सिया पद पंकज धूरि सजीवन भूरि विहार थली है॥
वारहिवार सिषावत है अपने मन को यह प्रेम अली है॥
ठाकुर राम लला हमरे ठाकुरान श्री मिथिलेसलली है ॥१॥"

मध्य की पंक्तियाँ (पृष्ठ २१)—

"कल्पलता के सिद्धिदायक कल्पतरु कामधेनु कामना के पूरन करन है ॥
तीनि लोक चाहत कृपा कटाक्ष कमला की कमला सदाइ जाकि सेवत सरन है ॥
चिंतामनि चिंता के हरन हारे प्रेम सषी तीर की जनकवर वारिज वरन है ॥
नष विधु पूषन समन दूषनये रघुवंस भूषन के राजत चरन है ॥२२॥"

अन्त—बरवै : "सिया बोलाये सषा सहित अनुराग ॥
दै असीस पट भूषन उचित विभाग ॥१॥
लछिमन कहि रिपु दमन स्वस्ति सुखमूल ॥
पट भूषन पहिराय जानि समतूल ॥२॥

चले चंठि मन मुदित छुधित मन नैन ॥
सियारूप उरधारि राम सुष अैन ॥३॥
सषिन कहयौ पठय करि फागु अवदेह ॥
विहसि कहयौ रघुनाथ जथारुचि लेह ॥४॥
मागत यह करजोरि सिषा सियानाह ॥
प्रेम सषी हिय वसहु दिये गलवाहु ॥५॥
संपूर्ण यह छविमगन रसिक जन पूरन काम
जन्मलाम जगमाह यह भजिये सीयराम ॥६॥
शुभमस्तु ॥"

विषय—राम और सीता के परस्पर प्रेम तथा सखी-सहेलियों के साथ सीता के अनुराग का वर्णन। राम-जीवन-सम्बन्धी मुक्तक रचना तथा भक्तिभावपूर्ण भजन। सवैया, बरवै, दोहा आदि विविध छन्दों का प्रयोग।

टिप्पणी : १—यह ग्रन्थ अप्रकाशित तथा महत्त्वपूर्ण है। कहीं-कहीं ग्रन्थकार ने बड़ा ही कवित्वमय वर्णन किया है। देखिए—

"नाभी की निकाइ जाति कौन पइगाइ जाते
उपज्यौ विरंचि जो पसारे जग जाल है ॥
रूप सुधावापी सी विराजत गंभीर धीर
रोमन की राजी पै सुछप सेवाल हैं ॥"

पृष्ठ-सं० १९ में, सीता-सौन्दर्य तथा शृंगार-वर्णन के प्रसंग में प्रस्तुत कल्पना की गई है। ग्रन्थ अनुसन्धेय है।

२—ग्रन्थ की लिपि अत्यन्त प्राचीन और पृष्ठ जीर्ण-शीर्ण हैं। कहीं-कहीं अक्षर घिस गये हैं। ग्रन्थ की पुष्पिका में—

"शुभमस्तु चैत्र मास शुक्ल पक्षे अष्टम्यां रविवासर शमत् १९०९" लिखा हुआ है। ग्रन्थ अनुसन्धेय है। ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, मुरारपुर, गया में सुरक्षित है। पु० क्र०-सं० क—१३६ है।

९८. रामचन्द्रिका—ग्रन्थकार—श्रीकेशवदास। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी, पुराना; देशी कागज, सम्पूर्ण पृष्ठ-सं०—३७। प्र० पृ० पं० लगभग—१६। आकार—५" × ९½"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—कार्त्तिक-शुक्ल बुधवार, संवत् १६५८ वि०। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"सुभ सुरजकुल कलस नृपति दसरथ भय भूपति
तेनके सुनि सुत चारि चतुर चित चारु चारुमति
रामचंद्र भुवचंद्र भरथभारथ भुव भूषन
लछिमन अरु शत्रुध्न दीरुदावानल दहन

सरजु सरिता तरनगरवसै वर अवध नाम जस धामधर
अघऔघ विनासी सर्व पुरवासी अमर लोक मानहु निगर"

मध्य की पंक्तियाँ (पृष्ठ १८)—

"॥ श्री रामचर्चरी छन्द ॥

व्यौम मैं मुनि देखिय अति लाल श्री सुषसाजही
सिंधुमै वडवाग्नि की जनु ज्वाल माल विराजही
पद्मरागनि वी किधो दिव धूरी पूरित सी भई
सुरवाजीन की धुरी अति तिछतातिह्न को हई

॥ सोरठा ॥

मुनि चढ़ो गगना तरु धाई दिनकर वानर अरुन मुख दीनों झुकि कहरा सकल तारका कुसुमवन"

अन्त— "॥ मधुभारछन्द ॥

दसरथ जगाई चले रामराई दुंदुभी बजाई
विजय तारका तारि सुवाहु संघारि कै
गौतम नारिको पात पठाऐ चाप हवोहर को
हठि के सवदेव अदेवहु तो सवुहारो
सीतहि व्याहि अभीत चले गिरि गर्व चठे भृगुनंद उतारो
श्री गरुड़ध्वज को धनु लै रघुनंदन अवधपुरी पग धारो ५५"

विषय—रामजीवन-सम्वन्धी प्रसिद्ध काव्य। रामायण का वर्णन। (पृष्ठ १ से ३७ तक)।

टिप्पणी : १—ग्रन्थ के प्रारम्भ में कवि-परिचय और ग्रन्थ-रचनाकाल तथा राजा इन्द्रजीत सिंह के अनुरोध आदि से सम्बन्धित कुछ पद लिखे गये हैं। कवि ने ग्रन्थ-रचनाकाल के सम्बन्ध में लिखा है—

"सोरह सै अठावना कातिक सुदि वुधवार
रामचंद्र की चंद्रिका तब लीन्हौ अवतार।"

अपने वंश के सम्बन्ध में कवि लिखते हैं—

"सुनाट्य जाति गुनाढ्य है जगसिध सुध सुभाव
कृष्ण दत्त मसिध है हत मिश्र पंडित राव
गनेस सो सुत पारयो वुध कासीनाथ अगाध
असेष सास्त्र विचारि कै जिन्ह जानियो मति साध

दोहा

उपज्यौ तिनके मंद मति सुत कबि कैसव दास
रामचंद्र की चंद्रिका कीन्है विविधी प्रकास ५"

प्रस्तुत ग्रन्थ के मंगलाचरण में (कुछ पद) अन्य प्रतियों से विशेष लिखे गये हैं।

२—ग्रन्थ की लिपि अस्पष्ट और प्राचीन है। लिपिकार और लिपिकाल का पता नहीं चलता है। यह ग्रन्थ नागरी-प्रचारिणी सभा के खोज-विवरण में भी है। देखिए विवरण—ग्रन्थ-संख्या—५९। ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, मुरारपुर, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क-१३७ है।

९९. **सीलकथा**—ग्रन्थकार—श्रीभारामल। लिपिकार—×। अवस्था—प्राचीन, देशी कागज, सम्पूर्ण। पृष्ठ-सं०—३८। प्र० पृ० पं० लगभग—२०। आकार—५½" × ९½"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—ज्येष्ठ-कृष्ण ५, सं० १९५३ वि० (सन् १८९६ ई०)।

प्रारम्भ—"ऊंनम सिद्धेभ्यः ॥ अथा सीलकथा लिख्यते ॥ दोहा ॥
पार्सनाथ परमात्मा वंदौ श्री जिनराइ ॥
मो हिय मैं वासन करौ कहौ कथा विलगाइ ॥१॥

चौपदी ॥

प्रथमहिं प्रनमौ श्री जिनदेव ॥ इंद्र नरिंद्र करैं तुवसेव ॥
तीन लोक मै मंगल रूप ॥ ते वंदौ जिन राज अनूप ॥२॥
पंच परमगुर वंदन करौं ॥ कलंक क्षिन मैं हरौं ॥
वंदौ श्री सरस्वती के पाई ॥ वंदौ मनवच श्री मुनिराई ॥३॥
सील कथा जो कहौं बषान ॥ सील वंदौ जग मै परधान ॥
सील समान अवर नहिं जान ॥ सील हितै जपतप व्रमान ॥४॥
सील विना निरफल अधिकार ॥ सील विना उठौ व्येवहार ॥
सील प्रतग्या जोमन ल्याय ॥ सरस कथा जाकी जह भई ॥५॥"

मध्य की पंक्तियाँ (पृष्ठ १८)—

"देषौ सील तरौ पर भावै ॥ जाकौ कोउ नहि भय उपजावै ॥
फिर मनु गाढ़ौ जब कीनौ ॥ उरवंच परम गुर लीनौ ॥६८॥"

अन्त—"जाघर सील धुरंधर नारी ॥ जाघर सदा पवित्र विहारी ॥
जाघर विभाचारनि त्रिय होई ॥ ताघर सूतक सदा किसोई ॥६३॥
तातैं सुनौ सवै नर-नारी ॥ करि ऐ सील प्रतिग्या भारी ॥
सील समान अतर नहिं कोई ॥ सीलहि सारजग मैं सोई ॥६४॥
सील कथा जव पूरन भई ॥ भारामल प्रगट करकही ॥
भूल-चूक अछिर जो कोई ॥ पंडित सुद्ध करौ सब कोई ॥६५॥
मो मतिहीन जु है अधिकार ॥ सुनियौ बुधजन सत्र नरनार ॥
पढ़ैं सुनै अव जौ मनलाई ॥ जन्म-जन्म के पातिक जाई ॥

दुष दरिद्र सब जाई नसाई ।। जो जह कथा सुनै मन लाई ।।
ताकौं श्री जिन करै सहाई ।। जो जह सुनै चतुर मन लाई ।।
तो पावहि सुख अधिकाई ।।६९।।"

दोहा

"सीलकथा पूरन भई पठैं सुनै नित सोई ।।
दुउष दरिद्र नासै तवै तुरत महासुष होई ।।७०।।
विच विचकीनौ दोहारा छंद सोरठा गाई ।।
भारामल प्रत कौ सरन दास किनो खनाई ।।५७१।।

ईति श्री भारामल कृत सीलकथा संपूर्ण: ६ ।। मिती जेष्ठवदी ५ ।।
वि० संवत १९५३ ।।"

विषय—कौशल देश में वैजयन्ती नामक नगर में पद्मसेन नाम का एक राजा निवास करता था। उस नगर में 'महिपाल' नाम का एक सेठ भी रहता था और वह बहुत धनवान् था, उसके पास छियानवे करोड़ दीनार थे। उसके 'वनमाला' नामकी स्त्री थी। उसे एक पुत्र हुआ। अनेक उत्सव और मंगलाचार के बाद उसका नाम 'सुखानन्द' रखा गया। उसने अनेक शास्त्रों और अनेक विद्याओं का अध्ययन किया। पढ़-लिखकर घर लौटने के बाद सेठ को उसकी शादी की चिन्ता हुई। मालव देश के उज्जैन नगर में 'महीदत्त' नामक एक सेठ निवास करता था। उसके 'श्रीमती' नाम की पत्नी थी। उसने अपनी पुत्री का नाम 'मनोरमा' रखा। वह रूपसम्पन्ना, विविध कला-निपुणा, सुरकन्या जैसी थी। सेठ ने उसे खूब पढ़ाया-लिखाया। जब वह सोलह वर्ष की हुई, तब सेठ जी को उसकी शादी की चिन्ता हुई। सेठजी ने निश्चय किया कि जो मेरे समान धनवान् होगा उसीके साथ पुत्री की शादी होगी। सेठ के पास बारह करोड़ दीनार की माला थी। उसने निश्चय किया कि जो इसे खरीदेगा, उसके साथ पुत्री की शादी करूँगा। ब्राह्मण और दूत उस माला को लेकर देश-देशान्तर घूमने लगे। घूमते-घूमते वे लोग कोसल देश पहुँचे। उस नगर की शोभा और धन-सम्पन्नता से उन्हें आशा हुई। वे 'महिपाल' सेठ के पास पहुँचे। अनेक प्रकार की बातें, विविध घटना। माला का लुप्त होना। 'सुखानन्द' का उज्जैन आना। अन्त में विवाह। इसी कथा का विस्तार इस ग्रन्थ में है। अन्त में घर की चिन्ता, धन की चिन्ता से वह (सुखानन्द) व्याकुल होकर पत्नी को छोड़कर देशाटन के लिए निकल जाता है। उसके पीछे में 'मनोरमा' ने अपने नारीत्व की रक्षा किस प्रकार की है, ग्रन्थ-कार ने इस रचना में इसी की विवेचना की है।

टिप्पणी : १—ग्रन्थ की भाषा पर 'राजस्थानी' का प्रभाव है। साहित्यिक दृष्टिकोण से ग्रन्थ विवेच्य है। यह रचना दिगम्बरी जैन-समाज में काफी प्रसिद्ध है। इनकी कई अन्य रचनाएं मिलती हैं।

२—श्रीअगरचन्द नाहटा के द्वारा प्राप्त पत्र से सूचना मिली है कि श्री कामता प्रसाद द्वारा लिखित "हिन्दी जैन-साहित्य का संक्षिप्त इतिहास" में इनपर पर्याप्त चर्चा हुई है। श्रीवेदप्रकाश गर्ग ने भी कवि के सम्बन्ध में विशिष्ट सूचनाएँ दी हैं।

३—ग्रन्थ की लिपि अस्पष्ट और प्राचीन है। ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, मुरारपुर, गया में सुरक्षित है! पु० क्र० सँ० क-१३९ है।

१००. विनयपत्रिका—ग्रन्थकार—सूरदासजी। लिपिकार—×। अवस्था—प्राचीन, मोटा देशी कागज, खण्डित। पृष्ठ-सं०—३२०। प्र० पृ० पं० लगभग—३६। आकार—६"×१०"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"अलिकुल गंजन रति रस रंजन नैन अंजन हीन
क्रीडत सुधा सरोवर महिमा मानो मनसिज को मीन
पिय त्रिखमोचन रति रसलोचन चंचल लोचन चारु
कुँअरि किसोरि चकोर..............................."

मध्य की पंक्तियाँ (पृष्ठ १६०)—"माइरी होवलि वलियार रभकनकी
सरस हिंडोर डुलावत लाल नवल रंगीली अति अभिराम
सोहत लारी सुहीवाम धरकत उर मुकुता मनिदाम
छलक परत ग्रीवा छवि चाम
गुहि वेनी सुठि सुफर सोहाति नाना रंग पुहुपनि कीपांती
सोभितं पाछैं आछि भांति रूपलता मानो फलि हुलसति"

अन्त—नट : "दुती हुई स्याम··ओंर कछु मुख कहतवानी तहा वैठी जाइ
....
....................सुर प्रभु आतुर पठाइ करनीमन अवलेइ"

विषय—कृष्ण-जीवन से सम्बन्धित बाललीला, गोपियों के साथ विहार, कंस-संहार, पूतना-वध आदि से सम्बन्धित भक्ति-भावना से पूर्ण विनय के गेय पद। पृष्ठ १ से ३२० तक ८४० पदों में समाप्त।

टिप्पणी : १—यह ग्रन्थ सूरदास रचित है। सूरदासजी-कृत 'विनयपत्रिका' अभीतक उपलब्ध नहीं हुई है।[1] इस ग्रन्थ के प्रारम्भ के ३ पृष्ठ खण्डित हैं।

---

१. श्रीवेदप्रकाश गर्ग द्वारा प्राप्त सूचना के अनुसार—"सूर-कृत 'विनयपत्रिका' प्राप्त हो चुकी है। यह श्रीप्रभुदयाल मीतल द्वारा सम्पादित होकर 'सूर-विनय-पदावली' नाम से अग्रवाल प्रेस, मथुरा से प्रकाशित हो चुकी है। यह कोई स्वतन्त्र रचना नहीं है। सूरसागर आदि ग्रन्थों का ही अंशमात्र है।—दे० 'व्रजभारती', वर्ष १५, अंक २, पृ० ७६।

२—ग्रन्थ की लिपि अत्यन्त प्राचीन होने के कारण अस्पष्ट है। ग्रन्थकार और लिपिकार तथा काल आदि का उल्लेख ग्रन्थ में नहीं है। यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, मुरारपुर, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क-१३८ है।

१०१. वामविलास—ग्रन्थकार—श्रीवैजनाथ कवि। लिपिकार—गुलाम सिंह। अवस्था—प्राचीन, देशी कागज, सम्पूर्ण। पृष्ठ-सं०—१४१। प्र० पृ० पं० लगभग—१४। आकार—४½"×७½"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—माघ-शुक्ल पंचमी, सं० १६३४ वि०।[1] लिपिकाल—माघ-कृष्ण चतुर्दशी, सोमवार, सं० १९२८ वि०, (सन् १८७१ ई०)।

प्रारम्भ—"श्री गणेशाय नमः॥ अथ वाम विलस लिख्यते॥ दोहा॥

जै लंबोदर गजवदन॥ असरन सरन हमेस॥
विघ्न हरन सब सुष करन॥ सोइ करद गनेस॥१॥

॥ कवित्त॥

कुलिस समान मेरु विधन विनासिवे
मैका कनन अमंगल कुठार ह्वै विदारे हैं॥
हारे ताप सकल अनेक सित भानु ह्वै
के अरित मनासिवे मै भानु से निहारे ह्वै॥
दावानल दारिद दवाइवे मे मानो
धन भने वैजनाथ आस रावरी विचारे है॥
परम पुनीत औ प्रताप मान लौ प्रवीन
सुंदर रदन गननायक तिहारे है॥२॥

मध्य की पंक्तियाँ (पृष्ठ ७०)—अथ दूती-यथा दोहा

"दंपति के सुष······अति प्रवीन सव भांति
दूती तोहि वषानहीं कवि कोविद शुभ कांति ११
कहि उत्तम मध्यम अधम तिनि दूतिका भेद
हित कहि हितकरि उत्तमा मध्यम कहि हित षेद १२
अधमा अनहित कहि सदा कहत सयाने लोय
और यवनियों आदि सव उत्तमाहि मे होय १३

१. श्रीअगरचन्द नाहटा ने इस ग्रन्थ का रचनाकाल सं० १९१३ वि० माना है। रचना-काल-सूचक दोहे में प्रयुक्त 'रस' शब्द को वे ६ अंक की अपेक्षा ९ के लिए उपयुक्त मानते हैं। —सं०

उत्तमा दूती मथा
कोकिल की कूकनि सी बोलनि मधुर जाकी
चंद्रमा से बदन विलोकि छवि वाकी है
कोमल कमल से विलोचन विरागि रही
मीन मृग षंजन सी चितवनि ताकी है
भने बैजनाथ दंत पंगति विकासी रही
दाडिम बिजैनकली कुंद छवि छाकी है
वंनिता वसंत की वहार वनि वैसी
तहां चलु वनमाली वन हेरु बोरवाकी है १४"

अन्त— दोहा

"मुकुट कमल मुगदर चँवर, चक्र ढाल तलवार।
धनुषवाण तिरसूल कहि, अंकुस वहुरि कुठार १७
कंकन रसना कूर्म पुनि, मोर धरनि धर हाल।
पुनि कपाट कहि अश्वगति, त्रिपदी वहुरि पहार १८
इति श्री मद्जगत जाहिर प्रतापावली वावू सीतारामाज्ञानुसारेन सुकवि दिनेशात्मज वैजनाथ विरचिते वामविलासे पंचधा विरहवर्नन नाम ऐकादशऽउल्लासः ११ समाप्तः शुभंमस्तु लिषा सुर्म गुलाम सिंह सोहनीवासी जिला जउनपुर आज्ञानुसार श्री ब्रह्ममूर्ति वैजनाथ कवि संवत् १९२८ माघ-कृष्ण चतुर्द्दश्यां भौम वासरे सांयकाले समाप्तोयम्।"

विषय—पृ० १ से ७ तक (पद्य सं० १ से २४ तक) मंगलाचरण, राजवंश-वर्णन और ग्रन्थ की भूमिका—
"भनै वैजनाथ वावू सीताराम तेरी कीर्ति
कैधौं शंभु अंगजानि भसम लगायो है...... ...
और भनै वैजनाथ वावू सीताराम तेरो ज्ञान
गौरव वड़ाई से सारदा गनेस से" से प्रारम्भ करके

× × × ×

आठ सुअन सियराम के आठहुं बुद्धि अगाध।
दया दान विद्या-निपुन, निपुनराम अवराध ॥
....गुरु बकस लाल।
अति चित दयाल......छंदलाल हरफंद जेचे जानत जग व्यावहार।
......रेवतलाल कृपान लिये कर जब सजि चढ़त तुरंग ॥
...............नौवतलाल सिकारहेत जब करि उमंग
सहजहु कहत..........................सीताराम रावरो

सुवन वलिरामलाल भावी भूत वर्त्तमान ऐसो को जहान है……
मुकुट सहाय पै सहायक……शंकरदयाल" तक राजवंश-वर्णन है।
पृ० ७ और पद्य २० से दान-वर्णन और नायक-लक्षण, नायिका-वर्णन आदि।

टिप्पणी : १—ग्रन्थ अनुसन्धेय है। अभीतक अप्रकाशित है। ग्रन्थ प्रारम्भ करते हुए कवि ने रचनाकाल की ओर संकेत किया है—

"जहाँ नृत्य वहुगीत वहु वहुरि कवित्त निवास ॥
वैजनाथ वरनत तहां सुदर वाम विलास।
गुनिये गुन व्राह्मन सिषा रस सशि संवतचार
माघ शुक्ल श्री पंचमी भयो ग्रंथ अवतार।"

२—ग्रन्थकार ने ग्रन्थ के विषय को प्रारम्भ करते हुए नायक का लक्षण लिखा है—

"जाहि लषे हुलसत हियो, पूरन रस को चाह।
ताहि वषानत नाइका सुकविन के समुदाय ॥२६॥"

यथा-कवित्त

"हाटक जाहिलषे न सुहात
रुचपक केतकि केतिक कांत हैं।
ऐसिहि वेलि नवेलि लता लषि
मेलि हिये दुष जेति विशांत है।
चंदन चंदन है मुष की सरि
नैननि को लषि अैनि लजात है।
कोविन दाम नही विकि जात
कहो जगमे इनको लषि गात है। २७

दोहा ॥

चंपक केतक केतकी, हाटक हटत अपार।
लष तनमन काको लटत, को असहै संसार ॥२८॥"

३-ग्रन्थकार जौनपुर जिले के बादशाहपुर-निवासी बाबू सीताराम के आश्रित थे। इनके पिता श्रीदिनेशजी भी सुकवि थे, जैसा कि ग्रन्थ की 'पुष्पिका' से स्पष्ट है।

४—ग्रन्थ का समयसूचक दोहा अस्पष्ट प्रतीत होता है। दोहे से ग्रन्थ का रचनाकाल सं० १७३४ होता है, किन्तु ग्रन्थ के लिपिकार ने लिपिकाल सं० १९२८ बताया है और लिखा है कि कवि की आज्ञा पाकर ही लिपि की गई है।

यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, मुरारपुर, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क-५३ है।

१०२. रामरसार्णव—ग्रन्थकार—श्रीदलेल सिंह। लिपिकार—×। अवस्था—प्राचीन, देशी कागज, जीर्ण-शीर्ण। पृष्ठ-सं०—३६१। प्र० पृ० पं० लगभग—१८। आकार—५″×१०″। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"श्री गणेसावा नमः ॥ दोहा

गुरुदिज गनपति रामह विहर गौरिदास,
चरन कमल रजसिस धरि कहन चहो इतिहास॥
हरि चरनोदक वर्भ मै हरिह रतन के षानि,
नाम दरस जल मुन्नदा जगत जननि मृदुवानि॥
गंगादिक तिरथ सकल व्रभादिक सुरविंद
वेद आदि विदवा सभै नारद आदि मुनिन्द॥
नृप पर उपकारि जिते युव आदिक रतनित,
करो दंडवत सभनिकह सविनव सभै सप्रीत॥
वरषा हरिगुन हलकि कवि, सालि सुग्रंथ अपार,
उनछ विर्ति लै कहत हो निजमत के अनुसार॥
वुध गुर जन सज्जन चरन, वंदि कहो करजोरि।
जग मंगल गुनवरनि कै यहो हिन मति भोर॥
करो यथा मति हरि कथा रामरसार्नव नाम
..... भि अध आषर सोधिओ, जानिदास विनदास॥"

मध्य की पंक्तियाँ (पृ० १८०)— दोहा

"करि अस्तुति भृगु वंसमनि, कहेउ जोरि जुग पानि।
जेहि विधिवर प्रभु तेल है, सुनुहु सो कहा वषानि॥

चौपाइ

पुरवधक तिरथ महजाइ, हरिहित महा कठिन तव लाइ।
प्रगटे जग मंगल स्नुति सारा, कहेउ भवउ तप सिद्धव तोहारा॥
सतु हेतु कीन्हेउ तप भारी, वधहु जाऐ छत्रि जत झारी।"

....

अन्त—"सुनि रघुनाथ विभिषन बानी, नीति प्रताप विरति मति सानी।
भऐ तुस्ट जग मंगल धामा, वर मागहु भाषेउ ओरामा॥
कहेउ विभिषन महि धरी माथा, निज पग भगति देहु रघुनाथा।
एवमस्तु भाषेउ रघुनायक, असत दवन संतन्ह सुपदाऐक॥

पुनि प्रभु कहेउ सुनहु मनलाइ,.................. ....।
....॥
का हमकरिहहि राम सहाइ तुअ पीछे रहहि कपिराइ ॥
समघर रहहि राम ऐह...॥
....॥"

विषय—इस ग्रन्थ में २१ तरंग या प्रकास (अध्याय) हैं। प्रथम, द्वितीय और तृतीय तरंगों में—कमठ, मीन आदि रूपों का वर्णन (पृ० ८ से ४६ तक); चतुर्थ तरंग में वराहचरित्रवर्णन (पृ० ४७ से ६० तक); पंचम तरंग में—नरहरि चरित्र कथनम् (पृ० ६१ से ७३ तक); षष्ठ तरंग में भी—नरसिंहचरित (पृ० ७४ से ९० तक); सप्तम तरंग में—हरिविराटरूपदर्शनम् (पृ० ९१ से १०९ तक); अष्टम तरंग में—वामचरित्रवर्णनम् (पृ० ११० से ११९ तक); नवम तरंग में—परशुरामचरित्र (पृ० ११९ से १३४ तक); दशम तरंग में—रामचरित्रवर्णनम् (पृ० १३४ से १४६ तक); एकादश तरंग से २१ तरंग तक रामकथा का विस्तृत वर्णन (पृ० १४६ से ३६१ तक)। कथा-प्रसंग में ध्रुव, अहल्या, निषाद, विभीषण, जनक, सुग्रीव आदि के जीवन पर अच्छा प्रकाश डाला गया है।

टिप्पणी : १—ग्रन्थ अप्रकाशित है। अनुसन्धेय है। ग्रन्थकार की भाषा पर तुलसी के रामचरितमानस का तो प्रभाव है ही। 'अवधी' के अतिरिक्त 'मगही' का भी प्रभाव है। प्रारम्भ में पृष्ठ १ से ७ तक मंगलाचरण के बाद कवि ने अपना परिचय, वंश-विस्तार तथा ग्रन्थ-रचना-प्रयोजन दिखाया है। कवि ने अपने सम्बन्ध में—

"भजनते सुक नारदादिक संख्य अरजुन पाइआ,
प्रभु प्रनत हीत दलसीघ भूपति मोहवस विसराईआ"

और—"कौन गरिव नेवाज, सीव समान अवढर ढहन।
अवुध अधम सीरताज, नृपदलेल जाके सरन॥" —लिखा है।

२—ग्रन्थ को प्रारम्भ करते हुए भूमिका में—

"ग्वानरक में प्रेम बिहिना, ताते उनछविर्त्ति प्रिन लीन्हा।
तसुलछन मे कहो विचारी, सुनहु साधु वध प्रउपकारी॥
कृषि काटि प्रथम ले जाइ, ताप्र लेहि दीन्ह जन आइ।
तेहि पिछे पछीगन षाही, भषि भषि निज इछवा उडि जाहि॥

॥ दोहा ॥

तापाछे दीन्ह अतमै आऐ चुनही जे धान,
ऐहि बीध जे वोदर भरे उनछवीति तहिजान।

॥ चौपाई ॥

तेहि वीध राम रसानव भनी है, गुरु के कृपा सपुरन करी है।
करो प्रनाम साधु के चरन ही, जीन्ह के गुन अंन्त वुधवर नहीं ॥
तीन्ह के गुन संछेपहि भाषौ, संतत जासु कृपा अभीलाषौ।
कृपा जुगुत बर्जितसम दुषन, छेमासील नियम सत्व विभूषन ॥
समता दवा सर्व उपकारक, प्रेम······· धन पर दुषहारक।
मृदुसुधि सान्त दान्त द्युतिमाना, नीरवीकार करुना मतिसाना ॥
प्रउपकार दछ मित भोगी, सवाधान सदगुन को षोजी।
आयुष्मान मानपर दाता, अनघ अवध करयेउ विधाता ॥
समदमनी अम नीपुन समकरनी, सुषद सहीस्नु वेद बीध वरनी।
लोभ रहित स्रोता अरु वकता, हरीजन सजन भजन अनुरकता ॥
वड़े भाग मानुषतन लहइ, जो तन सुर दुरलभ सुधी कहई ॥"
लिखा है।

तुलसी से प्रभावित यह रचना है। ग्रन्थ-रचनाकाल के सम्बन्ध में राजादलेल सिंह ने एक सन्दिग्ध संकेत किया है—"नभहर मुखदिन···ऋदिग संवते संषावादीन्ह, माघ अगहन दुजसीत कथा अरंभन कीन्ह।" इससे सं० १७३० वि० अस्पष्ट रूप से सिद्ध तो होता है, किन्तु स्पष्टरूपेण नहीं कहा जा सकता है।

अपने विषय में कवि ने कहा है—"राम सीध न्रीप के तने राम भगत के दास; करनपुर पति भगयतजी कीवो रामढ़वास।" इससे सिद्ध होता है कि इनके पिताजी का नाम 'रामसिंह' था और 'राम भगता' नामक इनके गुरु थे। कुल ५८४ दोहों में ग्रन्थ समाप्त हुआ है। चौपाई, सोरठा, सवैया के अतिरिक्त निसिपालिका, मोतियदाम, परमानिका आदि विविध छन्दों के प्रयोग हुए हैं। भाषाविज्ञान के दृष्टिकोण से भी ग्रन्थ ध्येय है। श्रीपदुमनदासजी ग्रन्थकार के ही आश्रित कवि थे। उनके दो-तीन ग्रन्थ इस विवरणिका में हैं। दोनों के ग्रन्थों के प्रकाशन से 'मगही-साहित्य' पर प्रकाश पड़ने की सम्भावना है।

२—ग्रन्थ की लिपि अस्पष्ट और प्राचीन है। पृष्ठ जीर्ण-शीर्ण हैं। साथ ही यह खण्डित भी प्रतीत होता है। यह ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, मुरारपुर, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क-७०९ है।

१०३. राधासुधानिधि-सार (राधासुधानिधि की टीका)—ग्रन्थकार—×। टीकाकार—तुलसीदास। लिपिकार—×। अवस्था—जीर्ण-शीर्ण, सभी पन्ने फटे-बिखरे। कागज—पुराना तथा देशी, खण्डित। पृष्ठ-

सं०—१७१। प्र० पृ० पं० लगभग—२२। आकार—६" × ५¼"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचना-काल—× । लिपिकाल—× ।

प्रारम्भ—……"श्री सुषलाल कृपा करी दियौ मंत्र तिहिकाल ॥३॥
नवल किशोरी मोरीहित गोरी सषिहरिजीय,
कुंजरवन कृष्ना निकट कृत दै श्री सुषप्रीय ॥४॥
रौंम रौंम मैं रमिरहे हित अछर श्री सुष रूप,
श्री सुषमंडलि दीजियै बूडौचित्त रसकूप ॥५॥
तुलसी अपनी जानिकै हित सुषलई बुलाइ,
निज मंदिर की टहल मैं प्रिया चरन पर…… इ ॥६॥
………प्रियासुधा निधि श्री तहाँ तामैं दई बुडाइ ॥७॥"

मध्य की पंक्तियाँ (पृष्ठ ८०)—"(मूल) श्यामा मंडल मौलिमंडन मणिः, श्यामानुराग स्फुर द्रो-
मोद्भेद विभाविता कृति रहो काश्मीर गौर छविः ॥
साती चोन्मदकामकेलितरला मां पातु मंदस्मिता,
मंदारद्रुमकंज मंदिरगता गोविन्दभट्टेश्वरी ॥१२१॥

(भाव) ॥ दोहा ॥

श्यामा मंडल मुकुट मणि कृष्ण राग बहु भांति,
रोंम भेद अंगनि लसैं अद्भुत मूरति कांति ॥१॥
के सरिसी छवि अंग की कुंज कल्पद्रुमवेलि,
मंदस्मित सोभित रहैं अद्भुत करत सुकेलि ॥२॥"

अन्त—"अद्भुत आनंद लोभ होइ नाम सुधानिधिसार,
श्रोत्र पात्र सौंपिवो नित श्री बुधवंत विचार ॥
इति श्री मत राधा सुधानिधि भाषा सहित संपूर्ण ॥"

विषय—'राधासुधानिधि' नामक संस्कृत-ग्रन्थ का भावानुवाद (पद्यात्मक)। राधा और कृष्ण का शृंगारात्मक वर्णन। उत्तम साहित्यिक रचना। लेखक ने प्रारम्भ में अपना सम्बन्ध श्रीहितहरिवंश जी से दिखाया है और अपने-आपको उनका शिष्य अथवा उनके मन्दिर का एक साधारण दास बताया है। प्रारम्भिक अंश खण्डित होने के कारण प्रारम्भ की पंक्तियाँ पृष्ठ २ से दी गई हैं। ग्रन्थकार ने अपने को कहीं 'सुषलाल' और कहीं 'सुषराम' कहा है। २७० पदों में ग्रन्थ सम्पूर्ण है।

टिप्पणी : १—ग्रन्थ अनुसन्धेय है। यदि ग्रन्थकार प्रसिद्ध कवि

'हितहरिवंश' जी का समकालीन है, तो ग्रन्थ का महत्त्व बढ़ जाता है।

२—ग्रन्थ में रचनाकाल के सम्बन्ध में उल्लेख नहीं है। लिपि स्पष्ट और प्राचीन है। लिपिकार का नाम भी ग्रन्थ में नहीं है।

३—ग्रन्थ में यत्र-तत्र 'तुलसीदास' का नाम-स्मरण किया है—

"......अपनों दियौ सरूप तुलसी अपनी करिलई ॥
......आरत तुलसीदास कौं श्री बचननि बिसराम ॥११॥"

ग्रन्थ के प्रारम्भ में अनेक प्रकार से प्रभुस्तुतिपरक मंगलाचरण करते हुए कवि ने अपने विषय में लिखा है—

"कहा करौं रहयौ जात नहीं बाढ़ी चाह अपार,
आसा पूरण कीजियै श्री सुधानिधि करौं उचार ॥१७॥
....
....श्रवन करौं श्री सुधानिधिता मैं नित विश्राम ॥२८॥"

इस प्रकार स्तुति के बाद—"वृन्दावन हरिवंशहित ललितादिक सुष नाम,
राधा हरि सुहृदिरसिक जय जय सदा नमाम।
श्री वृंदाबन वंशहरि ललितादिक हित नाम,
राधावल्लभ लाल सुष बहुत भांति परनाम।
....
श्री हितबंस मैं प्रगट है श्री सुषलाल अनूप,
मेरे सब दुष निहनौं अद्भुत कृपा सरूप ॥३३॥"

—कवि ने अपना परिचय दिया है। किन्तु, कवि के सम्बन्ध में फिर भी तथ्य स्पष्ट नहीं होता है।[1] इस

---

१. कवि और रचना के सम्बन्ध में श्रीवेदप्रकाश गर्ग का निम्नलिखित मत विचारणीय है—'राधासुधानिधि' के स्थान पर टीका का नाम 'सुधानिधिसार' लिखना चाहिए था। टीकाकार तुलसीदास जान पड़ते हैं, 'सुषलाल' नहीं, जैसा कि अनुमान किया गया है। 'सुखलाल' तो 'तुलसीदास' के गुरु प्रतीत होते हैं।

राधावल्लभी सम्प्रदाय के 'तुलसीदास' नामक एक महानुभाव ने सं० १७७० में 'राधा सुधानिधि' की टीका बनाई भी है। यदि यह वही टीका है तो निश्चय ही टीकाकार 'तुलसीदास' हैं। प्रस्तुत विवरणिका में दिये हुए उद्धरणों से भी ऐसा ही प्रकट होता है। 'सुषलाल' के गुरु होने का अनुमान इसलिए भी होता है कि प्रस्तुत ग्रन्थ के ३३वें दोहे में लिखा गया है—

'श्री हित बस मैं प्रगट हैं, श्री सुषलाल अनूप।
मेरे सब दुष निहनौं अद्भुत कृपा सरूप ॥३३॥'

इस उद्धरण से यह प्रकट होता है कि श्री सुषलाल 'हितवंशी' थे। गो० श्रीहित-हरिवंशचन्द्र महाप्रभु के वंश में 'सुखलाल' नाम के एक महानुभाव हुए भी हैं। अतः

ग्रन्थ के तथा परिषद्-संग्रहालय में संगृहीत 'हिन्दी-महाभारत' के अनुशीलन के बाद सम्भव है कि हिन्दी-साहित्य के इतिहास में इस अपरिचित कवि का सादर नामोल्लेख हो सके।[१] कागज एकदम जीर्ण है। ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, मुरारपुर, गया में संगृहीत है। पु० क्र० सं० क-१९३ है।

१०४. कुण्डलिया—ग्रन्थकार—श्रीअग्रदास। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी; पुराना, देशी कागज, पूर्ण। पृष्ठ-सं०—१०। प्र० पृ० पं० लगभग—१८। आकार—६" × १३$\frac{1}{3}$"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"उों श्री गणेशायनमः॥
अथ कुंडलीया अगरदाश के लिख्यते॥
अगर काम हरि नाम शों संकट होत सहाय।
कोऊ काहू के नहीं देषे ठोक वजाय॥
देखे ठोक वजाय नारि पटभूषन चाहै॥
सुत नित सोषत प्रान सुत प्रछित अवगा है॥
तात मातु कर घेरि धूनित चित विगारी।
स्वात्लता के सजन दास दासी दै गारी॥१॥"

मध्य की पंक्तियाँ—"अगर अजा के स्वादतें तृपित न देष्यो कोइ।
जो दिन जाहि अनंद में जीवन को कल सोय॥
जीवन को फल शोय सदा आनंद उर धारे।
मंत्री ज्ञान विवेक असुभ अज्ञान निवारे॥
पद्म पत्र ज्यों रहे काल मे विषै पिछाने।
जगपरपंचते दूरी सत्य सीतापति जाने॥३२॥"

अन्त—"पूरव को रोवत रहे अगर सउर के चित।
कंथाडारी कांध पर जोगी काको मीत॥
जोगी काको मीत हंस तजि चलो सरीरे।
निरमोही अति निठुर कहां जाने परि पीरे॥

यह अनुमान ठीक जान पड़ता है। किन्तु, जबतक विशेष परिचय न प्राप्त हो जाय तबतक दृढ़तापूर्वक इससे अधिक और कुछ नहीं कहा जा सकता। 'तुलसीदास' का अभी विशेष परिचय नहीं प्राप्त हुआ है।

दे०—'व्रजभारती', वर्ष १५, अंक २, भाद्रपद २०१४ वि०, पृ० सं० ७६-७७।

१. श्रीवेदप्रकाश गर्ग के मतानुसार विवरण में संशोधन-परिवर्द्धन कर दिया गया है।—सं०।

मायाधुनि मुकचल्यौ रावल चौरासी।
जहां जाइ तहँ कुटुंव केरि नहि बहिपुर आसी ॥६९॥"

विषय—जीवन, मृत्यु, मोक्ष, हरिभजन आदि का दार्शनिक विवेचन। भजन के सम्बन्ध में—

"अमर भजन आतुर करो जौं लौं यातन स्वांस।
नदी किनारे रूष को तव तव होइ विनास॥
जवतव होइ विनास देह कागज की छागर।
आयु घटत दिनरात सदा यामै को आगर॥
जरा जोर वर स्नान प्रान को काल सी कारी...... ।"
(नदी-तट के वृक्ष के समान जीवन सदा मृत्यु के निकट है।)

और देखिए—"अगर स्याम अनुराग दिन नही धर्म का लेस,
जैसे कंता घर रह्यौ तैसे गये विदेस।
तैसे गये विदेस लोक परलोक न शाध्यौ.........॥"

इस प्रकार—'हरि लीला रसपान मत्त निर्भय गुन गान'
और "प्रीतम वातन पूछइ धरयौ सोहागिनि नाम।
धरयौ सोहागिनि नाम विषै कुटनी वहकावै......"
आदि में दार्शनिक पुट है।

टिप्पणी : ग्रन्थ प्रसिद्ध कवि अग्रदास जी का है। इनकी 'ध्यानमंजरी' भी उपलब्ध हुई है। ग्रन्थ की लिपि स्पष्ट और प्राचीन है। ग्रन्थ खण्डित होने के कारण 'पुष्पिका' नहीं है। रचनाकाल का भी संकेत इसलिए नहीं मिलता है। ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, मुरारपुर, गया में संगृहीत है। पु० क्र० सं० क-१७ है।

१०४. **हरिचरित्र**—ग्रन्थकार—श्रीलालचदास। लिपिकार—परेखुराय। अवस्था—प्राचीन, देशी, मोटा कागज, सचित्र, पूर्ण। पृष्ठ-सं०—१९०। प्र० पृ० पं० लगभग—४०। आकार—९"×१२"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—आषाढ़-शुक्ल, सं० १५२७ वि० (सन् १४७० ई०)। लिपिकाल—चैत्र-कृष्ण त्रयोदशी, शुक्रवार, सं० १८४९ वि० (१७९२ ई०)।

प्रारम्भ—"स्री सुरसती माताजी सहाए स्री राधेकीस्नजी सहाए स्री दुरगादेवीजी सहाए स्री तेतीस कोटी देवाजी स्री पोथी भागवंतजी

चौपाइ

प्रथम ही चरन चीतवो ताके, सरवलोक वोदरवस जाके।
गनपत को मै चवन मनावो, सुरस कथा गोपाल गुनगावो।

प्रथम पिताम्ह स्री……उपाय, तुह प्रसाद गननाथ गोसाइ ॥
संकर सुमीरी दंडवत कीन्हा, भस्म चढाऐ चीतवन कीन्हा ॥
जटा मुकुट सीव सदा उदासी, गुरु प्रसाद पावो अभीनासी।
उतपती प्रलै जाही सो होइ, गढै सवारे भंजै सोइ ॥
स्रवभुत के अंत्रजामी, ते हीते बरनो तो कह सामी।
वीघीनी हरन संतन्ह सुखदाइ, चरन गहै लालच हलु आइ ॥

दोहा

कोटि अंड उपराजहु, छीनमौ करौ संघार।
लखीन जाए लंवोदर, माआ को वीस्तार ॥

चौपाइ

अवसारद को वंदौ पाआ, गुन अतीत जग मोह्नी माआ।
तुमते वेद प्रभा अनुसारा, तुहते वुधीजन करही……… ॥
तुम्हते नारदादी गुन गावही, गंन गंध्रव तुम्ह चरन मनावही।
नंदवेद वीदवा मन राता, गावत ही वुधीजन की माता ॥
केस छोरी वंदौ तुअ पाआ, हमहु कह किछु कीजै दाआ।
वुध वीहुन मै हरी गुन गावो, करहु प्रसाद मैं अछर पावो ॥

दोहा

भरत हेतु जन लालच, हरखीत वंदौ पाऐ।
स्री गोपाल गुन गावो, वुधी दे सारद भाऐ ॥"

मध्य की पंक्तियाँ—

दोहा

"स्कल कामना पुरी कै, भरती करही मन लाऐ।
जन लालच के स्वामी, वासुदेव ग्रीह जाए ॥

चौपाइ

कबहु के चले उधौ संगलाइ, चले कीस्न अं.....र ग्रीह जाइ।
प्रम हर्खे अंकुर ही भऐउ, दुइकर जोरी कै दंडवत कीऐउ ॥
धुपदीप आरती लैगे आइ, अवसनाथ मै ऐउ गोसाइ।
वहुत क्रीपा इहवा चली आए, गृह पवीत्र भौ दरस देखाऐ ॥
बहुत पकवान तुरंत लेइ आऐ, तेल सुगंध लेपन कीहु जाऐ।
अस्तुती भगती जोग लै कीऐउ, गद गद बहुत आनंदीत भऐउ ॥
कौन कारज अस पूछन लागे,…………………………………….।
……………………………………………………………………॥"

अन्त—"ऐही जकरतौ पुत्र न मीला, नारायन के दरसन मीला।
भुइ कर भार उतारन गऐउ, माआ मोलीपीतहोऐ रहेउ ॥

अब जदुवंस बहुत भौउ, जाके मारन धरती समाउ।
सरग सुनहै वेगी तुम्ह आवहु, प्रीथी पती वीलंबु न लाबहु॥

दोहा

प्रभु बालक उन्ह सौपा, पालै आगेजदुराऐ।
दीन्ह पुत्र वीप्रकह अव उन्ह सोक नसाऐ॥

ऐती स्री हरीचरीत्रे दसम सकंधे श्री भागवंते महा पुराने स्री गपुत्र प्रसादनो नाम छेआनवे मो अध्याऐः ९६ ऐती स्री पोथी भागवत कथा क्रीतलालच आसानंद के संपुरन जो पोथी मो देखा सो लीखा मम दोख नदी अते॥"

विषय—भागवत भाषा (दशम स्कन्ध) श्रीकृष्णजी का जीवन-चरित्र। छ अध्याओं में भागवत महापुराण के आधार पर रचना। अवधी भाषा और दोहे-चौपाइयों में, १९० पृष्ठों में समाप्त।

टिप्पणी : १—यह ग्रन्थ श्रीलालचदासजी-कृत हरिचरित्र है। ग्रन्थकार की मात्र नामचर्चा 'शिवसिंह-सरोज' और 'मिश्र-बन्धुविनोद' में हुई है। नागरी-प्रचारिणी सभा की खोज में भी इनके दो-तीन हस्तलिखित ग्रन्थ उपलब्ध हुए हैं। बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के संग्रहालय में इनके तीन ग्रन्थ सुरक्षित हैं। इनकी रचना पर देखिए—'साहित्य', वर्ष १, अंक १, ग्रन्थ-सं० ४। यह ग्रन्थ और कवि अनुसन्धेय हैं। ग्रन्थकार ने ग्रन्थ-रचनाकाल के सम्बन्ध में लिखा है—"संवत् पन्द्रह सै सत्ताइस जव ही"। इससे स्पष्ट है कि सं० १५२७ वि० (सन् १४७० ई०) में ग्रन्थ-रचना हुई है। नागरी-प्रचारिणी सभा की खोज में उपलब्ध पोथी न तो इतनी प्राचीन है और न सम्पूर्ण। इस रचना पर पर्याप्त शोध हो रहा है। नई-नई सूचनाएँ भी मिली हैं। इसके चौबीस अध्यायों का प्रथम खण्ड बि० रा० भा० परिषद्, पटना से प्रकाशित हो चुका है।

२—ग्रन्थ की लिपि प्राचीन और अस्पष्ट है। लिपिकार ने ग्रन्थ की पुष्पिका में लिखा है—

"पंडित जन सो वीन्ती मोरी टुटल अछर लेव सव जोरी॥
ली० संवत् १८४९ साल मीती वै जेठ वदी तीरोदसी रोज सुख को लीखा दसखत.............परेकुराय रजपुत...............। जो कोइ पोथी पढ़े तीस को राम राम औ ब्रांभन। पोथी लीखाआ लाला केदार नाथजी मालीक पोथी के॥

दोहा

भला बुरा जो हम लीखा, हंसी करोमत कोऐ।
अछर मंत्रा सवाटीकै, पढै सो चातुर होऐ।"

३—ग्रन्थ में, ग्रन्थ के विषय से सम्बन्धित १२६ (एक सौ छब्बीस) भावपूर्ण, कलात्मक चित्र भी दिये हुए हैं। लिपिकार ने प्रत्येक पृष्ठ में 'हाशिया' छोड़कर लिखा है। ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, मुरारपुर, गया में संगृहीत है। पु० क्र० सं० क-१४७ है।

१०६. विष्णुपुराण—ग्रन्थ—श्री लालचदास। लिपिकार—×। अवस्था—प्राचीन, देशी कागज, मोटा, खण्डित। पृष्ठ-सं०—१७। प्र० पृ० पं० लगभग—४०। आकार—१०″×१३″। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"स्री गनेसजी सहाऐः। स्री भवानीजी सहाऐः। स्री कीश्नजी सहाऐ॥ पोथी बीश्न पुरानः॥

प्रनौ देवबीप्र गुरु पाउ, जीन्ह प्रसाद उती भगती पाउ।
प्रनौ गनपती गौरी गनेसा, जीन्ह मोही बीदवा दीन्ह उपदेशा॥
प्रनौ सुरसती अंम्रीतवानी, जासु परताप प्रभु चरीत्र बखानी।
रीखी सुखदेव ही पुछै भुआला, कहौ चरीत्र कछु प्रभु वेहवारा॥
कैसे सतजुग त्रेता भऐउ, कैसे दवापर कलीजुग भऐउ।
कैसे चांद सुरज औतारा, कैसे पानी पवन अनुसारा॥

दोहा

चांद सुरज तारागन, सो मोही कहहु वुझाऐ।
जेही पती आऐ मोरे मन, सोरीखी कहौ समुझाऐ॥"

मध्य की पंक्तियाँ (पृष्ठ ८)— दोहा

"दान पुन्य सत सुक्रीत, ध्रमकथा नही भाउ।
पाप कपट कली दारुन, सुनहु दुधीष्ठर राउ॥"
....।

अन्त—"कीश्न जन्म औ रानी हौ जाइ, देवकी ग्रभ औतरी हौ आइ।
लछुमन वलीभद्र औतारा, मैं जो कहावो कीश्न कुमारा॥
तव मैं वैरदेवपरचारी, मीथ्या होऐ न वचन हमारी।
तुम्ह व्याधा में जन्महु आइ, जी अते प्रान लेहु मुकताइ॥
जैही वंन मारा है पीता तोहारा, तुम्ह कर चली है वान हमारा॥

दोहा

चांद सुरज हही साखी, कहौ वचन प्रवान
तेजे तनी भाखा तोसौ, सोतजी हो न आन्॥"

विषय—विष्णुपुराण के दशम स्कन्ध के आधार पर, कृष्ण-बाललीला-वर्णन तथा कृष्ण-जीवन के विभिन्न अंगों पर प्रकाश। चारो युगों के कारण, उन युगों के भिन्न-भिन्न कर्मों तथा उनके फल आदि का विवेचन।

टिप्पणी : १—यह ग्रन्थ भी श्रीलालचदासजी-कृत है। ग्रन्थ खण्डित होने के कारण ग्रन्थकार के नाम आदि की चर्चा तो नहीं है, किन्तु ग्रन्थशैली, पूर्व ग्रन्थ के ही समान है। इसकी एक प्रति परिषद् के संग्रहालय में भी सुरक्षित है।

२—ग्रन्थ में लिपिकार का नाम नहीं है, किन्तु ग्रन्थ की लिपि आदि पूर्व ग्रन्थ के समान ही है। ग्रन्थ में विषयानुकूल चित्र भी दिये हुए हैं। ग्रन्थ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, मुरारपुर, गया में संगृहीत है। पु० क्र० सं० प-१४८ है।

श्रीचैतन्य पुस्तकालय, गायघाट, पटना सिटी के संग्रहालय की पोथियाँ

१०७. (१) **कालयवनकथा**-ग्रन्थकार—×। लिपिकार—×। अवस्था—प्राचीन, देशी कागज। पृष्ठ-सं०—२। प्र० पृ० पं० लगभग—२४। आकार-प्रकार—५$\frac{1}{8}$" × १२"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचना-काल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"श्री हरये नमः॥ श्री शुकदेव जी बोले हे! राजन् श्री कृस्नचन्द्र काल यमन के मधुपुरी में आवत मात्र ही सव यदुवंशीनकू मधुपुरी तें द्वारका भेज देत भये और काल यमन कू स्वयं युद्ध द्वारा नहीं वध करके मुचकुंद की दृष्टि द्वारा भस्मकरवत भये याको दो गुप्त कारण और वी है सो मैं तोसूं कह दऊं हूं (१) मतो महादेव को वरदान सत्यकरनो हो (२) यकालयमन ब्रह्मण के वीर्य्य से उत्पन्न होतासूं स्वयं वध नहीं कीनो तब तो राजा परिक्षित बोलो महाराज या कथाकू विस्तारसूं वर्णन करिये क्यौं के ब्राह्मण के वीर्य्य ते यमन उत्पन्न होय यह बड़ो आश्चर्य्य है श्री शुकदेवजी बोले हे राजन् एक दिन यदुवंशीन की सभा में गर्ग मुनि बैठे हे वासमय...... ।"

मध्य की पंक्तियाँ (पृ० सं० २)—

"तव तो गर्गाचार्य्य प्रशन्न होय के शम्भुदत्त फलकू राजा तालजंघ की बड़ी स्त्री कू देयके वाके संग रमण करके वीर्य्यदान करते भये किन्तु ईश्वर इच्छातें वा समय राजपत्नीने सपत्नीन के भयतें शीघ्रता में विना स्नान किये वा फलकू भक्षन कर लीनो तब तो गर्गमुनि बोले के हे! राजा तालजंघ पुत्र तो तोकू निस्संदेह वडो प्रतापी उत्पन्न होयगो किन्तु तेरी स्त्री ने अनाचार कीनो है तासूं वा बालक कोम्लेच्छवत आचरण रहै गो यह कह के गर्ग महाराज तो अपने आश्रम कू पधारे और प्रसूतिकाल प्राप्त भयेतें राजा तालजंघ की स्त्री के गर्भतें कालयमन उत्पन्न भयो.......... ।"

अन्त—"तब तो गर्ग मुनित्रोले के हे ! राजा तालजंघ पुत्र तो तोकू निस्संदेह वडो प्रतापी उत्पन्न होयगो किन्तु तेरी स्त्रीने अनाचार कीनो है तासूं वा बालक को म्लेच्छवत आचरण रहै गो यह कहके गर्ग महाराज तो अपने आश्रयकू पधारे और प्रसूति काल प्राप्त भयेतें राजा तालजंघ की स्त्री के गर्भतें काल यमन उत्पन्न भयो परन्तु बाल्यावस्थाईतें वाके सवरे आचरण म्लेच्छ के से होत भये किन्तु विप्रवीर्य्यते उत्पन्न हो तासूं श्री कृस्नचंद्रने वाको निजकरतें वध नहीं कियो और शिववाक्य सत्य करने के लिये सवरे यदुवंशी नहीं सहित आप भाजत भये इति यह गुप्त हेतु सुन के राजा परीक्षित को संदेह दूर होय गयो इति श्री इतिहास समुच्चयने। क्तम् दशमें एक पंचाशत्तमोध्यायः ५१"

विषय—जीवन-चरित्र।

टिप्पणी : यह ग्रन्थ भाषा-गद्य में लिखा हुआ है। इसकी भाषा प्राचीन कथा-शैली में है। इसके लिपिकार ने 'ब' और 'व' के लिए 'व' का ही प्रयोग किया है। ग्रन्थ के अन्त में "इतिहाससमुच्चयेनोक्तम् दशमे एक पंचाशत्तमोध्यायः ५१" ऐसा लिखा है। अतः यह ग्रन्थ अपूर्ण है। यह महाभारतान्तर्गत राजा परीक्षित और श्रीशुकदेव जी के संवाद का भाषाबद्ध गद्यकाव्य है। इसमें ग्रन्थकार ने कालयमन के जन्म-प्रसंग का उल्लेख किया है।

यह पोथी श्रीचैतन्य पुस्तकालय, गायघाट, पटना–७ में सुरक्षित है। यह पुस्तक पुस्तकालय की जिल्द–०८ में है और इसकी ग्रन्थ-सं० ४३ है।

१०८. (२) **पंचाध्यायी**—ग्रन्थकार—श्रीसुन्दरलाल गोस्वामी। लिपिकार—श्रीराधालाल गोस्वामी। अवस्था—प्राचीन, हाथ का बना मोटा कागज। पृष्ठ-सं० २९। प्र० पृ० पं० लगभग—१८। आकार-प्रकार ५½" × १२"। भाषा—संस्कृत-हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—सं० १९५४ वि०।

प्रारम्भ—"श्री श्रीराधारमणे विजयतेतराम् अथ श्री रासलीला वराध्यते तरयां श्रवण फल माह बिना भागवतं शास्त्रं नैव भक्तिर्नृणां भवेत् ग्रंथोऽष्टा दशसाहस्त्रं श्री हरेरंगमुच्यते १. गौरीतंत्रे पादै यदीयौ प्रथम द्वितीयौ तृतीय तूर्य्यौ कथितौ यदूरुः नाभिस्त तथा पञ्चमएव षष्ठौ भुजांतरं दोर्युगलं तथा द्वौ २. कणठस्तु राजन्नवमोयदीयो मुखारविंदं दशम प्रफुल्लं एकादशं भाल किरीटजुष्ट शिरस्तु यद्वादशमे विभाति ३. तमादि देवं करुणानिधानं तमालवर्नं सुहितावतारं ऊपारसंसारसमुद्रहेतुं भजामहे भागवत स्वरूपम् ४ तत्र श्री दशम श्रेष्ठ तत्र गोकुलके लयः तत्रेव

श्री रासलीला गोपिका गीतकास्ततः ५. तन्नाटवीतिपद्यंतु प्रोच्यते परमं पदम् तत्रैव चरमश्लोकः प्रेम निर्व्यास रूपकः ६. अथपञ्चमिरध्यायैः पंच प्राणसमर्मुनिः रासंप्राह हरेः सर्वलीलासंपत्तिसरोमणि ७. भावार्थ श्री रास के शरंम में श्री वादरायणिहवाच अैसो पाठ कह्यौ ताको कहा प्रयोजन है तत्राह वदरीणां समूहो वादंर तद्वादरं अयनं यस्याऽसौ वादरायणे व्यासः तस्यापत्यं पुमान् वादरायणि शुकेति पाठे अन्यत्र दशभिवर्षैयत्पुण्य मुपलभ्यते मनुजैरेकरात्रेण वासाद्वदरिकाश्रमे ८. भाषा वद्रिकाश्रम में जो तप कीनो ताको फलरूप होय के प्रघटो है तातें सर्वज्ञत्व श्री भागवत प्रेम रसमयत्व ये दोनों गुण श्री शुकदेव जी में नित्यसिद्ध है यो दिखायो अथवा जो भागवत प्रेम तैं कहै है ते वी शुकदेव जी करके जाननो किं कुर्वन् प्राच्या ककुभः मुखंकरैर्विलपन् या में कहा ध्वनि निकसी अश्विनी भरणी सूं आदि लैके सत्ताइस रानीनकू संग वीलायो है तापेहू मन नाय मानैं इन्द्र की स्त्री पूर्व दिशा ताके मुख में अपनी किरणन रूपी हाथ सूं अरुण कुंकुम केशर सौं तिलक श्रृंगार. वनाय के अपनी ओर अनुरागवती करैं है दीर्घ दर्शनः याको भाव ये है चंद्रमा कहै है हे प्यारी मावस्या कूं तो मैं मरोंईहौं न जाने तेरे ई भागनते प्राण वगद आयो..................''

अन्त—''जव गोपी मन में पछतांई हमारी वरोवर मंद भागी कोऊ नहीं है तब ध्यान में श्री कृष्ण आए और दिव्य देहते गोपी कृस्न निकुंज में पधारे परन्तु काऊकू खवर न पड़ी ॥ जैसे देवता सवकू देखैं है परन्तु देवताकू कोई नहीं देखैं है ॥ अथवा ॥ जैसे वासुदेवजी ने श्री कृष्णकू कारागार में तें लेके गोकुल में पहुँचाय गये और काऊकू खवर न पड़ी ॥ कारण । श्रीकृष्ण की आज्ञा तें योगमाया ने सवकू मोहित कर दिये हैं। जव कोठे में किवार खो..............''

विषय—श्रीकृष्ण-जीवन-चरित्र-काव्य । कृष्ण-रासलीला-वर्णन । ब्रह्मसंहिता, भागवत की भाषा-टीका तथा ग्रन्थ के आधार पर कहीं-कहीं कवित्त, सवैये और दोहे में स्वतन्त्र रचना । ग्रन्थ में हिन्दी में जहाँ भी काव्य-रचना की गई है, उसमें मौलिकता और अलंकार, भाषा की दृष्टि से सौमनस्य का समावेश है ।

टिप्पणी—यह पोथी अपूर्ण है। यह श्रीमद्भागवत की 'रास पंचाध्यायी' की टीका व्रजभाषा में है तथा उसके आधार पर कहीं-कहीं ग्रन्थकार की अपनी पद्य-रचना भी है। भाषा-माधुर्य प्रशंसनीय है। जैसे पृष्ठ-सं० १८ में—'रूप को उजागर, रस को सागर, गुणन को आगर, नट-नागर, जो चलो सोई लताजो, झुरमुट खाय रहीं हीं तिनके बीच में होयके मुकुटकूं बचावत काछनी सभारत चहुंदिशि निहारत पटकाके दोऊ छोर पकडत चटकत मटकत लतानकूं झटकत पतालकूं पटकत डारनसूं

अटकत लटकत भूलत भटकत झुकत झूमत बैठत उठत झट्टपट्ट झपाके सूं वृंदावन वीच आय जमुना के तट पै धीर समीर के तीर निकट तट-वंशी वट पै…………।" और पृष्ठ-सं० ९ में—"कवित्त, पेडन की पंगत में पक्षिन की संत में वागन की रंगत और फूलन की डालाहोंय चन्दन गुलाब खस केवडा सो सींचे चौक चौहाटे चौराहे हीरा मोतिन के जाला होंय जरी तासवाद लेके वस्त्रहु अनेक भांति रतन जटित गहेनें औ मोतीमाला होंय हीरन जटित कुञ्ज मोतिन के मन्दिर की मंडली सहित ही विचित्र चित्रसाला होंय ?"

पोथी अपूर्ण होने के कारण ग्रन्थकार और लिपिकार के नाम का पोथी में संकेत नहीं है, किन्तु पुस्तकालय के अधिष्ठाता श्रीकृष्ण चैतन्य गोस्वामीजी ने उपर्युक्त नाम बताया—लिपिकार श्रीराधालाल गोस्वामीजी इनके पिता और पुस्तकालय के संस्थापक थे। पुस्तकालय के अधिष्ठाता श्रीकृष्ण चैतन्य गोस्वामीजी से यह भी ज्ञान हुआ कि इस पोथी की मूल लिपि, जो ग्रन्थकार की स्वयं लिखी हुई है, वृन्दावन में श्रीराधारमणजी के घेरे में स्थित मन्दिर के पुस्तकालय में है और पूर्ण है। यह पोथी श्रीचैतन्य पुस्तकालय में सुरक्षित है—जिल्द ८ में, सं० ४६ है।

१०९. (३) पञ्चाध्यायी—ग्रन्थकार—पण्डित नन्दकिशोरजी। लिपिकार—×। अवस्था—प्राचीन; मोटा, हाथ का बना, देशी कागज। पृष्ठ-सं०—१४। प्र० पृ० पं० लगभग—१८। आकार-प्रकार—५½"×१३"। भाषा—संस्कृत, हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"श्री गणेशाय नमः अथ पचभिरध्यायैः पंच प्राणसमैर्मुनिः रासं प्राह हरेः सर्वलीला संपत् शिरोमणि। श्री रासके प्रारम्भमै श्री वादरायणिरुवाच ऐसो पाठ कह्यो ताको प्रयोजन कहा है सूतजी शौनक ऋषिते॥ वदरीणां समूहोवादरं। वदरी खंडमंडितेति। प्रथमोक्तेः तत्वादरं अयनं आश्रयो यस्यासौ वादरायणो व्यासः। तस्यापत्यं वादरायणि शुकेति ततश्च अन्यत्र दशभिर्वर्षैं यत्पुण्यमुपलम्यते मनुजैरेकरात्रेणावासाद्वदरिकाश्रमे इति पाद्मे।

वद्रिकाश्रम मैं जो वासकियो ताते वादरायण नाम विख्यात भयो। तहां बहुत काल रहे तप कियो सो श्रीकृष्न को आराधन रूपी तप कियो ताको पुण्य को पुंज वडो सोफल शुकदेव रूप होय कै प्रगटो तातें सर्वज्ञत्व श्री भागवत प्रेम रसमयत्व दोउ गुण शुकदेवजी मैं नित्यसिद्ध है ये दिखायो जैसे शुकदेवजी ने कही है राशकथा तैसे हीं और वक्ता प्रेम हीं सों कहै सब श्रोता हु प्रेम ते सुनै। यद्वा। श्री कृष्ण की

रहस्य लीला रास गदिता कौवरण करै तौ अपने इष्टदेव कौ अपराध होय नवरण न करै तौ ज्ञानवंचकता दोष लगै उभयतो पाशारज्जू न्याय है दोनौ ओर ते चिंता भई तव शुकदेव जी ने पिता को ध्यान धरो है…"

मध्य की पंक्तियाँ—"यद्वा श्रीमद्भागवत श्री कृष्णचन्द्र को देह है ता मैं रासपंचाध्यायी पाँचों प्राण है ताहू मैं अंत को श्लोक सुषमना नाडी है यातें सुजातचर्णाम्बु रूह स्तनेषु० इत्यादि श्री भागवत कृष्ण को देह हैं सो कहाँ लिख्यौ है सो सुनौ तंत्रे हर गौरी सँवादे। पादौ यदीयौ प्रथम द्वितीयौ तृतीय तूर्य्यौ कथितौ यदूरू नाभिस्तथा पंचम एवं षष्ठो भुजातरं दोर्युगलं तथा द्वौ कंठस्तु राजभवमो यदीयौ मुखारविंद दशम प्रफुल्लं एकादशं भाल किरीट जुष्टं शिरस्तु यद्वादशमेव भाती तमादि देवकरुणानिधानं तमालवर्णं सुहृदावतारं अपार संसार समुद्र हेतुं भजामहे भागवत स्वरूप इति। अव श्री शुकदेवजी वर्णन करे हैं भगवानपि ता रात्रा शरदोत्फुल्ल मल्लिका वीक्षरंतु मनश्चक्रे-योगमाया मुपाश्रितः १ हे राजन् पर्म आश्चर्य्य तौ देख्यौ भगवान हू रमण करिवे कूंमन करत भये राजा वोल्यो हे ब्रह्मन् श्रीकृष्णचंद्र के अनेक नाम हैं दामोदर व्रजचंद्र विहारी, मुरारी मुर्लीधर, गोविंद गिरधारी अैसे नाम छाडि कै पर्म माधुर्य्य रसयी रासलीला को प्रारम्भ मैं ईश्वर संमंधी भगवान ये बूढो नाम क्यौं कह्यौ तव मुनि बोले भगो भाग्यं तद्वानपि नंद पुत्रत्वात् वात्सल्यरसावलंवनात् नंद यशोदाभ्यां लाल्यमान-त्वात् सकल सुख पूर्ण यियिरंतु मनश्चक्रे इत्याश्चर्य्य पूर्ण कामोपि भगः श्री काम महात्म्य वीर्य्ययन्नाऽक कीर्तिपु इति विश्व को शात् वदंति तत्वविदेति भगवानपि षडैश्वर्य—पृष्ठ-सं० ९ संपन्नोपि ……"

अन्त—"ब्रह्म संहिता में लिख्यो है वंशी प्रिय सखीतिच वंशी वडी प्यारी सखी है तव तौ फैंट मैंतो वंशीरूपी योगमाया निकासि कै छाती तैं लगाई फेर आखिन मैं लगाई फेर मुख मैं लगाई कभूचूवैं कभू वाटैं प्यार करैं फेर वंशी के कान मैं कहवे लगे हे वंशी प्यारी जगत मैं कोई मानैं देवि वराही देई और मैनें तो जन्मते एक तूही कूं से यौ अधरामृतप्यायो हाथ रूपी पलका पै सुवाइ नीचे को होठ विछौंना कीनो ऊपर को होठ वोढना कीनो उगलीन ने तेरे पावन की पगचर्या कीनी आठ पहरछाती पैराखी अव आज एक मेरौ काज है तातैं अैसी वाजि सोसव नव किशोरी चली आवैं तव तेरी कीमत जानूगो इतनी कही कै श्री कृष्ण ने जो ऊधर पै धरी सोई वंशी अैसी बाजी सो वंशी के वाजत ही जो गोपी कवहू उठि कि कै नहीं देखें श्री तिनहूं कूं अैसी खलवली परी जो काम काज छोडि कै दौरी भई चली आई हैं अैसी योजीन की सीमा या जो वंशी ने

कीनी ताही तें श्री शुकदेवजी वने वंशी कूं योगमाया कही है। औरहू या पद के अर्थ बहुत हैं कहाँ तो लीक हैंगे ॥ शुभंमस्तु ॥"

विषय—श्रीकृष्ण-जीवन-चरित्र-काव्य। कृष्ण के रासलीला-सम्बन्धी भागवत के अंश का भाषानुवाद और उसकी दार्शनिक व्याख्या।

टिप्पणी : यह पोथी पूर्ण है। पोथी में व्रजभाषा-गद्य का प्रयोग है। भागवतान्तर्गत 'रासपंचाध्यायी' की भी भाषा-टीका है। टीका के साथ स्थान-स्थान पर स्वतन्त्र दार्शनिक विवेचन भी है। पोथी में 'व' और 'ब' के लिए केवल 'व' का ही प्रयोग है। साथ ही 'ड' और 'ढ' के नीचे विन्दु भी नहीं दिया गया है। पोथ श्रीचैतन्य पुस्तकालय, गायघाट, पटना में सुरक्षित है। पुस्तकालय-जि० ८, पु० सं० ४७ है।

११०. (४) नन्दोत्सव—ग्रन्थकार—श्रीप्यारेलाल। लिपिकार—×। अवस्था—प्राचीन, देशी कागज। पृष्ठ-सं०—३७। प्र० पृ० पं० लगभग—१८। आकार-प्रकार—५$\frac{1}{3}$" × १३"। भाषा—संस्कृत, हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"श्री गणेशाय नमः श्री राधाकृष्णाभ्यां नमो नमः नंदोत्सवोयं तहा मूलमै श्री शुक उवाच क्यों कह्यौ ऋषिरुवाच वादरायणिरुवाच ऐसे क्यों नहीं कह्यौ तहां हेतु है कै ऋषितप सौ देषै है और वादरायण व्यास को नाम है वदरिका श्रम मै तपो भूमि मैं अपन निवास स्थान जिनको ताते वादरायण तिनके पुत्र वादरायणि इसहू वात से पिता के तप सूं नंदोत्सव को दरसन आयो कछु प्रम अनदोत्सव को दरसन न पायो तहा श्री शुकदेव जी वृजराज के आंगण में जाइ जमलार्जुन वृक्षण पर बैठि शुक को रूप धारण करि प्रत्यक्ष नंदोत्सवदेव्यो तातें वादरायणिरुवाच और ऋषिरुवाच ना कह्यो श्री शुक उवाच ऐसोई कह्यो अथवा एक तौ पठ्यो भयो तोता श्री राधाकृष्ण श्री रामकृष्ण कहि कै चित्त चौरै और एक वगैर पठ्यो भयौ टे टे करि कै कान कोरै। यामै श्री शुकदेव जू पठे भए तो ताहै मामे वाङ्माधुर्य मनोहरत्व आयो ततें शुक उवा एसोई कह्यौ अथवा।"

मध्य की पंक्तियाँ (पृष्ठ-सं० २०)—

"श्लोक गावः हुं हुं प्रकृत्वा सुललित गत्या पुच्छ गुच्छो छ्यंत्यः वाद्यन्घंटागलस्था सुललित स्वरा चालयंत्यः प्रशस्तैः रागैर्नाना विहारै ह ह हः ह ह हः प्राङ्गणे छोलयंत्यः नाना गत्यानुसारै र्व्रजयति भवने नेर्पयंत्यो विरेजुः इति या प्रकार जितेक गऊ हैं ते ते आनंद मे मग्न होती भई श्री शुकदेव जू वोले हे राजन् जहाँ पशून कूं ये आनंद प्राप्त भयो है तहाँ के मनुष्यन की आनंद की दशा का पै

वर्णन करी जायगी अव तो नंद महर ने वडी भीड देखि के विचार की नोके............."

अन्त—"यद्वा हे नृपः त्वंतु राजा अतः महती सोभा दृष्ट्वा किन्नु इ यं पश्य मेघ सदृशोनंदो भूरीति ॥ मेघो जलवृष्टिं करोति ॥ नंदोधनं वृष्टिं करोति ॥ घने गर्जनं करोति ॥ नंदस्य गृहे सूतमागधवंदीनांशव्दो भवेत् ॥ मेघे एकैवतडिद्भवति ॥ अस्मिंस्थाने कोप्यः गोप्यतडिद्भवति ॥ मेघं दृष्ट्वा वर्हि आनंद शव्दं कुर्वंति ॥ नंदं दृष्ट्वा उपजीविनः शव्दं कुर्वंति ॥ मेघो दुःखनाशको भवति ॥ नंद सर्वेषां दारिद्रतारूप दुःखनाशको भवति ॥ मेघे वर्षतिसति बहुनद्यः वहंति ॥ नंदालये दधिदुग्धादीनां वहुवेगा नद्यो वहंति ॥ मेघे वर्षति सति मयूरा उल्लासयंति ॥ अत्र श्रीकृष्णरूपवर्षायां माधुर्योपासक गोपांगनानां हृत्समुद्रोल्लासं भवेत् ॥ मेघे वर्षति सतिभूमि हरिता भवति ॥ अत्र सर्वेषां भक्तजनानां चित्तहरितो भवेत् ॥ घने वर्षति सतितमालो प्रफुल्लित भवति ॥ अत्र कृष्णतमालः ॥ अर्कतापे जनास्तमालमाश्रयं कुर्वंति ॥ अत्र भक्तजनाः संसारतापनाशाय कृष्णतमालयाश्रयं कुर्वंति तिप्रलापे ॥"

विषय—श्रीकृष्ण-जीवन-चरित्र-काव्य। श्रीकृष्ण-जन्मकालीन जातकर्म संस्कार और जन्मोत्सव का विशद वर्णन।

टिप्पणी : पुराणान्तर्गत कृष्ण-काव्य के आधार पर रचित ग्रन्थ की भाषा-टीका एवं स्थान-स्थान पर दार्शनिक विवेचन। ग्रन्थ में व्रजभाषा का प्रयोग है। ग्रन्थकार ने दोहे, कवित्त आदि में स्वतन्त्र रचना भी की है। जैसे—पृ०-सं० २० में—

दोहा

"व्रजवासी टेरत फिरै कोऊ वन जनि जाय।
नंदराय घर सुत भयो देहु वधाई आय॥"

पोथी सुपठ्य और अनुसन्धेय है। पोथी के प्रारम्भ या अन्त में ग्रन्थकार या लिपिकार के नाम का उल्लेख नहीं है, किन्तु पोथी के मध्य पृष्ठ-सं० ३ में—

"देखि धाई नन्द को पड़े यशोदा पाय
कहै प्यारेलाल को नेंक हमें दिखाय।"

लिखा है। इससे प्रतीत होता है, कोई 'प्यारेलालजी' ही इस पोथी के ग्रन्थकार हैं। ग्रन्थ की गद्यभाषा व्रजभाषा से तो प्रभावित है ही, कहीं-कहीं राजस्थानी का भी प्रभाव है। यह पोथी श्रीचैतन्य पुस्तकालय, गायघाट, पटना सिटी में सुरक्षित है। इस ग्रन्थ की पुस्तकालय-जिल्द ८ में, सं० ४८ है।

१११. (५) नन्दोत्सव–ग्रन्थकार—श्रीरामलाल गोस्वामी। लिपिकार–श्रीरामलाल गोस्वामी। अवस्था—प्राचीन; देशी कागज। पृष्ठ-सं०—१८। प्र० पृ० पं० लगभग—२०। आकार-प्रकार—५½" × १३¼"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"श्री राधारमणो जयति ॥ अव श्री दशम स्कंध की पंचमीऽध्याय में श्री शुकदेवजी नंदोत्सकूं अठारह श्लोक द्वारा प्रारम्भ करै है जो कहौ पाचईऽध्याय में क्यों कहौ तहा कहै है कि जो उत्तम वस्तु होय है सो पांच पंच की सलाहतें होयं है सो यहां पाचई अध्याय मानों पंच है याते कहयौ अथवा यह पंचतत्व को देह है याते पांचई अध्याय नहीं मानौ पंचतत्व कौ भगवान को देह प्रकट भयो अथवा पांचईऽध्याय में याते कहयौ के भगवान के पंच प्राण उत्पन्न भये अठारह श्लोक करके क्यों कहयो तहा कहे हैं कि अठारह श्लोक नहीं मानौ श्री नंदोत्सव में।"

मध्य की पंक्तियाँ (पृष्ठ-सं० १०)—

"तव नायन वोली
लहगा सुंदर भारी ताकौ रंग गुलह अनारी
तामें कूप का मदारी सुंदर चीन समारी
ताऊपै लैउगी सारी तामें रंगन की लहर भारी
चौगिर दावेल समारी और एक सुंदर चोली
रतन अमोली और तुम सवरो गहनो
सव यह है मेरौ कहनो
नाइन मेरी संग की इने करो रंग रंग की
कौजै मो मन भाई तव देहौ लाल वधाई………"

अन्त—"ग्रन्थ में यह लिषौ है श्री कृष्णतें राधिकाजी कौ जन्म पहले भयो है सो कल्पातर भेद है या मै कछु दूषन नही है अव श्री शुकदेव जू ऐसे कहीते कहीते श्री शुकदेवजी की आंखिनि मे सवंरो उच्छाइव जो छाय रहयो है तहां, आपहूं माव करिके ठाडे हैं सोई माखन की जो मार भई एक तौ मणि ही की चिकनी सिला ता पै माखन के लौन्दा पड़े और तापै जो पाय परिगयो सो पामरपरयौ तव ये पुकारे हैं हे नृप अरे राजा तंकूं कथा सुननी है तौ मोहि हाथ पकरिकै लीगौ नहीं तौ या दधिकादौ कीच में रपट्यौ सो तो श्री शुकदेवजू सरीके वक्ता जो रपट गये तो ऐसो कौन वक्ता है जो कथा कहै तहां इ राधिका जन्मोत्सव गर्ग संहिता में कहयौ है अथैव राधावृषभानु पत्नयाभावे श्यरूपं महसः पराज्ञं कलिंदजा कूल निकुंज देशे सुमंदिरे सावततार राजन् १ घनावृतेव्योम्नि दिनस्य मध्ये भाद्रेसिते नागतिथौ चसोमे अवाकिरन्

देवगणास्फुरद्भिस्तन्मंदिरे नंदनजैः प्रसूनैः अवजासमै शुभलक्षणकाल वृहस्पतिवार अष्टमी भाद्र शुक्ला अष्टमी विशाखा नक्षत्र ताही समैं मध्याह्न में श्री राधिकाजी कौ जन्मभयौ अथवा इसीताष्टम्यां प्रभाते अरुणोदये गुरुवारे विशाखायां शिंह लग्नोदये खौ कर्के गुरौ तुलायाञ्च विधौ शुक्रे तुलागते भौमे मकरमंस्थेंन्दु कंजे कन्यगते शुभे १ बुधो कुंभगते माता कन्यका शुभलक्षणा विश्वोद्धार करि साक्षान्नामस्मरण मात्रतः १ असौ सर्वगुणोपेतः काल परमशोभनः स्वयं ववंष पर्जन्यो रसवृष्टि धरातले १ वबुर्वीताः सुखस्पर्शाः सुगन्धाः शुमनोहरा मनस्यासन् प्रसन्नानि सारासि सरितस्तथा आनंद सप्त वे मग्नाः बभूवुरखिलाजनाः ताही समैं प्रगट होते ही श्री राधिकाजी ने दिव्य रूप दिखायौ वृषभानराजा और कीरति रानी हाथ जोड के वारूपकौ दर्शन करण लगे केतौ रूप है द्विभुजविलास रूप द्विय वस्त्राभूपण पहिरे ऐसे रूपकौ देख के अस्तुति करत भये ॥ इति श्री नन्दोत्सव संपूर्णम् ॥ राम राम राम राम राम राम राम रामलाल ।"

विषय—श्रीकृष्ण-चरित्र-काव्य । श्रीकृष्ण के जन्मोत्सवकाल के समय नंद द्वारा आयोजित महोत्सव का साहित्यिक वर्णन ।

टिप्पणी : भागवत पुराणान्तर्गत श्रीकृष्ण के जीवन से सम्बन्धित कथा के सामान्य आधार पर गद्य-ग्रन्थ । यह पोथी व्रजभाषा में लिखी गई है । पोथी किसी मूल संस्कृत ग्रन्थ की टीका के रूप में लिखी गई है । पोथी की लिपि सुन्दर तथा स्पष्ट है । पोथी में ग्रन्थकार ने अपना नाम प्रारम्भ या अन्त में नहीं दिया है, किन्तु अन्त में 'राम राम राम' कहते हुए 'राम्लाल' लिखा है और पता चला है कि इस पुस्तकालय की परम्परा में श्रीरामलाल गोस्वामी हो चुके हैं, अतः प्रतीत होता है—ये श्रीरामलाल गोस्वामी ही ग्रन्थकार हैं। यह पोथी श्रीचैतन्य पुस्तकालय, गायघाट, पटना में सुरक्षित है। पुस्तकालय-जिल्द ८, पु०-संख्या ४९ है ।

११२. (६) मधुपुरी (मथुरा) वर्णनम्—ग्रन्थकार—× । लिपिकार—श्रीदेवीप्रसाद । अवस्था—प्राचीन; देशी कागज । पृष्ठ-सं०—९ । प्र० पृ० पं० लगभग—१६ । आकार-प्रकार—४$\frac{1}{3}$" × ११" । भाषा—हिन्दी । लिपि—नागरी । रचनाकाल—× । लिपिकाल—चैत्र-कृष्ण अमावास्या, शनिवार, सं० १९४९ वि० ।

प्रारम्भ—"श्रीराधारमणो जयति ॥ श्री गणेशाय नमः ॥

अतः मधुपुरी वर्णनमाह वडे वगीचे ते नंदजी के पास तें श्री कृष्ण-बलभद्र सखान सहित मथुरापुरी के देखिवे को आवत भये तहां

आयके मधुपुरी को देखत भये कया देखत भये तहां को कहत हैं मथुरा के कछु दूरवाग वडेवडे ठडे हैं तिनमे चीता और गैडा भेढा हिरण रोज शूकर नाहर डोलत हैं तिनमें राजा के पालक हथियार बांधे शिकार खेलत हैं ताके आगे मथुरा के निकट छोटे वगीचा लगे हैं तामे अनेक माली घूम रहे हैं तिनकी कमर में दुशाला बंध हैं और हाथन में सोने के कडे पहिरे हैं सोने की दण्डी के बेलचा तिनसे रौसपट्टी वना रहे हैं"

अन्त—"सो हे राजा वासमय श्री कृष्ण कौ देखि कै हजारन पुरुष सुन्दरी टूक टूक होइ के अपने अपने गहने उतारिके नोछावर करन लगि हैं ऐसी भांति आनंद में भरि रही हैं और आगे वाजार में भीड के मारे कसामसि होय रही है और लोग वाग अपनी अपनी दुकानन में झूंकि झुंकि झुंकि झूमि झूमि सो नैन के थारन में मोतिन के हार भरि भरि कै आरतीन की त्यारि करै हैं

दोहा

वृन्दावन राधारमण चरण कमल में वास
लिखित देवी प्रसाद है गुरुपद पंकज दास

मिती चैत्र कृष्णामावस्या शनिवार सम्बत् १९४९ वि० शुभम् भूयात् ॥ श्री राधारमणो जयति ॥ हरे० ॥"

विषय—मथुरा और विशेषतः श्रीराधारमण-मन्दिर की शोभा और मन्दिर में स्थित वस्तुओं का वर्णन।

टिप्पणी : इस पुस्तिका में मथुरा और वृन्दावन का बड़ा ही रोचक वर्णन है। इससे तत्कालीन मथुरा के पार्श्वप्रदेश, शोभा और उस युग की वेश-भूषा, पर्वोत्सव आदि का स्पष्ट पता चलता है। पुस्तिका व्रज-भाषा में लिखी गई है। पुस्तिका के प्रारम्भ या अन्त में ग्रन्थकार का नाम नहीं है। अन्त में लिपिकार का नाम 'देवीप्रसाद' लिखा है। पुस्तिका की दशा अच्छी है। कहा जाता है, ग्रन्थ के लिपिकार श्री देवीदासजी वृन्दावन में श्रीराधारमण देव-मन्दिर के मुनीम थे।

यह ग्रन्थ श्रीचैतन्य पुस्तकालय, गायघाट, पटना में सुरक्षित है। पुस्तकालय-जिल्द ८ में पु०-संख्या ५० है।

११३. (७) बलभद्र-जन्मचम्पू—ग्रन्थकार—×। लिपिकार—×। अवस्था—प्राचीन; हाथ का बना कागज। पृष्ठ-सं०—२। प्र० पृ० पं० लगभग—१८। आकार-प्रकार—५¼" × १०½"। भाषा—संस्कृत-हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"श्री राधारमणो जयंति अथोत्सव कथा तत्र वलभद्र जन्म गोपाल चम्पूकाव्ये ।।

ततश्च लब्ध सर्व समय संपछशे चतुर्दशे मासि श्रावणतः प्राक्पौणिमायां श्रवणर्क्षे समस्तु सुस्वरोहिणी गुणतया सुसमंसुतं सुसावणां द्रशुभ्रता विभ्राजमानतया पौर्णमासी चन्द्रमसमिव इति ।। अर्थ ।। पायो है सर्व लक्षण को संपत्ति जामै अैसीजो आषाढ शुक्ल पौर्णमासी भृगुवार श्रवण नक्षत्र संयुक्त मध्यान समय पंचग्रह उच्चके अैसे समय तुललग्न मे और भयो है"

अन्त—"ता समय वेद व्यास देवलऋ० देवरात वशिष्ट वाचस्पति नारद आदिक ऋषिगण के समूहनंदरायकू वलदेव जन्म की वधाई देने आये इन्है देख के नंदराय सव गोपन सहित उठके खडे होय गये और यथायोग्य आसन देयके सव देर्वाषनकूं वैठायी और पाद्य अर्ध आचमनी इत्यादिक षोडशोपचारतें पूजन करिके हाथ जोडिके वडी स्तुती करतभये और वोले हे मुनीश्वर"

विषय—बलदेव-जीवन-चरित्र । श्रीबलदेवजी के जन्मकाल तथा जन्म-सम्वन्धी पौराणिक रहस्य का उद्‌घाटन । श्रीनंद द्वारा बलदेवजी के जातकर्म-संस्कार का वर्णन ।

टिप्पणी : इस लघुकाय पुस्तिका में श्रीभागवत पुराण की कथा के आधार पर श्रीबलदेवजी की जीवनी गद्य और पद्य दोनों में लिखी गई है । ग्रन्थ व्रजभाषा में है । पुस्तिका के प्रारम्भ या अन्त में ग्रन्थकार और लिपिकार के नाम का संकेत नहीं है । पुस्तिका श्रीचैतन्य पुस्तकालय, गायघाट, पटना में सुरक्षित है । पुस्तकालय-जिल्द ८ म पु०-स० ५१ है ।

११४. (८) वेणु-गीत—ग्रन्थकार—× । लिपिकार—श्रीराधालाल गोस्वामी । अवस्था—प्राचीन; हाथ का बना, मोटा, देशी कागज । पृष्ठ-सं०—४ । प्र० पृ० प० लगभग—१८ । आकार-प्रकार—५" × १२" । भाषा—संस्कृत, हिन्दी । लिपि—नागरी । रचनाकाल—× । लिपिकाल—× ।

प्रारम्भ—"श्री गौरविधुर्जयति ।। इत्थमिति—शुकः उवाचः स गो गोपालकः (श्री कृष्णः) इत्थं (एवम्भूतम्) शरत्स्वच्छजलम् (शरदा स्वच्छानि जलानि यस्मिन् तत्) पद्‌माकर सुगन्धिनावायुना वातं (व्याप्तं) वनं न्यविशत्—।।१।।

कुसुमितेति—सह पशु पालवः (पशुपालैः वलेन च सहितः) मधुपतिः (श्रीकृष्णः) गाः चारयन् कुसुमितवनराजि शुष्मिभृङ्गद्विजकुल घुष्टसरः =

सहिन्महीध्रम् (कुसुमितासु वनराजिसु ये शुष्मिणः मत्ताः भृङ्गः द्विजाः पक्षिणः च तेषां कुलैः घुष्टाः नादिताः सरांसि सरितः महीध्राः पर्व्वताः च यस्मिन् तत्वनम्) अवगाह्य (प्रविश्य) वेणुं चुकूज ॥२॥"

मध्य की पंक्तियाँ (पृष्ठ-सं० २)—

"गावश्चेति—गावः कृष्णमुख निर्गत वेणु-गीत पीयूषं (अमृतम्) उत्तमित-कर्णपुटैः (उन्नमितै उत्तमितै कर्णरूपैः पुटैः पानपात्रैः) पिवन्त्यः (तथा) गोविन्दं दृशा (नेत्रभागेण) आत्मनि (मनसि) स्पृशन्त्यः (आलिङ्गन्त्यः इव तथा) शावाः (वत्साः) स्नूतस्तनपयः कवलाः (स्तनक्षरित दुग्ध-ग्रासमुखाः) स्म (एव) तस्थुः ॥१३॥

प्रार्याविति—(हे) अम्ब, अस्मिन्वने ये विहगाः (ते) प्रायेण मुनयः (एव भवितुं अर्हन्ति, यतः ते) कृष्णोक्षितं (कृष्णदर्शनं यथा भवति तथा) रुचिर प्रवालान् (रुचिराः प्रवालाः येषांतान्) द्रुमभुजान् (तरु-शाखाः) आरुह्य मिलितदृशः (संकुचितनेत्राः) विगतान्यवाचः (व्यक्तान्यवाचः सन्तः) तदुदिदं तेनउदितं (प्रकटितं) कलवेणुगीतं (मधुर वेणुगीतं एव) शृण्वन्ति ॥१४॥"

अन्त—"एवम्विधेति—वृन्दावनचारिणः भगवतः (श्री कृष्णस्य) एवम्विधाः याः क्रीडा (ताः) मिथः (परस्परं) वर्णयन्त्यः गोप्यः तन्मयतां (कृष्णौ-कानुसन्धानपरतां) ययुः ॥२०॥"

विषय—श्रीकृष्ण-जीवन-काव्य ।

टिप्पणी : यह लघुकाय पुस्तिका, प्रतीत होता है कि भागवतान्तर्गत **'वेणु-गीत'** की व्याख्या (संस्कृत टीका) है। श्रीकृष्ण के वेणु को आधार मानकर काव्य-रचना की गई है। इसके पदों में लालित्य और ओज है। पोथी में ग्रन्थकार या लिपिकार के नाम का संकेत नहीं है। लिपि स्पष्ट, सुन्दर और प्राचीन है। यह पुस्तिका श्रीचैतन्य पुस्तकालय, गायघाट, पटना में सुरक्षित है। पुस्तकालय-जिल्द ८ में पु०-सं० ५३ है।

११५. (९) भ्रमर-गीत—ग्रन्थकार—श्रीसुन्दर लाल गोस्वामी । **लिपिकार—श्रीराधालाल** गोस्वामी । अवस्था—प्राचीन; देशी कागज । पृष्ठ-सं०—६ । प्र० पृ० पं० लगभग—१८ । आकार—५½" × १३½" । भाषा—संस्कृत । लिपि—नागरी । रचनाकाल—× । लिपिकाल—सं० १९५० वि० (१८९३ ई०) ।

प्रारम्भ—"श्री राधारमणोजयति गोप्यऊचुः मधुप किमुत वन्धो इति ॥ (हे) मधुप किमुत बन्धो सपत्न्याः (अस्मत्सपत्ना) कुचविलुलितमाला

कुंकुमश्मश्रुभिः (कुचाभ्यां विलुलिता आलिंगनदशायां सम्मर्दिता या माला तस्याः कुंकुमं येषु तैः श्मश्रुभिः) नः (अस्माकम्) अंध्रि 'मा' स्पृश । मधुपतिः तन्मानिनीनां (पुरस्त्रीणांएव) प्रसादं वहतु (करोतु) किंच । यस्य इतः इहक् (स्त्री कुच कुंकुमयुक्त श्मश्रुवान् तस्य) यदु-सदसि विडुत्यं (उपहासास्पदत्वं एव) १२"

मध्य की पंक्तियां (पृष्ठ-सं० २)—

"परावृत्यागत्वा पुनरागते प्रत्याह प्रियसखेति—(हे) प्रियसखे, प्रेयसा (प्रयतमेन श्री कृष्णेन) प्रेषितः (त्वं) पुनः आगाः (आगतः) किम् ? (तर्हि हे) अङ्क, मे (मम) त्वं माननीयः (पूज्यः) असि। किंम अवरुन्धे (प्राप्तुमिच्छसि तत्) वरय (वृणीष्व) (हे) सौम्य, इह (अस्मिन्नपि काले) दुस्त्यज द्वन्द्वपार्श्वं (दुस्त्यजं द्वन्द्वं मिथुनी भावः यस्य तस्य) पार्श्वं समीपम् अस्मान् कथं नयसि (नेष्यसि) ? श्रीः (लक्ष्मीः नाम) वधूः = साकं (सहैव तत्र अपि) उरसि (एव) सततं (निरन्तरं) आस्ते ॥२०॥"

अन्त—"यावैश्रियार्च्चित मजादिभिराप्तकामैरिति—याः (गोप्यः) वैभावतः कृष्णस्य प्रिया आप्तकामैः (प्राप्तैश्वर्य्यैः) अजादिभिः (ब्रह्मादिभिः) अर्च्चितं (पूजितं तथा) योगेश्वरैः अपि आत्मनि (मनसि यत् चिंतितं) रासगोष्ठ्यां स्तनेषुन्यस्तं तत् पादारविन्दं परिरभ्य तापं (काम संतापं) विजहुः (परितत्युजः) ६२ ॥

वन्दे नन्दव्रजस्त्रीणामिति—यासां हरिकथोद्गीतं (हरिकथा सह 'उत' उत्कर्वैण 'गीत' चरीतं) भुवनत्रयं पुनाति (तासां) नन्द व्रजस्त्रीणां पादरेणुं (अहं) पुनः पुनः अभीक्षणासः वन्दे ६३ ॥ इति व्याख्येयम्"

विषय—कृष्णभक्तिपरक शृंगार-काव्य।

टिप्पणी : यह पुस्तिका 'भ्रमरगीत' की टीका है। मूल ग्रन्थ नहीं है। केवल टीका है और वह भी अधूरी है। प्रारम्भ के ११ श्लोकों की टीका नहीं है। अन्त में भी २० तक ही है। बाद के अन्य श्लोक नहीं हैं। टीका की शैली भी प्राचीन और अस्पष्ट है।

यह पुस्तिका श्रीचैतन्य पुस्तकालय, गायघाट, पटना सिटी में सुरक्षित है। पुस्तकालय-जिल्द ८ में पु०-सं० ५८ है।

११६. (१०) बृह्मस्तुति—ग्रन्थकार—श्रीसुन्दरलाल गोस्वामी। लिपिकार—श्रीराधालाल गोस्वामी। अवस्था—अच्छी; देशी .कागज। पृष्ठ-सं० ९—८। प्र० पृ० पं० लगभग—१८। आकार ५½" × २१"। भाषा—संस्कृत। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"श्री राधारमणाय नमः ॥ नौमीड्येति—(हे) ईड्य, अभ्रवपुषे (अभ्रवत्वपुः यस्यतस्मै) तड़िदम्बराय (तड़िद्वत् अम्बरे यस्यतस्मै) गुंजावतंसपरिपिच्छ लसन्मुखाय (गुंजाभिः मुखं यस्यतस्मै) वन्यस्रजे (वन्याः वन पुष्पपत्र मय्यः स्रजः यस्यतस्मै) कवलवेत्रविषाणवेणु (लक्षश्रिये) कवलादिभिः लक्ष्ममिः (श्रीः शोभा यस्यतस्मै) मृदुपदे (मृदुपादौ यस्यतस्मै) पशुपाङ्गजाय (पशुपस्य नन्दस्य अङ्गजः पुत्रः तस्मै तुभ्यं) नौमि ॥१॥"

मध्य की पंक्तियाँ (पृष्ठ-सं० ४)—

"यस्येति—इह (वहिर्जगति) इदं सात्मं (त्वत्सहितं) सर्वं यथा भाति, तथा (एव) यस्य (तव) कुक्षौ (अपि) तत्सर्वं (भाति) ततइदं (भानं) त्वयि मायया (त्वदिच्छया) विनाकिं (घटते) ? ॥१७॥ आद्यैवेति—त्वत् (त्वत्तः, त्वाम्) ऋते (विना) अस्य (विश्वस्य) मायास्वं (स्वेच्छाधीनत्वं) ते (त्वया) अद्यएव किमम न आदर्शितम् (अपितु प्रदर्शितम् एव तथाहि) प्रथमं (यदामया वत्सादयः न अपहृताः तदात्वम्) एकः (श्रीकृष्ण रूपः) असि । ततः वत्सवालादिहरणा-नन्तरम्) व्रजसुहृदवत्साः (व्रजसम्बन्धिनः सुहृदः वालाः वत्साः) समस्ताः (वेणुविषाणादयः चसर्वे) अपि (त्वं एव-अम्: ततः) मया साके (सह) अखिलैः (तत्वादिभिः) उपासिताः (सेविताः) तावन्तः (तावत्संख्याकाः) चतुर्भुजाः (अपिच अभूः ततः च) तावन्ति एव गजानि (ब्रह्माण्डानि त्वं) अभूः । तत् (तस्मात्) अभितं (अप-रिमित) ब्रह्म (परिपूर्णम्) अद्वयम् (एव तत्स्वरूपम्) शिष्यते (अवशिष्यते) ॥१८॥"

अन्त—"श्री कृष्णेति—(हे) श्रीकृष्ण ? (हे) वृष्णिकुलपुष्कर जोषदायिन (हे) क्षानिर्जरद्विजपशूदधिवृद्धिकारिन्· (हे) उद्धर्मशार्व्वरहर (हे) क्षितिराक्षसध्रुक (हे) आर्कम् (आर्कम् अभिव्याप्यसर्वेषा) अर्हत (पूज्य) भगवन् (अकल्प) कल्प पर्य्यन्तं ते (तुभ्यं) नमः ॥४०॥" इति ॥

विषय—भक्तिकाव्य । श्रीकृष्ण के ब्रह्मरूप का विवेचन ।

टिप्पणी : यह पुस्तिका मूल ग्रन्थ 'ब्रह्मस्तुति' की टीका है । इस ग्रन्थ में श्रीकृष्ण के रूप को ब्रह्म का रूप मानकर निर्गुण स्तुति की गई है । टीका अच्छी तथा सुन्दर है । ग्रन्थ के टीकाकार, संस्कृत भाषा के विद्वान् प्रतीत होते हैं । ग्रन्थ ध्येय है । यह पुस्तिका श्रीचैतन्य पुस्तकालय, गायघाट, पटनासिटी में सुरक्षित है । पुस्तकालय की जिल्द ८ में पु०-सं० ५४ है ।

११७. (११) गोपी-विरहवर्णन (टीका)—ग्रन्थकार—गोस्वामी सुन्दरलालजी। लिपिकार—श्रीराधालाल गोस्वामी। अवस्था—अच्छी है। प्राचीन, हाथ का बना, मोटा, देशी कागज। पृष्ठ-सं०—५। प्र० पृ० पं० लगभग—१८। आकार—५½″ × १३″। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"श्री गौर विधुर्जयति॥ गोप्य इति—कृष्णे वनं याते तं अनुद्रुतचेतसः कृष्णलीला प्रगायन्त्यः दुःखेन दुःखेन वासरान निन्युः॥१॥ भाषा—श्रीकृष्ण के वन में जाने के पीछे श्रीकृष्ण में आसक्त चित है ऐसी जो गोपी हैं ते सब श्रीकृष्ण की लीला कूं आपस वर्णन करके दिन समापन करती हीं॥१॥ वामबाहु इति—गोप्य ऊचुः—वामबाहु कृतवामकपोलः वल्गितः भ्रूः मुकुन्दः कोमलाङ्गुलिभिः आश्रितमार्गम् अधरार्पितवेणुं यत्र ईरयति सिद्धैः सह व्योमयानवनिताः तत् उपधार्य विस्मिताः काममार्गेण समर्पितचिताः अपस्मृतनीव्यः सलज्जाः कश्मलं ययुः॥२॥३॥ भाषा—गोपीगण परस्पर कहन लगीं—वामस्कंध में झुको भयो है कपोल जिनको, नाच रहीं हैं दोनों भौं जिनकी ऐसे श्रीकृष्ण कोमल अंगुरियान के द्वारा वंशी के सवरे छिद्र बंद करकें जब अधर मे अर्पण करके वजामने लगें है तब अपने पति सिद्धगण के संग वर्तमान व्योमयान में बैठी भई देवतान की स्त्री वेणुगीत श्रवण कर कामदेव के वाण से बिद्ध होयके खुल जाय है वसन जिनको ऐसी सुरस्त्री लज्जित होय करके मूर्च्छित होय जांय हैं॥२॥३॥"

मध्य की पंक्तियाँ (पृष्ठ-सं० ३)—

"प्रिय सुगन्धियुक्त तुलशी माल्यधारी श्रीकृष्ण कोई ओर मणि की सुमरणी हाथमे लेके गौअंन की गणना करत करत प्रिय सखा के स्कंध में हस्तस्थापनपूर्वक जा समय गान करें हैं, ता समय उनकी वशीध्वनि द्वारा आकर्षित कृष्णसार पत्नी सम्पूर्ण हरिणी गुण गण सागर श्री कृष्ण के समीप आयकर गृह की आशा त्यागन किये भई गोपिकागण की नांई तिन्हे चारो ओर सूं घेर लेय हैं॥१८॥१९॥"

अन्त—"एवमिति—हे राजन् तच्चित्ताः तन्म्मनस्काः महोदयाः व्रजस्त्रियः अहःसु एवं श्रीकृष्ण लीलानुगायतीः रेमिरे॥२६॥ हे राजन् श्रीकृष्णगतप्राण तन्मनस्का, महाभाग्यवती व्रजयुवती-

गण तिनहीं की लीला गन कर करके नित्य क्रीड़ा करती हीं ॥२६॥"

विषय—कृष्णभक्ति-काव्य। गोपियों की कृष्ण के प्रति भक्ति और विरह का सुन्दर और मनोहारी वर्णन।

टिप्पणी : कृष्णभक्ति-सम्बन्धी पुस्तिका है। इसमें मूल संस्कृत-ग्रन्थ की संस्कृत-टीका का हिन्दी-अनुवाद किया गया है। भाषा और शैली में खड़ी बोली का पुट है। पुस्तिका में गोपियों के विरह तथा श्रीकृष्ण के रूप का ललित वर्णन है। मूल पुस्तिका की भाषा सरल और प्रसाद गुण-युक्त है। पुस्तिका पूर्ण है।

यह पोथी श्रीचैतन्य पुस्तकालय, गायघाट, पटना सिटी में सुरक्षित है। पुस्तकालय की जिल्द—८ में पुस्तक-संख्या ५५ है।

११८. (१२) इन्द्रस्तुति (टीका)—ग्रन्थकार—गोस्वामी सुन्दरलाल गोस्वामी। लिपिकार—श्रीराधेलाल गोस्वामी। अवस्था—अच्छी; प्राचीन, हाथ का बना, देशी कागज। पृष्ठ-सं०—२। प्र० पृ० पं० लगभग—२२। आकार—५$\frac{1}{3}$" × १२"। भाषा—संस्कृत-हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—'श्री हरिः॥ इन्द्रस्तुति॥ विशुद्धसत्वमिति हे ईश—तव धाम विशुद्धसत्वं शान्तं तपोमयं ध्वस्तरजस्तमस्कं च अग्रहणानुबद्धः माया मयः अयंगुणसंप्रवाहः ते न विद्यते १ हे भगवन् तुमारो स्वरूप विशुद्ध है सत्वगुण विशिष्ट है शांत है अर्थात् सदा एक सो है और रजो गुण तमो गुण करके रहित है ये जो अज्ञान जनित मायामय गुण प्रवाह रूप संसार है सो तुमारे स्वरूप में नहीं है १ कुतोनु इति हे ईश तत्कृतः तद्धेतवः ये लोभादयः अवुधलिंगभावाः कुतः नु। तथापि धर्मस्य गुप्त्यै खलनिग्रहाय भगवान् दण्डं विभर्ति २ हे ईश देह सम्बन्ध तुमकू नहीं है तो ता देह सम्बन्ध ते उत्पन्न जो लोभादिक है ते कहां सूं आपमे होंयगे ये तो अज्ञानीन कू होय है अतः तुममे याकी सम्भावना नहीं है किंतु तथापि धर्म्मकू स्थापन करिवेकू एवं दुष्टन कू दण्ड देवेकू आप दण्ड धारण करो हो २"

अन्त—"नमस्तुभ्यमिति—भगवते तुभ्यं नम = सात्वतां (भक्त) पतये (रक्षक) पुरुषाय महात्मने वासुदेवाय कृष्णाय नमः ७

स्वच्छन्देति—स्वच्छन्दोपात्तदेहाय विशुद्धज्ञानमूर्त्तये सर्वस्मै सर्व-बीजाय सर्वभूतात्मने नमः ८

मयेदमिति—हे भगवन् यज्ञे विहते तीव्र मन्युना मानिना मया आसार वपुभि: गोष्टनाशाय इदं चेष्टितम् ९

त्वयेशानुइति—हे ईश ध्वस्तस्तंम्भः त्वयानुगहीतः अस्मि-भवामि अहं ईश्वरं गुरुं आत्मानं त्वां शरणं गतेः १०"

विषय—पौराणिक भक्ति-काव्य ।

टिप्पणी : १—यह लघुकाय पुस्तिका किसी पौराणिक भक्ति-ग्रन्थ के स्तुति-अंश की टीका-मात्र है ।

२—उपरिलिखित इन पुस्तिकाओं का यद्यपि लिपिकाल नहीं दिया हुआ है, तथापि प्रतीत होता है, इनकी लिपि बहुत प्राचीन नहीं है । फिर भी लिप्याकार से ज्ञात होता है कि एक सौ वर्ष पुरानी लिपि होगी । किन्तु पुस्तिकाओं में जहाँ हिन्दी भाषा का प्रयोग है, उसे देखने से स्पष्ट प्रतीत होता है कि भाषा और खड़ी बोली के नवीनतम विकास के पूर्व की है ।

यह पुस्तिका गायघाट, पटना सिटी-स्थित श्रीचैतन्य पुस्तकालय में सुरक्षित है । जि० ८ में पु०-सं० ५७ है ।

११९ (१३) श्रीरामबाल-चरित्र—ग्रन्थकार—श्रीसुन्दरलाल गोस्वामी । लिपिकार—श्री वंशीधर शर्मा । अवस्था—अच्छी; प्राचीन, देशी कागज । पृष्ठ-स०—१३ । प्र० पृ० पं० लगभग—१६ । आकार—४$\frac{1}{2}$" × ११" । भाषा—संस्कृत, हिन्दी । लिपि—नागरी । रचनाकाल—× । लिपिकाल—पौष-शुक्ल ११, सोमवार, सं० १९४४ वि० ।

प्रारम्भ की पंक्तियाँ—"श्री गणेशाय नमः ।। अथ श्री रामचन्द्रस्य बाललीला वर्णनं ।। सूत उवाच ।।

श्री रामो बालरूपीच भ्रातृभिः सह सुंदरः ।।
जानुभ्यां सह पाणिभ्यां प्राङ्गणो विचचारहः ।।१।।
कौशल्यां प्राङ्गणं दिव्ये माणिरत्न विभूषिते ।।
तत्र सर्वासमापाता कैकयाद्याश्च मातरः ।२।।
भरतं लक्ष्मणं चैव शत्रुघ्नं चापि क्रीडितुं ।।
मातुः क्रोडात्समुत्तीर्य रिंगणे कुरुते सदा ।।३।।
क्वचिन्नवेगतो याति क्वचिद्याति शनैः शनैः ।।
क्वचिच्च भरतो रिंगत् शीघ्रतो जानुपाणिभि. ।।४।।
पादयोर्नूपुरा एव शृण्वन् यांति शनैः शनैः ।।
कदाचित् किंकिणी एवं कटौ श्रुत्वा पलायते ।।५।।
आदर्शे क्वचिदात्मानं पश्यंतश्चात्मनो मुखम् ।।
बालकञ्च द्वितीयं हि मत्वा स्पृशति पाणिना ।।६।।

अलब्ध्वा तस्य चांगानि रोदनं कुरुते पुनः ॥
क्वचिच्च वदनं रम्यं स्तंभेषु प्रतिबिंबितम् ॥७॥
द्वितीयं बालकं मत्वा हास्यंच कुरुते प्रभुः ॥
भरतो हि निजं बिंबं रत्नपृथ्यां हि भासितं ॥
हास्यं च कुरुते मंदं मंदमदं पुनः ॥८॥
लक्ष्मणोऽपि निजं बिंबं दृष्ट्वा हुंकुरुते मुहुः ॥
शत्रुघ्नो जानुपाणिभ्यां रिंगन् भूमौ निजं मुखम् ॥९॥
तस्याननेन संयोज्यो चोच्चैः कूजति तत्रह ॥१०॥
पंजरस्थं शुकं दृष्ट्वा तर्जनीं कुरुते प्रभुः ॥
सारिका तत्र पठति कर्ण दत्वा शृणोति सः ॥११॥
बाजपाला करे बाजं रामचन्द्रस्य सन्मुखे ॥
श्येनपालोपि रामाय श्येनं दर्शयते निजं ॥
विलोक्य सहते रामस्तत्तत्पक्षिगणं मुहुः ॥

कवित्त ॥

खेलन खिला में घने की रनपटा में
दुलरा में बहुभांति मनमोद हि वटा मैं है ॥
अंगन लगानें उठि सारिका बुलामें
फिर फिरकी फिरामै हसैं हियो हुलसाम हैं ॥
देखन कूं धामें छविनगर की आमें
सवरूप कौं निहार भाग आपनौ सरामें हैं ॥
अंगना समाहि फूली अंगना मैं लालैं
लखिभालैं तोर मोती नवछावर लुटा मैं हैं ॥"

मध्य की पंक्तियाँ (पृष्ठ-सं० ८)—

"कौशल्या प्रांगणे तिष्ठन् रामार्थे सर्व बालकाः ॥
बालान् वीक्ष्य तथा रामो क्रीडार्थं तु मनो दध्रे ॥८१॥
उवाच लक्ष्मणं रामो धनुर्मे दीयतामिति ॥
सतूर्णं चासिखड्गच खेटकाय मनोभ्रम ॥८२॥
लक्ष्मणो गृहकोणेषु चायुधार्थं जगामह ॥
न ददर्श धनुर्बाणं खड्गंचापि चुकोप स ॥८३॥
चत्वारो भ्रातरस्तेच कौशल्यां पप्रच्छुरुत्सुका ।
धनुर्वाण स्तथाखड्ग क्वास्तिमातः प्रदीयताम् ॥८४॥
न जानीमा धनुर्बाणं तव वत्स तथाह्यसि ॥
नवीनं गृह्यतांवत्स माच शोके मनः कृथा ॥८५

रामाहपद ।।

वाण धनैया कितधरी दै दै री मैया।
तेरी सी आंगन खेलैं मिल चारौं भैया।
काल दूर यासौं गए सब सखा सहैया।
वाग सुभग वैठक वनी आछे वसन वनैया।।
नाना विध पंछी वोलने लागे परम सुहैया।
वान एक खोयो गयो सरयूतट मैया।
नीर निकट हम ना गये वावा की दुहैया।
तुलसी भरत वोलायकै पूछे क्यों न मैया।"

अन्त की पंक्तियाँ— सवैया

"धाई न चारहू भाई न चाहिकैं
तोरैं त्रिनैं सुख आंसू नहाये।।
राम निहार निमेष रह्यो
तजि मोदित भूप शरीर भुलाये।।
जाततें गायेन आनन एकही
देखि प्रमोद जे मातन पाये।।
दैद्विज देवन दान महान
नरेश कुमारन वेगि वुलाये।।
संग सखान समेत आनन्दसौं
जाय पितापद वंदि नमाये।।
सूंघ कै शीश सवैके सिकारके
कौतुक राउक्रमैं कहिवाये।।
फेर दीये पल वांटि प्रसंसलै
भीतर सानुजराम सिधाये।।
वारि उत्तारके वारिमणी
मुखचूम महामुद मातन पाये।।"

विषय—पौरणिक तथा ऐतिहासिक कथा पर आधृत श्रीरामचन्द्र की जीवनी। श्रीरामचन्द्र के जीवनकाल की बाल-लीला के आधार पर रचना की गई है। रामचन्द्रजी के बाल-जीवन के आधार पर संस्कृत में श्लोक हैं और हिन्दी में उनका भावान्तर है। कहीं-कहीं जिस प्रसंग का पूर्व भाग संस्कृत में लिखा गया है, उसी प्रसंग का उत्तर भाग हिन्दी में कवित्त, सवैये में लिखा हुआ है। दो-तीन पद गोस्वामी तुलसी दास की 'कवितावली' से अविकल उद्धत कर दिये गये

हैं—(पृ०-सं० २ में) संस्कृत श्लोक—"जलपात्रे च रामेण चंद्रबिंबं विलोकितं आदि" के बाद—

कवित्त

"कबहू शशि माँगत आरि करैः॥
कबहूं प्रतिबिंब निहार डरैं॥
कबहूं बरताल बजायके
नाचत मातु सबै मनमोद भरैं॥
कबहूं रिसिआय कहैं हठकै
पुनि लैंइ सोइ जेहि लागि अरैं॥
अवधेश के बालक चार सदा
तुलसी मन मंदिर में विहरैं॥"

और भी देखिए (उसी पृष्ठ में)—

"दंत पंक्ति मुखे वीक्ष्य कुंद मुक्तासमप्रभाम् आदि" के बाद—

"दंत की पंगत कुंदकली
अधराधर पल्लव खोलन की॥
चपला चमकै घन विज्जु जगै
छवि मोतिन माल अमोलन की॥
घुंघरारि लटैं लटकैं मुख ऊपर
कुंडल लोल कपोलन की॥
नवछावर प्राण करैं तुलसी
बल जांउ लला इन बोलन की॥"

यत्र-तत्र स्वरचित पदों में भी 'तुलसी' का नाम जोड़ दिया गया है। क्योंकि ये पद तुलसी की रचना में नहीं हैं। जैसे–पृ०-सं० ९ में—

"नीर निकट हम ना गये बाबा की दुहैया।
तुलसी भरत बोलाय कै पूछै क्यों न मैया॥"

टिप्पणी : मूल पोथी संस्कृत में है। प्रस्तुत पोथी में मूल संस्कृत के आधार पर 'सवैया' और 'कवित्त' में भाषा में रचना की गई है। प्रारम्भ में संस्कृत के श्लोक हैं—बाद में हिन्दी के गेय पद हैं। रचना सुन्दर और स्पष्ट है। संस्कृत-रचना में भी प्रसाद गुण है। भाषा अवधी (रामचरितमानस) से मिलती-जुलती है। यत्र-तत्र ऐसी भाषा का भी प्रयोग है—"बान एक खोयो गयो सरयू तट मैया।" (पृ०-सं० ९) यहाँ 'खोयो गयो'

देखिए। और भी (पृ०-सं० ३ में) रनियां, वचनियां, हसनियां और लटकनियां। कहीं-कहीं ग्रन्थकार ने गद्य में भी वर्णन किया है (पृ०-सं० ९ में)—"कस्मिन् राज्याभिषेकश्च कस्मिश्चिन्मुनिमेषकः आदि" के वाद—"अथभाषावार्ता ।। द्वादशवन के मध्य में प्रमोदवन है। तहां खेलते भये। तहां एक धीवर आयकै वोलो। कुशा काश के वीच में अर्ना (अरण्य-जंगली) भैंसा है। मनुष्य वहुत मारै है। चारो भाइ गए रामने एकही वान में प्रानहर लए। देवता वन कै चरन मैं पडो मैं विल्वनाम गंधर्व हो। नारद में साप दीनो आज मुक्त भयो। मेरी आपके नाम की मूर्ति पूजा होय। तवसौ विल्वहरि तीर्थ भयो। वैशाष में यात्रा होय है। गन्धर्व स्वर्ग में गयो ।।"

इस गद्य-भाषा से प्रतीत होता है कि ग्रन्थ-रचना का अभिप्राय 'कथा-वाचन' रहा है। यह भाषा कथा-शैली को प्रकट करती है। ग्रन्थ के लिपिकार श्री पं० वंशीधर शर्मा छपरा-निवासी थे। लिपिकार ने 'ब' और 'व' के लिए केवल 'व' का प्रयोग किया है। लिपि स्पष्ट और सुन्दर है। यह ग्रन्थ लगभग डेढ़ सौ वर्ष प्राचीन है।

२—ग्रन्थ के अन्त में (संस्कृत) एक पृष्ठ की 'रामयज्ञोपवीत-लीला' नाम की पुस्तिका भी है। पोथी सुपठ्य और अनुसन्धेय है।

यह पोथी श्रीचैतन्य पुस्तकालय, गायघाट, पटना सिटी में सुरक्षित है। जिल्द ९ में पोथी-सं० ६५ है।

१२०. (१४) श्रीरामजन्मोत्सव—ग्रन्थकार—श्रीसुन्दरलाल गोस्वामी। लिपिकार—श्री वंशीधर शर्मा। अवस्था—अच्छी; प्राचीन, देशी कागज। पृष्ठ-सं०—१। प्र० पृ० पं० लगभग—१६। आकार—$४\frac{१}{२}'' \times ४\frac{१}{३}''$। भाषा—संस्कृत, हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—माघ-कृष्ण रविवार, सं० १९४४।

प्रारम्भ—"श्रीरामचन्द्राभ्यां नमः ।। अथ श्रीरामजन्मोत्सव लिख्यते ।।

श्लोक ।।

शांतं शाश्वतमप्रमेयमनघं निर्वाण शांति प्रदम्।
व्रह्माशंभु फणिन्द्र सेव्यमनिशंवेदान्त वेद्यंविभुम् ।।

रामाख्यं जगदीश्वरं सुरगुरुं माया मनुष्यं हरिं ।
वंदेहं करुणाकरं रघुवरं भूपालचूडामणिम् ॥१॥

चौपाई ॥

एकवार भूपति मनमाही ॥
भई ग्लानि मेरे सुतनाही ॥
गुरु गृह गये तुरत महिपाला ॥
चरण लागि करि विनय विशाला ॥
निज दुखसुख नृप गुरुहि सुनाएउ ॥
कहि वशिष्ठ वहुविधि समझाएउ ॥
धरहु धीर होइ हैं सुतचारी ॥
त्रिभुवन विदित भक्त भयहारी ॥"

मध्य की पंक्तियां (पृ० सं० ८)— कवित्त ॥

"आये सुर किन्नर-विमान-छाये
अवध मैं रामके जन्म भई शोभा शुभजालकी ॥
वाजत नगारे गामें वधाई नगरवारे ।
द्वारे पै लसत हैं गजेन्द्र हम पालकी ॥
आईं पुरवाल लियैं कंचन के थाल ही के ।
करत सराहना कौशल्याजी के भालकी ॥
नगर वधाई आज घर घर छाई देखैं
देवगण ठड़ें-जैं-जै दशरथ लालकी ॥५७॥".

अन्त—"ईत में वशिष्ठादि सव मोद में मगन भये ॥
पुरवासी घर-घर मंगल-गीत गावत भये ॥
देवता-अमृत-पीकैं नाच देखत भये ॥
जाचक धन पाय खुशी भये ॥ हे राजन् ॥
तीनो लोक में खुशी-भई ॥
ऐसी ही खुशी श्रोता वक्ता कैं होयगी ॥
श्री शुकदेवजी बोले ॥ राजा—
ऐसी खुशी छोड कैं ।
मोपै आगै कथा नाय कही जाय है ॥
आज तो सव याही-खुशी में खुशी रहौ ॥
काल छटी की कथा कहूंगो ॥
वोलो राजा रामचन्द्र की जै ॥७४॥"
इति श्री रामचन्द्र-जन्मोत्सव श्री सुन्दरलाल कृतसम्पूर्णम् ॥

विषय—श्रीरामचन्द्र के जन्मकाल में दशरथ के घर में हर्षोल्लास और अयोध्यापुरी में महोत्सव के वर्णन के साथ-साथ जन्म, जातकर्म-संस्कार, विविध दान तथा जन्मकुण्डली आदि का भी वर्णन है। पूर्व ग्रन्थ के ही समान बीच-बीच में संस्कृत में श्लोक-रचना की गई है। विशेष रचना हिन्दी में ही है। एक स्थान पर 'राम-जन्म'-काल में तुलसी के पद अविकल उद्धृत किये गये हैं—"भये प्रगट कृपाला दीन दयाला कौशल्या हितकारी, आदि।"

टिप्पणी : इस ग्रन्थ में श्रीरामचन्द्र के जन्मकाल तथा उसके बाद अयोध्या-वासियों के हर्ष आदि का मनोहारी वर्णन है। यत्र-तत्र-गद्य में भी रचना हुई है। प्रारम्भ में संस्कृत-श्लोक है, उसके बाद हिन्दी-भाषा में रचना है। ग्रन्थ सुपठ्य है। ग्रन्थ की भाषा अच्छी और प्रसादगुणविशिष्ट है। लिपि स्पष्ट और सुन्दर है।

यह पोथी श्रीचैतन्य पुस्तकालय, गायघाट, पटना सिटी में सुरक्षित है। जिल्द ९ में ग्रन्थ-सं० ६४ है।

१२१. (१५) **श्रीजानकी-स्वयम्वर**—ग्रन्थकार—कविराम। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी; प्राचीन, मोटा कागज। पृष्ठ-सं०—९। प्र० पृ० पं० लगभग—२०। आकार—५½" × १३"। भाषा—संस्कृत-हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"श्रीगणेशाय नमः॥ श्रीजानकी स्वयंवरवर्ण्यते॥
महेश्वरेण चाज्ञप्तो विश्वामित्रो महामुनिः॥
सिद्धाश्रमाच्चचालाशु रामार्थं मुनिपुंगवः॥१॥

सवैया॥

सूरज की अजकी कविराय दिलीप की रीत कहालै सुनाऊँ॥
श्री रघुके अजके जसकी सुकथान की ग्रंथ कहां लौ लिखाऊँ॥
जो रघुनाथ के तात की बात कहो तौ कहूं कहि अंत न पाऊँ॥
तातैं सुनो रघुवीर कथा तुमको कहि कै तन ताप सिराऊँ॥२॥

श्लोक॥

साकेत नगरं दृष्ट्वा मुमुदे कौशिको मुनिः॥
राजद्वारे समागत्य ददर्श महतीं श्रियम्॥३॥
द्वारपालः समागत्य प्रनेमुः शिरसा मुनिम्॥
मुनिनाः प्रेषिताः सर्वे राजानं च विजिग्यमुः॥४॥

राजा दशरथः श्रुत्वा वशिष्ठादिभिरन्वितः ॥
पूजामादाय महतीं निर्जगाम सभासदैः ॥५॥
आगत्य वंदनं कृत्वा चरणौ जगृहे मुनेः ॥
आलिंगितस्तु मुनिना वशिष्ठेन महामुनिः ॥६॥
राजानं च समालिंग्य विवेशांतःपुरं मुनिः ॥
पाद्यमर्घं ददौ राजा वार्त्तां चक्रुः पस्परं ॥७॥"

मध्य की पंक्तियाँ (पृष्ठ-सं० ४)— श्लोक ।

"अन्येतु राक्षसा सर्वे लक्ष्मणेन हता युधि ॥
पक्षिणो भोजयामास सुवाहो पललेन वै ॥४९॥
विक्रमं तु तयोर्दृष्टा सांयुगीनं महामुनिः ॥
ऋषयः पूजयांचक्रुः यज्ञपूर्तिं प्रचक्रमुः ॥५०॥
मुनि प्रणम्य तौ वीरौ मुमुदे तौ कुमारकौ ॥
आशिषा योजयामासुः मुनिः पाणितलेन वै ॥५१॥

सवैया ॥

पूरन यज्ञ कियो परिपूरन
व्रह्म जहां तहां नादु चिताई ॥
नाम लियैं अघवृंद टरै पुन
आपुन वान कमान चढ़ाई ॥
ता दिन तैं सुनरावन की विधि
वामन ज्यों रुचि मीच वढाई ॥
देवन जाय कह्यौ सुर राजहि
रामभए जग लेहु वधाई ॥५२॥

सूत उवाच ॥

तस्मिन्काले नरेशस्य जनकस्य महात्मनः ॥
प्रतीहारो महावुद्धिराजगाम महामतिः ॥५३॥
प्रणम्य च मुनिस्सर्वान् यज्ञार्थं च विजिज्ञये ॥५४॥

दुत उवाच ॥

जनकस्य गृहे राज्ञो धनुर्यज्ञोहि वर्तते ॥
भवद्भिर्गम्यतां शीघ्रं दया च यदि क्रीयते ॥५५॥

कवित्त ॥

राम-लक्ष्मन जूसौं वोलि कह्यौ मुनि वात
दूत आयो प्रातहौं जनकपुर जाइहौं ।

जो कहौ तो राजा दशरथ जू पै पहुंचाऊँ
नहि संग चलो तुमें कौतुक दिखाइहौं।*
छोटी सी कछौटी कटि धनुहीन मोटी
करचौंटी घर कहयौ नेंकु होहि तौ चढाइहौं।
राज तेज नमरिषि राजतैं में पायो गुन
अैसो ही शीव के धनुष हूतैं गुनपाइहौं ॥५६॥"

अन्त— दोहा ॥

"उठे लखन निशि विगत सुन अरुण सिखा धुनि कान ॥
गुरुतैं पहिले जगतपति जागे राम सुजान ॥१६॥

वार्ता ॥

सौने की दीवार वनी है स्फटिक मणिकौ दरवाजो हैं कंचन के किवार चढे हैं ताते मानक कौ वंगला वारह द्वारे कौ वनो है ताके भीतर पधारे तहांरो सैं पट्टी पन्ना पुखराज नीलम की वनी है त्रिकोण षटकोण अठपहलू वदरूमी कित्तावने हैं तामे पेंड लगे हैं सरौं हैं साल हैं तमाल हैं मोलसरी खिग्नी खिजूर हैं आम जामन आडू अनार नीवू नारंगी सेव सीताफल केर करौंदा ॥ वदाम छुहरी किसमिस अंगूर सवरूत की मेवासौं पेंड झूम रहे हैं ताके आगे ॥ अठपहलू तलाव है सूंगा पन्ना की पीड वनी है ताके चारौ ओर फुलवारी फूली है गेंदा गुल्दावदी गुलाव गुलवांस जहां जुलतुररा गुल्महदी गुड-हरा गुलाली केतकी चमेली रायवेल सौनजुही के वडा सदा वसंत दुपहरा तमाली मालती सृगारहार नरगस सुगधराय चंदन की लपट झपट तुलसी की क्यारी ऐसी सोभा देखत जांय है ॥"

विषय—श्रीरामचन्द्र के जीवन से सम्बन्धित रचना। राम-जन्म के पश्चात् विश्वामित्र का राजा दशरथ के यहाँ एक दिन अचानक आना और असुर-संहार के लिए राम को याचना। यहीं से ग्रन्थ का विषय प्रारम्भ होता है और 'सीता-स्वयम्वर'-वर्णन में जाकर समाप्त हो जाता है। बीच में असुर-संहार, अहल्या-उद्धार, जनक-बाग-दर्शन, सीता-

* कवित्त प्रारम्भ करने के पूर्व गद्य में यह प्रसंग-निर्देश किया गया है। यह काव्य-शैली प्रायः सम्पूर्ण ग्रन्थ में है।

मिलन, धनुर्भंग की रोचक कथा का सरस शैली में वर्णन है। एक स्थान पर 'तुलसी' के पद अविकल रख दिये गये हैं—

'मांगहु भूमि धेनु धन कोपा
सर्वस देहुं आज सहरोपा।'

जिस प्रसंग का उल्लेख संस्कृत में है, उसके बाद का प्रसंग हिन्दी में लिखा गया है।

टिप्पणी : इस पोथी में संस्कृत के श्लोकों की रचना के साथ-साथ हिन्दी के दोहे, चौपाई, सवैया और कवित्त भी रचे गये हैं। ग्रन्थ अपूर्ण है।

कथावस्तु का वर्णन मध्यकालीन गद्यशैली में किया गया है। भाषा 'व्रजभाषा' से मिलती-जुलती-सी है। कहीं-कहीं पच्छिमी भोजपुरी के भी शब्द हैं, अर्थात् मिर्जापुर और बनारस के आसपास की बोली के शब्द हैं। ग्रन्थ की रचना 'कथाशैली' पर है। यद्यपि ग्रन्थ में (खण्डित होने के कारण) कहीं भी ग्रन्थकार का नामोल्लेख नहीं है, तथापि प्रतीत होता है कि किसी 'रामकवि' नामक व्यक्ति ने इसकी रचना की है। जैसा कि ग्रन्थ के प्रारम्भ की पंक्ति—

"सूरज के अर्जी की कविराम
दिलीप की रीत कहा लै सुनाओं।"

ग्रन्थ की लिपि प्राचीन है। लिपि से ग्रन्थ लगभग सौ वर्ष प्राचीन प्रतीत होता है।

यह ग्रन्थ श्रीचैनन्य पुस्तकालय, गायघाट, पटना सिटी में सुरक्षित है। पुस्तकालय की जिल्द ९ में पु०-सं० ६६ है।

१२२. (१६) श्रीरामचरित्र (अयोध्या से लंका)—ग्रन्थकार—सुन्दरलाल गोस्वामी। लिपिकार—×। अवस्था—प्रचीन, देशी कागज। पृष्ठ-सं०—३८। प्र० पृ० पं० लगभग—२८। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। आकार—७½" × १३"। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"अथ श्रीरामचन्द्रस्य वनगवन लीला वर्णयते
वामांगे च विभाति भूधरसुता देवापगा मस्तके भाले वालविधुर्गले च गरलं यस्योरसि व्यालराट् सोयं भूति विभूषणः सुरवरः सर्वाधिपः सर्वदा सर्वः सर्वगतः शिवः शशिनिभः श्री शंकरः पातुमां १ प्रसन्नतां

योन· तोऽभिषेकतः तथा न मम्ले वनवासदुःखतः मुखांवुज श्रीरघुनंदनस्य मे सदास्तुतन्मजुल मंगलप्रदं २ नीलांवुजश्यामल कोमलांगं सीतासमारोपितवामभागं पाणौ महासायकचारुचापं नमामिरामं रघुवंशनाथं ३

दोहा

जवतें राम व्याहि घर आये
नितनव मंगलमोद वधाए
मुदित मातु सव सखी सहेली
फलित विलोकि मनोरथ वेली
रामरूप गुणशील सुभाऊ
प्रमुदित होंहि देखि मुनिराऊ
सबके उर अभिलाख यह
कहहिं मनाय महेश
आपु अच्छत युवराज पद
रामहिं देहिं नरेश ४

एकसमें राजा सव समाज सहित सभा में विराजे हैं वातें अनेक हो रही हैं पास दरपन धरौ हौ राजा ने उठाय लीनो मुख देखो मुकुट सम्हारो पाछै कान के पाउ सुफेद वाल निहारे"—

मध्य की पंक्तियाँ (पृ० सं० २२)— कवित्त

"दीरघ दरी नव सैं **केशोदास** केशरी ज्यौं
केश केशरी कौं देखिवन करी ज्यौं कपत हैं।
वासर की संपत उलूक ज्यौं नचिवत चकवा
ज्यौं चंद चितैं चौगुनों चपत हैं॥
केकी सन व्याल ज्यौ विलात गात घनस्याम
घनन के घोरन जवा सौं ज्यौं तपत हैं
भौंर ज्यौं भ्रमत वन जोगी ज्यौं जगतरत
साकत ज्यौं राम नामते रोइ जपत हैं २८"*

अन्त—"सुग्रीव वोले तेरे भीतर रामना है तव छाती की त्वचा फार रामनाम दिखाये सव विस्मित भये तव वरुण कौ विमान छीन लीनौ राम जानकी लक्ष्मण सहित पुष्पक विमान पर विराजे

---

*ग्रन्थकार वैष्णव-सिद्धान्त (माध्वसम्प्रदाय) के माननेवाले हैं। यहाँ उन्होंने शाक्तों (शक्तिपूजक तान्त्रिकों) का मजाक उड़ाया है।

विभीषण वोलो कुछ दिन इहां रहौ राम वोले भर्त सौं करार करि आयो हूं चौथे वर्ष वीतैंगे तव आऊंगो सोई एक दिन वाकी है वानर राक्षस रिच्छसव मित्र कलत्र समेत पुष्पक चढ़ि रघुनाथ जू चले अवधि के हेतु जानकी कू संग्राम भूमि दिखामें है

अत्रासीत्फणिपासवंधनविधिः शक्तया भवद्देवरे गाढं वक्षसि ताडिते हनुमता द्रोणाद्रिरत्राहृतः दित्यैरिंद्रजिदत्र लक्ष्मणशरै र्लोकातरं प्रापितः केनाप्यत्र मृगाक्षि राक्षसपतेः कृंत्ताचकण्ठ टवी ४५ सेतु सीतहि सो मनो दरसाइ पंचवटी गए वांदरादिआनेक लैलै विदाइतउत कौ गए पाइ लगि अगस्त के पुनि अत्रि पैं सुविदाभए चित्रकूट विलोकिकै गुरु गेह नेह जतायकै वालमीक विलोक प्राग गयो विमान उडाय कैं भारद्वाज के आश्रम मे लखि उतरत विश्राम करत पै हनुमान पढत गये ते नर रूपधर मुनिके संग अनेक ज्ञानवार्ता कर्तभए ॥"

इति श्री रामायणे लंका विजय कथा श्री सुंदरलालेन विरचिता समाप्ताः मिति आसाढ़ वदि १३ शुक्रवार संवत् ।

विषय—रामभक्ति-काव्य। अयोध्याकाण्ड से जीवनवृत्त प्रारम्भ करके लंकाकाण्ड में समाप्त। कुछ स्थलों पर तुलसी के पद अविकल रख दिये गये हैं। ग्रन्थकार ने बीच-बीच में रामकथा के आधार पर कवित्त, सवैया, दोहा और चौपाई में स्वतंत्र मौलिक रचना की है।

पृष्ठ-संख्या २२ की अधोलिखित पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं :—

"माली मेघमाल व्रनपाल विकराल भट
नीकैं सवकाल सीचैं सुधासार नीरकौं
मेघनाद तें दुलारो प्राणतैं पियारो वाग
अति अनुराग जिय जातुधान धीरकौ
तुलसी सो गान सुन सियकौ दरस पाय
वैठि वाटिका सुजाय वल रघुवीर कौ
विद्यमान देखत दशानन कौ कानन सो
तहांसि नहसि कियो साहसी समीर कौ ३१
किलकि कोपि कपि भये भूमिपाल सिंधु
जायवन वामन में रौररूर पारी है
जामन जंमीरी जाम जावित्री औ जायफल
जीरो जिमि कंद जड पेडतें उखारी है

वेल वेर वहेडे विज्येरेवरख काचन वास
वोलसरी* आधौं आध करडारी है
भोजसिही भोजपत्र भारंगी मरंग माग
नारंगी नारियल अनंत कै उजारी है
कारो रुख कायफल केतकी करौंदा
केरा कठर खरोट कुरु कुरु कचवाए है
दोंना दाख दालचीनी हरेई कदम फल
देवदारु दाडमी सो खाख में मिलाये है
आमली वदाम आम छुहारे सुपारी
सेव खिरनी खिजूर नीवू तोर-तोर खाए हैं
रामन कौ वाग जाकौ वाग जाकौ वडो अनुराग
हनुमान ने उखाड पेड सिंधु में वहाये है ३२"

टिप्पणी : वाल्मीकि-रामायण और रामचरित-मानस की कथा के आधार पर ग्रन्थकार ने रामवृत्त का गद्य-पद्य में, व्रजभाषा में वर्णन किया है। वर्णन-शैली 'कथा'-जैसी है।

वर्णन बड़ा ही रोचक और हृद्य है। कहीं-कहीं उक्त रामायण के श्लोक और पद भी अपने रूप में दिये गये हैं। ग्रन्थकार श्रीगोस्वामी सुन्दरलाल जी संस्कृत और हिन्दी (व्रज) के अच्छे विद्वान् थे। इस सूची में उनके अनेक ग्रन्थों के विवरण आये हैं। उनमें यह ग्रन्थ सबसे बड़ा और मौलिक तथा अद्यावधि अप्रकाशित है। ग्रन्थ के उद्धृतांश से यह स्पष्ट हो जाता है कि छन्द और अलंकार के साथ ही कवि का, भाषा और अनुप्रास पर भी पूरा अधिकार था। ग्रन्थ में यत्र-तत्र अपने दार्शनिक सिद्धान्त की ओर भी ग्रन्थकार ने संकेत किया है। प्रसंगानुसार सिद्धान्त-विरोधियों को भी उपमा के रूप में कटाक्ष का पात्र बनाया है। ग्रन्थ हृद्य और अनुसन्धेय है। रचना स्निग्ध और मनोरम है। ग्रन्थकार ने रचनाकाल के सम्बन्ध में आषाढ़वदी १३, शुक्रवार तो लिखा है, किन्तु संवत् के लिए केवल 'संवत्' लिखकर छोड़ दिया है। किन्तु श्रीचैतन्य पुस्तकालय और मन्दिर के वर्त्तमान अधिष्ठाता श्रीकृष्ण चैतन्य गोस्वामी जी के कथनानुसार इनका रचनाकाल लगभग डेढ़ सौ वर्ष प्राचीन है। ग्रन्थकार इनके प्रपितामह थे।

* वोलसरी = मौलश्री।

हिन्दी-साहित्येतिहास में सन् १६३१ ई० में वर्त्तमान, ग्वालियर-निवासी, शाहजहाँ द्वारा 'महाकविराय' उपाधि से विभूषित, 'सुन्दर शृंगार' के रचयिता सुन्दर कवि का उल्लेख हुआ है। शृंगार-रस, नायिका-भेद एवं नख-शिख पर इनकी यह रचना सन् १८९० ई० में वाराणसी के भारतजीवन प्रेस से प्रकाशित हो चुकी है। काशी नागरी-प्रचारिणी सभा की खोज-रिपोर्टों के अनुसार इनकी दो रचनाएँ—'बारहमासी' और 'ध्रुवलीला'—खोज में मिली हैं।[1] आचार्य रामचन्द्र शुक्ल और रामशंकर शुक्ल ने भी सुन्दर कवि का अपने-अपने इतिहास-ग्रन्थों में उल्लेख किया है।[2] इनकी एक अन्य रचना 'सिंहासन-बत्तीसी' भी उद्धृत हुई है। सन् १६७० ई० में हैदराबाद के सन्त अकबरशाह-लिखित नायिका-भेद विषयक तेलुगु-ग्रन्थ 'शृंगार-मंजरी' में इनकी रचना 'सुन्दर शृंगार' की चर्चा हुई है।[3] इस रचना में शुद्ध व्रजभाषा का प्रयोग हुआ है तथा दोहा और हरिपद छन्द भी प्रयुक्त हैं एवं सवैये का भी भरपूर प्रयोग है। विवरित ग्रन्थकार से ये अभिन्न प्रतीत होते हैं। कवि के सम्बन्ध में पूर्व विवरणों में भी चर्चा हुई है। इनकी रचनाएँ हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग के संग्रहालय में भी सुरक्षित हैं।[4] बिहार रिसर्च सोसाइटी, पटना को भी खोज में ग्रन्थकार की रचनाएँ मिली हैं, जो भागलपुर जिले के परसरमा ग्राम-वासी बाबू चिन्तामणि सिन्हा के संग्रहालय में सुरक्षित है।[5] चैतन्य पुस्तकालय में इनकी अन्य रचनाओं की पाण्डुलिपियाँ सुरक्षित हैं। कहा जाता है (चैतन्य पुस्तकालय के वर्त्तमान मालिक के कथनानुसार), इन्हें अपनी सभी रचनाओं के सभी पद प्रायः कण्ठाग्र थे। इन्होंने अपने ग्रन्थों से और कवित्व से पर्याप्त यश और अर्थ का उपार्जन किया था।

यह पोथी श्रीचैतन्य पुस्तकालय, गायघाट, पटना सिटी में सुरक्षित है। जिल्द ९ में पु०-सं० ६७ है।

---

१. दे०—का० ना० प्र० स०-की खोज-रिपोर्ट—१९०६-०८; ग्रं० सं० २४१ बी० तथा खो० रि० १९२६—२८; ग्रं० सं० ४६९ ए।

२. दे०—हि० सा० का ई०, सन् १९५०ई०, पृ० सं० २२९ तथा रामशंकर शुक्ल-लिखित हि० सा० का० इ०, सन् १९३१ ई०, पृ० सं० ४२४।

३. दे०—हिन्दी-साहित्य-कोश', भाग-२—डॉ० राकेश गुप्त, अध्यक्ष, हिन्दी-विभाग, गवर्नमेण्ट डिग्री कॉलेज, ज्ञानपुर (उ० प्र०), पृ० सं० ५९७।

४. दे०—'पाण्डुलिपियाँ', क्र० सं० १७१; वेष्टन एवं ग्रं० सं० १३०९-१९८३।

५. दे०—प्राचीन हस्तलिखित पोथियों का विवरण', छठा खण्ड; प्रथम संस्करण, सन् १९६४ ई०, पृ० सं ८४, ग्रं० सं० ७२।

१२३. (१७) जन्माष्टमी-राधाष्टमी-बधाई—ग्रन्थकार—श्रीराधालाल गोस्वामी लिपिकार—× । अवस्था–अच्छी, प्राचीन हाथ का बना, देशी कागज, पूर्ण । पृष्ठ-सं०—५० । प्र० पृ० पं० लगभग—२८ । आकार–६" × ८" । रचनाकाल—× । लिपिकाल—× ।

प्रारम्भ—"श्री राधारमणो जयति अथ जन्माष्टमी की वधाई प्रारम्भ श्री नंदराम जू की वंसावलि

रागमारू चौपाई

श्री चैतन्य चरन सिरनाऊँ
व्रजपति वंशावलि सुनाऊँ
जो वरनी श्रीरूप गुसांई
सो पुनि हित वृंदावनि गाई
ताहू ते संक्षेप करी अब
कारण यह आलस युत जन सब
यादव कुल में परम प्रधान
देव मीठ जू सब गुन खान
तिनकी रानी द्वै सुखदानी
प्रथमा क्षत्री कन्या मानी
दूजी वैश्य जानी की कन्या
श्री हरिभजन परायण धन्या
पहेली के सुत सूरसेन हैं
तिनके श्री वासुदेव सुवन हैं
दूजी के परजन्य सुहाये
परम पुनीत पुराणन गाये
मेघ समान दया संनमान
वरषत सकल प्रजा परदान
गुण लच्छन परजन्य समानो
पत्नी तासु बरेसी जानो"

मध्य की पंक्तियाँ (पृष्ठ-सं० २५) :

"जो माग्यौ सो दियो नंदजू वहुत भाति सनमान्यौ ॥
और बहुत व्रजपति धनदीन्यौ बड़े ठौर को जान्यौ ॥११॥
देत असीस वरी सजुगन जुग चिरजीवो सुततेरो ॥
अग्रदास नंदलाल जगतपति रघुनंदन पति मेरौ ॥१२॥"

अन्त : राग हमीर

"ममारखवादियाँ वे नित होवे अैसी सादियाँ वे ॥
गाँदी वजाँदी और रिझाँदी महलादी सुधर-सुधर साहे वजादियाँवें ॥१॥
गोवरधन वृजरानि प्रघटियाँ रसिक नमन अहलदियाँ वे ॥२॥"

विषय—(१) पृष्ठ-सं० १ से ३१ तक—जन्माष्टमी की बधाई (नन्दोत्सव) में श्रीअग्रदास, श्रीहितहरिवंश, श्रीछीत स्वामी, श्रीसूरदास आदि विभिन्न व्रजभाषा-कवियों की रचनाओं का संग्रह तथा विभिन्न रागों में स्वरचित पदों का समावेश। (२) पृष्ठ-सं० ३२ से ३६ तक ठाढ़ी (कौतुक) के पदों में जन्मोत्सव के बाद विविध परिधानों में आये कौतुक-नर्त्तकों के नृत्य तथा गान आदि का मनोहारी वर्णन (सम्भवत: श्रीराधालाल गोस्वामी जी की स्वकीय रचना)। (३) पृष्ठ-सं० ३७ से ५० तक—श्रीराधिका जी की बधाई के पद में श्री वृषभानजी की वंशावली और विभिन्न पदों में श्रीकृष्ण-जन्म-वर्णन के साथ-साथ राधिका-जन्मोत्सव-वर्णन। मागध, वन्दीजन आदि के गान और गोपियों में उल्लास का विशद वर्णन।

टिप्पणी : यह ग्रन्थ श्रीराधालाल गोस्वामी जी द्वारा सम्पादित है। इसमें श्री सूरदास श्रीहितहरिवंश, श्रीगिरधर दास, श्रीअग्रदास और श्रीगुण-मंजरी जी प्रभृति अनेक कवियों, सन्तों की रचनाओं के साथ-साथ श्रीगोस्वामी जी ने अपने पद भी दिये हैं। विभिन्न रागों और छन्दों में रचित पदों का विशेष रूप से निर्देश भी किया गया है। ग्रन्थ में यत्र-तत्र अनेक भाषाओं और बोलियों में रचित रचना का समावेश है। प्रतीत होता है, इसमें व्रजभाषा के अतिरिक्त राजस्थानी और पंजाबी भाषा के कवियों की भी रचनाएँ संगृहीत हुई हैं। संग्रह के दृष्टिकोण से ग्रन्थ का महत्त्व है। इसमें लिखित पद सम्भवतः अप्रकाशित और अप्रचलित हैं।

यह ग्रन्थ श्रीचैतन्य पुस्तकालय, गायघाट, पटना सिटी में सुरक्षित है। पुस्तकालय में ग्रं०-सं० ४४१—१७४२ है।

१२४ (१८). **अनेकार्थमंजरी**—ग्रन्थकार—श्रीनन्ददास जी। लिपिकार—×। अवस्था—जीर्ण-शीर्ण, हाथ का बना, मोटा, पुराना देशी कागज। पृष्ठ-सं०—१२। प्र० पृ० पं० लगभग—२०। आकार—४½" × ६"। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—मार्गशीर्ष, कृष्ण १४, बुधवार, संवत् १८५८ वि०, सन् १८०१ ई०।

प्रारम्भ—"ॐ श्री गणेशाय नमः ॥ अथ अनेकार्थ मंजरी लिख्यते
सु प्रभु जोतिमय जगत भय कारन करन अभेद
विघन हरन सव सुषकरन नमो नमों ता देव १

एकें व ....अनेक ह्वै जगमगाति जगधाम
ज्यौं कंचनतें किंकिनी किंकिन कुंडल नाम २
उोच्चरि सत्क ....संस्कृत अरु समकरन असमर्थ
तिनहित नंद सुमत यथा भाषा अनेक अर्थ ३

गोनाम।

गो इन्द्रीय विव × × कजल स्वर्ग वज्र पग छंद
..............गोतर गो किरन गोपालक गोविंद ४"

मध्य की पंक्तियाँ (पृष्ठ-सं० ६) :

वुधनाम

"वुध पंडित कौ कहत कवि वुधससि सुत्रन वषान
वुध हरि को अवतार इक वौध भयो जिहि ग्यान ६०

अनंत नाम

गगन अनँत जु कहत कवि व..............रि अनंत
अनेक सेस अनंत है अनंत हैं हरि अनंत अस एक ६१

छय नाम

छय विनास को कहत कवि छय कहिये छय रोग
छय परि................हरि वचै लीन होत सवलोक ६२"

अन्त :

रस नाम

"नवरस-नवरस औ संधनरस इमत विष नीर
सव रस कौ रस प्रेम रस जाके वस वलवोर ११७
सनेह हेत सनेह.....प्रेम सनेह .....निजचरनि
गिरधर सरन नन्ददास रति नवेह ११८
यह अनेकार्थ मेजरी पठै सुनै नर कोई
ताहि अनेक जु अरथ पुनि अरु प्ररमारथ होई ११९
इति अनेकार्थ मंजरी नन्ददास कृत सम्पूर्ण मिति मार्गसिर वदी १४
बुधवासरे संवत् १८५८"

विषय—कोष-साहित्य। अनेकार्थ शब्दों का संग्रह।

टिप्पणी : ग्रन्थ जीर्ण-शीर्ण है। इसी जिल्द में तीन और लघुकाय ग्रन्थ हैं। इस ग्रन्थ में अन्य प्राप्त 'अनेकार्थ मंजरी' की प्रतियों से पाठान्तर प्रतीत होता है। ग्रन्थ की लिपि स्पष्ट, सुन्दर और प्राचीन है। लिपिकार का नाम ग्रन्थ में नहीं दिया हुआ है। बीच-बीच में अक्षरों के फट जाने के कारण भी पाठ में कठिनाई होती है। सम्पूर्ण ग्रन्थ ११९ पृष्ठों में समाप्त है।

यह ग्रन्थ श्रीचैतन्य पुस्तकालय, गायघाट, पटना सिटी में सुरक्षित है। पुस्तकालय में ग्रन्थ-सं० ७४८—२६७७ है।

१२५ (१९). श्री नागरीदासजी-कृत दोहा—ग्रन्थकार—श्रीनागरीदास जी। लिपिकार — ×। अवस्था—प्राचीन, जीर्ण-शीर्ण, हाथ का बना, देशी कागज, खण्डित। पृष्ठ-सं०—३। प्र० पृ० पं० लगभग—२०। आकार—४½" × ६"। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"अथ श्री नागरीदास जी के दोहा ॥

चरन कमल रज सेइ हौ
मन वच क्रम यह आस ॥
अपनौ सर्वस जानि कै
बलि जाइ नागरीदास ॥१॥
लै करुवो को पीन कामरी
कुंज निकुंज निकूल विलास ॥
तव मिलि है मित्र मन मुदित
विहारी विहारनिदास खवास ॥२॥
अति निरपेक्ष संग संग्रह
अनन्य आनि गति नाहि ॥
श्री विहारिनदासि उपासि
सुख संग पैठि महल मन माहि ॥३॥
नित्य बिहार सार सबकौ
अति दुर्लभ अगम अपार ॥
अनन्य धर्म संधि सम·········
विनु भाया कठिन किवार ॥४॥
यह उपदेश उपाई श्री विहारीदास
कृपा तै जानै ॥
नित्य सिद्ध विनु नागरीदासि कहा
कोऊ पहिचानै ॥५॥"

मध्य की पंक्तियाँ (पृ०-सं० २):

"कुंज पुलिन कौतुक घनौ
मिलि खेलत रसरासि
श्री विहारी विहारनि दासि
संग सुष निरखि नागरीदासि १८
श्री विपुल विहारन दासि तै
अव छिन छिन मन आनन्द
यौ निरषत नागरीदासि
नित्य·······················मकरंद १९"

अंतः "मोहन हितस्यामा कौ जनम कहा जानौ जू
आनन्द निधि मृदुता की अवधि वताइ है
जुवजो पिय प्यारी तिम जूथ कहा जोत भयौ
हित ह्वै राजत हैं गोप यह सुभाई है
भूषन गगन वाजे वरसह चरि ही चारन हैं
हरि चीर देही द्वै सव सुषदाई हैं
वेद की जू वेदन है विदित वषानी सो
विप्रन वर रसिकनि में सरस सुनाई है"

विषय—श्रीकृष्ण-जीवन-सम्बन्धी पद। गोपियों के साथ विहार, क्रीडा और कौतुक का वर्णन। साथ-साथ आध्यात्मिक विचारधारा का पुट भी। काम, क्रोध, राग, द्वेष आदि के परिणाम और उनके परित्याग का फल।

टिप्पणी : इस लघुकाय ग्रन्थ में श्रीनागरीदास जी के कुछ पदों का संग्रह-मात्र है। प्रतीत होता है, नागरीदास से सम्बन्धित कोई विहारीदास और श्रीअनन्य नाम के कवि अथवा गुरु थे। इन नामों को कवि ने अपने अधिकांश पदों में स्मरण किया है। ग्रन्थ की लिपि स्पष्ट, किन्तु प्राचीन है। ग्रन्थ खण्डित है।

यह ग्रन्थ श्रीचैतन्य पुस्तकालय, गायघाट, पटना सिटी में सुरक्षित है। पुस्तकालय में ग्रन्थ-संख्या—७४८–२६७७ है।

१२६(२०) फुटकर वाणी—ग्रन्थकार—हितहरिवंश। लिपिकार—×। अवस्था—जीर्ण-शीर्ण, प्राचीन, देशी कागज, खण्डित। पृष्ठ-संख्या—९। प्र० पृ० पं० लगभग—२०। आकार—$4\frac{1}{2}'' \times 6''$। लिपि—नागरी। रचना-काल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"श्री राधावल्लभो जयति। अथ श्रीहितजी की फुटकर वांनी लिष्यते।

॥ सवैया ॥

द्वादसु चंद कृत स्थल मंगल वुद्ध विरुद्ध सुरगुरु वंक॥
जद्दि पदसम भवन भृगु सुत मंद सुकेत जनंम के अंक॥
अष्टम राह चतुर्थ दिन मन तौ हरिवंश करत न सेक॥
जो पै कृस्न चरन अर्पित तन मन तो करि है कहा नवग्रहरंक॥१॥

आनंद संमजनंम निसापति संगल बुद्ध शिवस्थल लीके ॥
जौ गुरु होइ धरंम भवन के तौ भृगुनंद सुमंदप वीके ॥
तीसरौ केतु समेत विधु ग्रसतौ हरिवंश मन क्रम फीके ॥
जौपै छाडि गोविद भ्रमत दसौ दिस तौ करि है कहानव ग्रह नीके ॥२॥

छप्पै ॥

न जानौ छिन अंत कवन बुधि घटहि प्रकासित ॥
छुटि चेतन जु अचेत तऊ मुनि भए विषवासित ॥
पारासर सुरइंदु कल पकामिनि मनकंधा ॥
पखि देह दुखद्वंद सुकोन····· म काल निकंधा ॥
इह उरहि डरपि हरिवंशहित जिनिब भ्रमहिगुन सलिलपर ॥
जिह नामनि मंगल लोक तिहुसुहरि पद भजन विलब करि ॥३॥"

मध्य की पंक्तियाँ (पृष्ठ-सं० ५) : राग सारग

"वृषभानु नंदनी राजति है ॥
सुरतरंग रसभोर भामिनी सकल नारि सिरगाजति है ॥
इत उत चलत परत दोऊ पग मद गयंद गति लाजत है ॥
अधर निरंग रंगगंडन पर कटक काम कौ साजत है।
उर पर लटक रही लटकीरी कटिव किंकनी वाजति है ॥
जै श्रीहित हरिवंश पलटि प्रीतम पटजुवति जुगत सब छाजति है ॥६॥"

अन्त : राग मलार ॥

दोऊजन भीजत अटके वातन ॥
सघन कुंज के द्वारै ठाढ़ै अंवरल पठँगातन ॥
ललिता ललित रूपरस भीजी बूद वचावत पातनि ॥
जै श्रीहितहरिवंश परस्पर प्रीतम मिलवत रतिरस धातनि ॥१४॥

विषय—श्रीकृष्णलीला-सम्बन्धी मुक्तक रचना, विशेषतः गोपियों के साथ विहार, यमुना-तट पर वेणुवादन-वर्णन, राधासौन्दर्य-वर्णन और विभिन्न पक्षियों द्वारा सन्देश-कथोपकथन आदि।

टिप्पणी : क—हितहरिवंशजी-रचित 'हित चौरासी' के अतिरिक्त वाणियों का 'फुटकर वानी' नाम से संग्रह। कवि ने इसमें श्रीकृष्ण और श्रीराधा की केलि का वर्णन तथा उनके रूप-सौन्दर्य की प्रशंसा कवित्वमयी भाषा में की है। रस और छन्दोविधान पर कवि का पूर्ण अधिकार है।

ख—इस ग्रन्थ के लिपिकार ने ग्रन्थ के अन्त में श्रीहितहरिवंशजी-कृत संस्कृत के ४ श्लोक भी दिये हैं। ग्रन्थ की लिपि स्पष्ट, सुन्दर, किन्तु प्राचीन है। ग्रन्थ-संख्या १८, १९ और २० एक ही जिल्द

में हैं। यह ग्रन्थ श्रीचैतन्य पुस्तकालय, गायघाट, पटना सिटी में सुरक्षित है। पुस्तकालय-ग्रन्थ-सं० ७४८—२६७७ है।

१२७ (२१). **कवित्तरामायण :** श्री गो० तुलसीदास। लिपिकार—श्रीजीवनाथ पाण्डे शर्मा। अवस्था—अच्छी, प्राचीन; हाथ का बना, मोटा, देशी कागज; सम्पूर्ण। पृष्ठ—९६। प्र० पृ० पं० लगभग—२८। आकार—५" × ६½"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—अग्रहायण, कृष्ण-द्वादशी, शनिवार, सं० १८९४ वि०, १७५९ शाके।

प्रारम्भ : "श्री गणेशायनमः॥ अथ तुलशीदास विरंचिते कवितरामायन लिख्यते॥

॥ सवैया॥

"अवधेश के द्वार सकार गई सुत गोद कै भूपति लै निकसे॥
अवलोकि हौं सोच विमोचन को ठकि सी रहि जो न ठकै धिक से॥
तुलसी मनरंजन रंजित अंजन नयन सुखंजन जातक से॥
सजनी शशिमे समशील उभय नव नील सरोरुह से विकसे॥१
पग नूपुर औ पहुँची कर कंजन मंजु वनी मणिमालहिये॥
नव नीलकलेवर पीतझगा झलकै पुलकै नृपगोद लिए॥
अरविंदसे आननरूप मरंद अनन्दित लोचन भृंग पिये॥
मनमे न वसे अस वालक जौं तुलसी जगमेफल कवन जिये॥ २"

मध्य की पंक्तियाँ (पृष्ठ सं०-४८) :

"शोक समुद्र निते तब काठिक पीश किया जग जानत जैसे॥
नीच निशाचर वैरिकबंधु विभीषणकीन्ह पुरंदर सैसो॥
नाम लिये अपनाई लिये तुलसी सो कहै जग कौन अनैसो॥
आरत आरति भंजन राम गरीब नेवाज न दूसर ऐसो॥४"

अन्त : "देत संपदा समेत श्रीनिकेत याचकनी
भवन विभूति भंग वृषभावहनु है॥
नामवामदेव दाहिनो सदा असंगसंग
अरधंगना अनंग को महनु है॥
तुलशी महेश को प्रभाव भावहु सुगम
अगमनिगम हूको जोनि वोगहनु है॥
कहा कहै कविमुख शारदा लजानी जात
गात श्वेतचंद्र जातरूप को लहनु है॥
चाहे न अनंग अरि एको अंग अँगनेको दियो
उपै जानि यै सुभावसिद्धि वणीसो॥

करि बुंदवारि त्रिपुरारी परडारी येतौ
देत फल चारि लेत सेवा सांची मानि सो ॥
तुलसी भरोसो नभ वेश भोरा नाथ को तौ
कोटिक लेश करौ भरौ छार सानिसो ॥
दारिद दवन दुख दोष दाहकश मनसो
लोक तिहु नाही इजोर मंनभावनीसो ॥ ३७ ॥

दोहा ॥

राम वाम दिशि जानकी लषण दाहिने ओर
ध्यान सकल कल्याणमय सुरतरु तुलशी तोर ॥

इति उत्तरकाण्डः संपूर्णः
इति श्री गोसाईं तुलशीदास विरंचित ।
श्री कवितरामायणँ सम्पूर्णम् ॥"

विषय—कवित्त में श्रीरामचन्द्र का चरित । बाल्यावस्था से युद्धकाण्ड तक की विशेष घटनाओं के आधार पर रचना ।

टिप्पणी : यह ग्रन्थ गोस्वामी तुलसीदासजी का प्रसिद्ध ग्रन्थ है। ग्रन्थ सम्पूर्ण है । ग्रन्थ की लिपि अस्पष्ट और प्राचीन है । लिपिकार ने यत्र-तत्र 'ख' के लिए 'ष' का प्रयोग किया है और 'ज' के लिए 'य' के नीचे बिन्दु देकर (य़) प्रयोग किया है। यह ग्रन्थ श्रीचैतन्य पुस्तकालय, गायघाट, पटना सिटी में सुरक्षित है। पुस्तकालय-ग्रन्थ-सं० ४५०—१७७४ है।

परिशिष्ट

★ अज्ञात रचनाकारों की कृतियाँ

★★ ग्रन्थों की अनुक्रमणिका : ग्रन्थकारों की अनुक्रमणिका

★★★ महत्त्वपूर्ण हस्तलेखों के समय

प्रथम परिशिष्ट

अज्ञात रचनाकारों की कृतियाँ

क्रम-संख्या	ग्रन्थों के नाम	विषय	रचना-काल	लिपिकाल	विशेष
१	काल-यवन-कथा	जीवन-चरित्र			
२	जानकी-स्वयंवर	रामचन्द्र-जीवन-सम्बन्धी-रचना ।			
३	दृष्टान्त-प्रबोधिका	विविध कथा पर आधृत ।			
४	निषेद-बोधिका	विविध विषयों के लक्षण और नाम ।			
५	बलभद्र-जन्म-चम्पू	बलदेव-जीवन-चरित्र ।			
६	मधुपुरी-वर्णनम्	मथुरा-वर्णन ।		सं० १९४९ वि०	
७	रुक्मिणी-स्वयंवर	भागवत महापुराणांश			
८	वैराग्य-प्रकरण	आध्यात्मिक विषयों का दार्शनिक विवेचन		सं० १९१९ वि०	
९	सीताराम-रस-तरंगिणी	गद्य में सीता और राम की दिनचर्या ।			
१०	संक्षिप्त दोहावली रामायण	रामचन्द्र-जीवन-चरित्र ।		सं० १९४६ वि०	
११	सुदामा-चरित्र	सुदामा द्वारा भगवत्-स्तुति ।			
१२	शतपंच चौपाई	रामचन्द्र-बाल-लीला-वर्णन ।			
१३	शंकावली	रामचरित-मानस-शंकाओं का निराकरणात्मक उत्तर ।			

द्वितीय परिशिष्ट

ग्रन्थों की अनुक्रमणिका

[ग्रन्थों के सामने की संख्याएँ विवरणिका में दी गई क्रम-संख्याएँ हैं]

ग्रन्थकारों की अनुक्रमणिका

[ग्रन्थकारों के सामने की संख्याएँ विवरणिका में दी गई ग्रन्थ-संख्या की क्रम-संख्याएँ हैं]

तृतीय परिशिष्ट

महत्त्वपूर्ण हस्तलेखों के समय एवं अन्य प्रकाशित खोज-विवरणिकाओं में उनके उल्लेख का विवरण और उनका लिपिकाल

क्र०सं०	ग्रन्थकार	हस्तलेखों के नाम	प्राप्त ग्रन्थों के उल्लेख तथा उनका विवरण और लिपिकाल	विशेष
१	केशवदास	१. कविप्रिया	ना० प्र० स० (काशी) खो० वि० १९०० सं० ५२, १९०२ सं० १८३, १९०४, सं० १२५, १२६। (लि० का०—१७६९ वि०), खो० वि० १७९, सं० ९६ ए०, खो० वि०—१९२०–२२ सं० ८२ ए० बी०, खो० वि०—१९२३–२५ सं० २०७, खो० वि०—१९२६–२८ सं० २३३ बी० सी० डी०। वि० रा० भा० प०, पट० ह० लि० ग्रं० वि० (द्वितीय खं०) ग्रं० सं० १०, ११,	
		२. रसिकप्रिया	ना० प्र० स० (काशी) खो० वि० १९०३ सं० ८९। (लि० का०—१८१४ वि०), खो० वि० १९०४ सं० १२८, खो० वि० १९१७–१९ सं० ९६ बी०। (लि० का०—सं० १७१७ वि०), खो० वि० १९२०–२२ सं० ८९ बी०, खो० वि० १९२३–२५ सं० २०७, खो० वि० १९२६–२८ सं० २३३ एफ० जी०। बि० रा० भा० प०, पट० ह० लि० ग्रं० विव० (द्वितीय खं०) ग्रं० सं० ५६, ५७।	
		३. रामचन्द्रिका	(लि० का०—सं० १८२५ वि०) ना० प्र० स०, काशी खो० वि० १९०२ सं० २५२। (लि० का०—सं० १६३१ वि०), खो० वि० १६०३ सं० २१,	

क्रम सं०	ग्रन्थकार	हस्तलेखों के नाम	प्राप्त ग्रन्थों के उल्लेख तथा उनका विवरण और लिपिकाल	विशेष
			खो० वि० १९२३–२५ सं० २०७, खो० वि० १९२६–२८ सं० २३३ ई०। ह० लि० ग्रं० वि० (वि० रा० भा० प०, पट०, द्वितीय खं०) ग्रं० सं० ५८, ५९ और ३८।	
२	गिरधरदास	१. कुण्डलिया	ना० प्र० स० (काशी) (लि० का०—सं० १७७० वि०); खो०वि०-१९०६–८ सं० १०७। खो० वि० खं० २ (बि० रा० भा० प०, पट०) ग्रं० सं० १४।	
३	तुलसीदास (गोस्वामी)	१. कवित्त-रामायण (कवितावली)	(लि० का०—सं० १९९९ वि०), ना० प्र० स० (काशी) खो० वि० १९०३ सं० १२५। (लि० का०—सं० १८५९ वि०), खो० वि० १९२०–२२ सं० १९८ एफ०, खो० वि० १९२३–२५ सं० ४३२, खो० वि० १९२६–२८ सं० ४८२ ई० एफ०। खो० वि० (र० का० सं० १९१९ वि०) वि० रा० भा० प०, पट०, ग्रं० सं० १३, १२७।	
		२. गीतावली रामायन	(लि० का०—सं० १८०२ वि०), ना० प्र० स० (काशी) खो० वि० १९०४ ग्रं० सं० ६०। (लि० का०—सं० १८९७ वि०), खो० वि० १९०९–११ सं० ३२३ जी०, खो०वि० १९१७–१९ सं० १९६ सी०; (लि० का०—सं० १८२४ वि०), खो० वि० १९२०–२२ सं० १९८ एच०, खो० वि० १९२३–२५ सं० ४३२, खो०वि० १९२६–२८ सं०४८२ आर० एस०। बि० रा० भा० प०, पट०, खो० वि०(द्वितीय खण्ड) (र० का० १९१० वि०) ग्रं० सं० १७, ८७। (लि० का०—१८८३ वि०) ग्रं० सं० ३४।	

क्रम सं०	ग्रन्थकार	हस्तलेखों के नाम	प्राप्त ग्रन्थों के उल्लेख तथा उनका विवरण और लिपिकाल	विशेष
३	तुलसीदास	३. छप्पय रामायण	(लि० का०—सं० १८७१ वि०) ना० प्र० स० (काशी) खो० वि० १९०६–८ सं० २४५ एच। खो० वि० (खण्ड २) (बि० रा० भा० प०, पट०) ग्रं० सं० १९, २०।	
		४. बरवै रामायण	(लि० का०—सं० १८१६ वि०) ना० प्र० स० (काशी) खो० वि० १९०३ सं० ८०।	
			(लि० का०—१८९० वि०) खो० वि० १९०९ सं० २४५ ए०, खो० वि० १९१७–१९ सं० १९६ बी०। बि० रा० भा० प०, पट०, खो० वि० (खण्ड २) ग्रं० सं० ३६, ३७, ३८।	
		५. दोहावली	ना० प्र० स० (काशी) खो० वि० १९०४ सं० ६२, (लि० का०—१८४४ वि०) खो० वि० १९०६–८ सं० २४५ सी०, (लि० का०—१८३९ वि०) खो० वि० १९०९–११ सं० ३२३ बी०, खो० वि० १९२०–२२ सं० १९८ बी० सी०, खो० वि० १९२३–२५ सं० ४३२, खो० वि० १९२६–२८ सं० ४८२ ओ० पी० क्यू०। बि० रा० भा० प०, पट०, खो० वि० (खण्ड २) ग्रं० सं० ४४।	
		६. विनयपत्रिका	(लि० का०—१८२७ वि०) ना० प्र० स० (काशी) खो० वि० १९०६-८ सं० २४५ जी०। (लि० का०—१८२२ वि०) खो० वि० १९०९–११ सं० ३२३ एल०, खो० वि० १९१७–१९ सं० १९६ एफ०, खो० वि० १९२०–२२ सं० १९८ के०, खो० वि० १९२३–२५ सं० ३३२, खो० वि० १९२६-२८ सं० ४८२ ए०[२] बी०[२] सी०[२]।	

क्रम सं०	ग्रन्थकार	हस्तलेखों के नाम	प्राप्त ग्रन्थों के उल्लेख तथा उनका विवरण	विशेष
३	तुलसीदास		बि० रा० भा० प०, पट०, खो० वि० (खण्ड २) (लि० का० १८९८ वि०) ग्रं० सं० ६२, ६३, ६४, ६५, ८४।	
		७. वैराग्यसंदीपनी	ना० प्र० स० (काशी) खो० वि० १९०० सं० ७, खो० वि० १९०३ सं० ८१। (लि० का०—१८२९ वि०) खो० वि० १९०६–८ सं० २४५ ई०। (लि० का०—१८०० वि०) खो० वि० १९०९–११ सं० ३२३, खो० वि० १९१७–१९ सं० १९६ डी०, खो० वि० १९२०–२२ सं० १९८ जे०, खो० वि० १९२६–२८ सं० ४८२ डी०। बि० रा० भा० प०, पट०, खो० वि० (खण्ड २) लि० का० १९१९ वि०, ग्रं० सं० ६६।	
		८. रामसगुनमाला	(लि० का०—१७६५ वि०) ना० प्र० स० (काशी) खो० वि० १९०३ सं० ८७, ९८; खो० वि० १९०६–८ सं० २४५ डी०। (लि० का०—१८२४ वि०) खो० वि० १९०९–११ सं० २३२ एच०, खो० वि० १९२३–२५ सं० ४३२, खो० वि० १९२६–२८ सं० ४०४, ४८२ एल० एम० एन० ओ० पी० क्यू०। बि० रा० भा० प०, पट०, खो० वि० (खण्ड २) १९११, ग्रं० सं० ९२।	
		९. तुलसी सतसई (राम सत्सई)	(लि० का०—१९०१ वि०) ना० प्र० स० (काशी) खो० वि० १९०६–८, सं० २४५ सी०। (लि० का०—१९१५ वि०) प्रा० ह० लि० पो० वि० (बि० रा० भा० प०, पट०) खण्ड २, ग्र० सं० २२। (लि० का०—१९७४ वि०) प्रा० ह० लि० पो० वि० (बि० रा० भा० प०, पट०) खण्ड २, ग्रं० सं० ५३।	